THE FREE INDOLOGICAL COLLECTION

WWW.SANSKRITDOCUMENTS.ORG/TFIC

FAIR USE DECLARATION

This book is sourced from another online repository and provided to you at this site under the TFIC collection. It is provided under commonly held Fair Use guidelines for individual educational or research use. We believe that the book is in the public domain and public dissemination was the intent of the original repository. We applaud and support their work wholeheartedly and only provide this version of this book at this site to make it available to even more readers. We believe that cataloging plays a big part in finding valuable books and try to facilitate that, through our TFIC group efforts. In some cases, the original sources are no longer online or are very hard to access, or marked up in or provided in Indian languages, rather than the more widely used English language. TFIC tries to address these needs too. Our intent is to aid all these repositories and digitization projects and is in no way to undercut them. For more information about our mission and our fair use guidelines, please visit our website.

Note that we provide this book and others because, to the best of our knowledge, they are in the public domain, in our jurisdiction. However, before downloading and using it, you must verify that it is legal for you, in your jurisdiction, to access and use this copy of the book. Please do not download this book in error. We may not be held responsible for any copyright or other legal violations. Placing this notice in the front of every book, serves to both alert you, and to relieve us of any responsibility.

If you are the intellectual property owner of this or any other book in our collection, please email us, if you have any objections to how we present or provide this book here, or to our providing this book at all. We shall work with you immediately.

-The TFIC Team.

श्री

सम्यक्त्वशल्योद्धार

कर्त्ता-

तपगच्छाचार्य श्री १००८ श्रीमद्विजयानन्दसूरि

(श्री आत्मारामजी) महाराज ॥

गुजरातीसे हिंदुस्तानीमें

प्रसिद्ध कर्त्ता

श्रीआत्मानन्द जैन सभा पंजाब।

श्रीवीर संवत् २४२९ ॥ आत्मसंवत् ७

विक्रमसंवत् १९६० ॥ सन् १९०३

लाहौर

पन्जाब एकानोमीकल यन्त्रालयमें प्रिंटर लाला लालमणि

जैनीके प्रबन्धसे छपवाया।

ॐ

❀ उपोद्घात ❀

नित्यानंदपदप्रयाणसरणी श्रेयोविनिः सारिणी।
संसारार्णवतारणैकतरणी विश्वर्द्धिविस्तारिणी॥
पुण्यांकूरभरप्ररोहधरणी व्यामोहसंहारिणी।
प्रीत्यैस्ताज्जिनतेऽखिलार्त्तिहरणी मूर्त्तिर्मनोहारिणा॥ १॥

अनंत ज्ञानदर्शनमय श्रीसिद्ध परमात्मा को तथा चार क्षेपायुक्त श्रीअरिहंत भगवंतको और शाश्वती अशाश्वती असंख्य नप्रतिमाको त्रिकरण शुद्धिसे नमस्कार करके इस ग्रंथके प्रारंभ मालूम किया जाता है कि प्रथम प्रश्नोत्तरमें लिखे मूजिब ढूंढक र अढ़ाईसौ वर्ष से निकला है जिसमें अद्यापि पर्यंत कोई भी यक्ज्ञानवान् साधु अथवा श्रावक होया होवे ऐसे मालूम नहीं ता है, कहांसे होवे? जैनशास्त्रसे विरुद्ध मतमें सम्यक्ज्ञान नेका संभवही नहींहै, उत्पत्ति समयमें इस मतकी कदापि कितनेक तक अच्छी स्थिति चली हो तो आश्चर्य्य नहीं परंतु जैसे इंद्र लकी वस्तु घनेकाल तक नहीं रहती है तैसे इस कल्पित मतका . वर्षसे दिन प्रतिदिन क्षय होता देखनेमें आता है, क्योंकि ज्ञानपनसे इस मतमें साधु अथवा श्रावक बने हुए घने प्राणी जैन शास्त्रके सच्चे रहस्यके ज्ञाता होते हैं तो जैसे सर्प कुंजको चला जाताहै ऐसेइस मतको त्याग देते हैं और जैनमत जो छमें शुद्धरीति देशकालानुसार प्रवर्त्तताहै उसको अंगीकार

करतेहैं, इसी प्रकार इस ग्रंथके कर्त्ता महामुनिराज १००८ श्री मद्विजयानंदसूरि(आत्मारामजी)महाराजभी जैनसिद्धांतको वांचकर ढूंढकमतको असत्य जानकर कितनेही साधुओंके साथ ढूंढकपंथको त्यागकर पूर्वोक्त शुद्ध जैनमतके अनुयायी बने, जिनके सदुपदेश से पंजाब मारवाड़ गुजरात आदि देशों में घने ढूंढियोंने ढूंढक मत को छोड़कर तपागच्छ शुद्ध जैनमत अंगीकार किया है ॥

तपागच्छ यह बनावटी नाम नहीं है परंतु गुणनिष्पन्न है क्योंकि श्रीसुधर्मास्वामीसे परंपरागत जैनमतके जो ६नाम पडे, हैं उनमेंसे यह ६ छठा नामहै जिन ६ नामोंकी सविस्तर हकीकत तपागच्छकी पट्टावलिमें है * जिससे मालूम होता है कि तपागच्छ नाम मूलशुद्ध परंपरागत है और ढूंढकमत विनागुरुके निकला हुआ परंपरा से विरुद्ध है ॥

इस ढूंढक मतमें जेठमल नामा एक रिख साधु हुआ है उसने महा कुमतिके प्रभावसे तथागाढ मिथ्यात्वके उदयसे स्वपर को अर्थात् रचनेवाले और उसपर श्रद्धा करनेवाले दोनोंको भव समुद्रमें डबोनेवाला समकितसार (शल्य) नामा ग्रंथ १८६५ में बनाया था परंतु वोहग्रंथ और ग्रंथका कर्त्ता दोनोंही अप्रमाणक होनेसे कितनेक वर्षतक वोह ग्रंथ जैसाका तैसाही पड़ा रहा, संवत् १९३८ में गोंडल (काठियावाड़) निवासी कोठारी नेमचंद हरीचंदने अपनी दुर्गतिकी प्राप्तिमें अन्यको साथी बनानेके वास्ते राजकोट (काठियावाड़) में छपाकर प्रसिद्ध किया ॥

पूर्वोक्त ग्रंथको देखकर शुद्ध जैनमताभिलाषी भव्यजीवोंके उद्धारके निमित्त पूर्वोक्त ग्रंथके खंडन रूप सम्यक्त्वशल्योद्धार

---

* देखो जैन तत्त्वादर्शका बारवां परिच्छेद।

नामा यह ग्रन्थ श्रीतपगच्छाचार्य श्री १००८ श्रीमद्विजयानंदसूरि प्रसिद्ध नाम आत्माराम जी महाराजने संवत् १९४० में बनाया जिसको संवत् १९४१ में भावनगर (काठियावाड़) की श्रीजैनधर्म प्रसारक सभाने अहमदावादमें गुजराती बोलीमें और गुजराती ही अक्षरोंमें छपवाकर प्रसिद्ध किया, परंतु पंजाब मारवाड़ादि अन्य देशोंमें उसका प्रचार न होनेसे बडौदास्टेटनिवासी परमधर्मी शेठ गोकल भाईने प्रयास लेकर शास्त्री अक्षरोंमें संवत् १९४३में छपाकर जैसाका वैसाही प्रसिद्ध किया, तथापि बोलीका फरक होनेसे अन्य देशोंके प्रेमी भाइयोंको यथायोग्य लाभ नहीं मिला इसवास्ते शेठ गोकलभाईकी खास प्रेरणासे श्रीआत्मानंद जैनसभा पंजाबकी आज्ञानुसार अपने प्रेमी शुद्धजैनमताभिलाषी भाइयोंके लिये यथाशक्ति यथामति इस ग्रंथको सरल भाषामें छपवानेका साहस उठाया है, और इससे निश्चय होता है कि आप लोग इस ग्रंथको संपूर्ण पढ़कर मेरे उत्साहकी वृद्धि जरूर ही करेंगे ॥

यद्यपि पूर्वे बहुत बुद्धिमान आचार्योंने इस ढूंढकमतका सविस्तर खंडन पृथक् २ ग्रंथोंमें लिखा है । श्रीसम्यक्त्वपरीक्षा नामक ग्रंथ अनुमान दशहजार श्लोक प्रमाण है उसमें ढूंढकमती की बनाई ५८ बोलकी हुंडीका सविस्तर उत्तर दिया है । श्रीप्रचन-परीक्षा नामा ग्रंथ अनुमान वीस हजार श्लोक है उसमें ढूंढकमत की उत्पत्ति सहित उनके किये प्रश्नोंके उत्तर दिये हैं । श्रीमद् यशोविजयोपाध्यायजीने लींबड़ी (काठीयावाड़) निवासी मेघजी दोसी जो ढूंढिये थे उनके प्रतिबोध निमित्त श्रीवीरस्तुतिरूप हुंडीस्तवन बनाया है । जिसका बालावबोध सूत्रपाठ सहित सविस्तर पंडित शिरोमणि श्रीपद्मविजयजी महाराजने बनाया है । जिसकी श्लोक

संख्या अनुमान तीन हजार है उसमें भी संपूर्ण प्रकार ढूंढकमत का ही खंडन है। ढूंढकमतखंडननाटक "इस नामका ग्रंथ गुजराती में छपा प्रसिद्ध है जिसमेंभी ३२ सूत्रोंके पाठोंसे ढूंढकपक्षका हास्य रस युक्त खंडन किया है ॥

इत्यादि अनेक ग्रंथ ढूंढकमतके खंडन विषयिक विद्यमान हैं तो उसी मतलबके अन्य ग्रंथ बनानेका वृथा प्रयास करना योग्य नहीं है ऐसा विचारके केवल समकितसारके कर्त्ता जेठमलकी स्वमति कल्पनाका कुयुक्तियोंके उत्तर लिखने वास्तेही ग्रंथकारने इस ग्रंथ के बनानेका प्रयास किया है॥

ढूंढियोंके साथ कई बार चर्चा हुई और ढूंढियोंको ही पराजय होती रही पंडितवर्य्य श्रीवीरविजयजीके समयमें श्रीराजनगर(अहमदावाद) में सरकारी अदालतमें विवाद हुआ था जिसमें ढूंढिये हार गये थे इस विवादका सविस्तर वृत्तांत "ढूंढियानोरासड़ो" इस नामसे किताब छपी है उसमें है। पूर्वोक्तचर्चाके समय समकितसारका कर्त्ता जेठमल भी हाजर था परंतु पराजयकोटिमें आकर वह भी पलायन कर गया था, इसतरह वारंवार निग्रह कोटिमें आकर अपने हृदयमें अपनी असत्यताको जानकर भी निज दुर्मतिकल्पना से कुयुक्तियोंका संग्रह करके समकितसार जैसा ग्रंथ बनाना यह केवल अपनी मूर्खताही प्रकट करनी है ॥

आधुनिक समयमें भी कितनेही ठिकाने जैनी और ढूंढियोंकी चर्चा होती है वहां भी ढूंढिये निग्रहकोटिमें आकर पराजयको ही प्राप्त होते हैं * तथापि अपने हठको नहीं छोड़ते हैं, यही इनकी

* अमृतसर, होश्यारपुर, फगवाड़ा, बगीयां, जेसों प्रमुख स्थानोंमें जोजो कारंवाई हुई थी प्रायः पंजाबके सर्व जैनी और ढूंढिये जानते है कई अन्य ब्राह्मण वगैरह भी जानते हैं कि सभा मंजूर करके सभाके समय ढूंढिये हाजर नहीं हुए॥

होता है कि प्रत्येक जैनी जिनप्रतिमाको मानते और वंदना नमस्कार पूजा सेवा भक्ति करते थे। तो फेर तुम लोक किसवास्ते हठ पकड़के जिनप्रतिमाका निषेध करते हो? इसवास्ते हठको छोड़कर श्रावकोंको श्रीजिनप्रतिमा पूजने का निषेध मतकरो जिससे तुमारा और तुमारे श्रावकोंका कल्याण होवे ॥

यद्यपि सत्यके वास्ते अंगरेजीमें आवे वैसा लिखनेमें कोई हरकत नहीं है तथापि इस पुस्तकमें जो कोई कठिन शब्द लिखा गया होवे तो उसमें समकितसार ही कारणभूत है क्योंकि 'यादृशे तादृशमाचरेत्' इस न्यायसे समकितसारमें लिखी बातोंका यथायोग्य ही उत्तर दिया गया होगा, न किसीके साथ द्वेषहैऔर न कठिन शब्दों से कोई अधिक लाभ है यही विचारके समकितसारकी अपेक्षा इस ग्रन्थमें कोई कठिन शब्द रहनेनहीं दिया है,यदि कोई होवेगा भी,तो वोहफक्त समकितसारके मानने वालोंको हित शिक्षारूप हीहोगा ॥

इस ग्रथके छपानेका उद्देश्य मात्र यहीहै कि जो अज्ञानताकेप्रसंग से उन्मार्गगामी हुए हों वोह भव्यजीव इसको पढ़कर हेयोपादेयको समझ कर सूत्रानुसार श्रीतीर्थंकरगणधर पूर्वाचार्यप्रदर्शित सत्य मार्गको ग्रहण करें और अज्ञानी प्रदर्शित उन्मार्गका त्याग कर देवें, परंतु किसीकी वृथा निंदा करनेका अभिप्राय नहीं है इसवास्ते इस पुस्तकको वांचने वालोंने सज्जनता धारन करके और द्वेष भावको त्यागके आदिसे अंत पर्यंत वांचके हंसचंचू होकरसारमात्र ग्रहण करना, मनुष्यजन्म प्राप्तिका यही फल है जो सत्य को अंगीकार करना परंतु पक्षपात करके झूठाहठ नहीं करना यही अंतिम प्रार्थना है ॥

अफसोस है कि ग्रन्थकर्त्ताके हाथकी लिखी इस ग्रन्थकीखास संपूर्ण प्रति हमको तलायश करनेसे भी नहीं मिली तथापि जितनी मिली उसके अनुसार जो प्रथमावृतिमें अशुद्धता रह गई थी इसमें प्रायः शुद्धकी गई है और बाकीका हिस्सा जैसाका वैसा गुजराती प्रतिके ऊपरसे यथाशक्ति उलथा किया गया है इस बात में खास करके मुनिश्रीवल्लभविजयजीकी मदद लीगई है इसलिये इस जगह मुनिश्रीका उपकार माना जाता है साथमें श्रीभावनगर की श्रीजैनधर्मप्रसारक सभाका भी उपकार माना जाता है कि जिस ने गुजराती में छपाकर इस ग्रन्थको हयात बना रखा जिससे आज यह दिनभी आगया जो निजभाषामें छपाकर अन्य प्रेमी भाइयों को इसका लाभ दिया गया ॥

दृष्टिदोषान्मतेर्माद्या, यदशुद्धं भवेदिह ।
तन्मिथ्यादुष्कृतं मेस्तु, शोध्यमार्यै रनुग्रहात् ॥

श्रीवीर संवत् २४२९ । विक्रम संवत् १९५९ । ईसविसन १९०३
आत्म संवत् । ७

श्रीसंघका दास जसवंतरायजैनी,
लाहौर

श्रीआत्मानंद जैनसभा पंजाबके हुकमसे ।

अथ श्रीसम्यक्त्वशल्योद्धार ग्रंथस्य विषयानुक्रमणिका।

नं०	विषयाः	पृष्टांकाः
१	मंगलाचरणम्	१
२	ढूंढकमतकी उत्पत्ति वगैरह	१
३	ढूंढकमतकी पट्टावली	८
४	ढूंढियोंके ५२ प्रश्नोंके उत्तर	११
५	ढूंढियोंके प्रति १२८ प्रश्न	१८
६	बत्तीससूत्रोंके बाहिरके २०४ बोल ढूंढिये मानते हैं	२८
७	बत्तीससूत्रोंमेंसे कितनेक बोल ढूंढिये नहीं मानते हैं	३७
८	निर्युक्ति वगैरह मानना शास्त्रोंमें कहा है	४०
९	आर्यक्षेत्रकी मर्यादा	४५
१०	प्रतिमाकी स्थितिका अधिकार	४६
११	आधाकर्मी आहारकी बाबत	४९
१२	मुहपत्ती बांधनेसे सन्मूर्च्छिम जीवकी हिंसा होती है	५२
१३	यात्रा तीर्थ कहे हैं इसबाबत	५५
१४	श्रीशत्रुंजय शाश्वता है	५९
१५	कयबलिकम्मा शब्दका अर्थ	६१
१६	सिद्धायतन शब्दका अर्थ	६६
१७	गौतमस्वामी अष्टापदपर चढे	७०
१८	नमुथ्थुणंके पाठकी बाबत	७६
१९	चारों निक्षेपे अरिहंत वंदनीक हैं	७८

नं०	विषयाः	पृष्टांकाः
२०	नमूना देखके नाम याद आता है	८९
२१	नमो बंभीए लिवीए इसपाठका अर्थ	९४
२२	जंघाचारणविद्याचारण साधुओंनेजिनप्रतिमावांदी है	९७
२३	आनंद श्रावकने जिनप्रतिमा वांदी है ...	१०६
२४	अंबड श्रावकने जिनप्रतिमा वांदी है ...	११६
२५	सातक्षेत्रमें धंन खरचना कहा है	१२०
२६	द्रौपदीने जिनप्रतिमा पूजी है	१२८
२७	सूर्याभने तथा विजयपोलीएने जिनप्रतिमा पूजी है	१४८
२८	देवता जिनेश्वरकी दाढा पूजते हैं	१७१
२९	चित्रामकी मूर्त्ति नहीं देखनी चाहिये इसबाबत	१८३
३०	जिनमंदिर करानेसे तथाजिनप्रतिमा भरानेसे १२वें देवलोक जावे	१८६
३१	श्रीनंदिसूत्रमें सर्व सूत्रोंकी नोंध है	१९४
३२	साधु या श्रावक श्रीजिनमंदिर न जावे तो दंड आवे, इसबाबत श्रीमहाकल्पसूत्रके पाठ सहितवर्णन,	१९७
३३	जेठमल्लके लिखे ८५ प्रश्नोंके उत्तर	२०३
३४	ढूंढियोंको कितनेक प्रश्न	२२२
३५	सूत्रोंमें श्रावकोंनें जिनपूजाकरी कहा है इसबाबत	२२५
३६	सावद्य करणी बाबत	२३०
३७	द्रव्यनिक्षेपा वंदनीक है	२३५
३८	स्थापना निक्षेपा वंदनीक है	२३६
३९	शासनके प्रत्यनीकको शिक्षादेनी	२३८

नं०	विषयाः	पृष्ठांकाः
४०	वीस विहरमानके नाम	२४१
४१	चैत्यशब्दका अर्थ साधु तथा ज्ञान नहीं	२४२
४२	जिनप्रतिमा पूजनेके फल सूत्रोंमें कहे हैं	२४८
४३	महिया शब्दका अर्थ	२५१
४४	छीकायाके आरंभ बाबत	२५३
४५	जीवदयाके निमित्त साधुके वचन ...	२५६
४६	आज्ञा सो धर्म है इसबाबत	२५८
४७	पूजा सो दया है इसबाबत	२६१
४८	प्रवचनके प्रत्यनीकको शिक्षा करने बाबत ...	२६६
४९	देवगुरुकी यथायोग्य भक्ति करने बाबत	२६७
५०	जिनप्रतिमा जिनसरीखी है इसबाबत	२६९
५१	ढूंढकमतिका गोशालामती तथा मुसलमानोंके साथ मुकाबला	२७२
५२	मुंहपर मुहपत्ती बंधी रखनी सो कुलिंग है	२७८
५३	देवता जिनप्रतिमा पूजते हैं सो मोक्षके वास्ते है	२८१
५४	श्रावक सूत्र न पढ़े इसबाबत	२८२
५५	ढूंढिये हिंसाधर्मी हैं इसबाबत	२८९
५६	ग्रंथ की पूर्णाहुति	२९४
५७	ढूंढक पचविशी	२९७
५८	सवैय्ये	२९९
५९	समतिप्रकाश बारह मास	३०१

॥ ओम् ॥

सम्यक्त्व शल्योद्धार

॥ श्री जैनधर्मोजयति ॥

मूर्ति निधाय जैनेंद्रीं सयुक्तिशास्त्रकोटिभिः ।
भव्यानां हृद्विहारेषु लुम्पण्ढुण्ढककिल्विषम् ॥ १ ॥
सम्यक्त्व गात्रशल्यानां व्याप्यानां विश्वदुर्गतेः ।
कदर्ङ्कुर्वक उद्धारं नत्वा स्याद्वाद ईश्वरम् ॥ २ ॥ युग्मम् ॥

॥ ओं ॥ श्री वीतरागायनमः ॥

(१)

ढुंढक मत की उत्पत्ति वगैरह ॥

प्रथम प्रश्न में ढुंढकमती कहते हैं "भस्मग्रह उतरा और दया धर्म प्रसरा" अर्थात् भस्मग्रह उतरे बाद हमारा दया धर्म प्रकट हुआ, इस कथन पर प्रश्न पैदा होता है कि क्या पहिले दया धर्म नहीं था ? उत्तर-था ही परंतु श्रीकल्पसूत्र में कहा है कि श्री महावीर स्वामी के निर्वाण बाद दो हजार वर्ष की स्थिति वाला तीसमा भस्मग्रह प्रभु के जन्म नक्षत्र पर बैठेगा जिससें दो हजार वर्ष तक साधु साध्वी की उदय उदय पूजा नहीं होगी, और भस्मग्रह उतरे बाद साधु साध्वी की उदय उदय पूजा होगी। भस्मग्रह के प्रभाव सें जिनकी पूजा मंद होगी उनकी ही पूजा प्रभावना

भस्मग्रह के उतरे बाद विशेष होगी, इसी मूजिब श्री आनंद विमल सूरि, श्रीहेमविमलसूरि, श्रीविजयदानसूरि, श्रीहीरविजयसूरि और खरतर गच्छीय श्रीचिनचंद्रसूरि वगैरहने क्रियाउद्धार किया तब से लेके आज तक त्यागी संवेगी साधुसाध्वी की पूजा प्रभावना दिन प्रति दिन अधिक अधिकतर होती जाती है और पाखंडियों की महिमा दिन प्रति दिन घटती जाती है यह बात इस वक्त प्रत्यक्ष दिखाइदेती है, इसवास्ते श्रीकल्पसूत्र का पाठ अक्षर अक्षर सत्य है, परंतु जेठमल्ल ढुंढक के कथनानुसार श्रीकल्पसूत्र में ऐसे नहीं लिखा है कि गुरु बिना का एक मुख बंधों का पंथ निकलेगा जिसका आचार व्यवहार श्रीजैनमत के सिद्धांतों से विपरीत होगा उस पंथ वाले की पूजा होगी और तिसका चलाया दयामार्ग दीपेगा ! इसवास्ते जेठमल्ल का कथन सत्यका प्रति पक्षी है। लौकिक दृष्टांत भी देखो (१) जिस आदमी को रोग होया हो उस रोगकी स्थिति के परिपक्व हुए रोग के नाश होने पर वोही आदमी निरोगी होवे या दूसरा ? (२) जिस स्त्री को गर्भ रहा हो गर्भ की स्थिति परिपूर्ण हुए वोही स्त्री पुत्र प्रसूत करे या दूसरी? (३) जिस बालक की कुड़माई (मांगनी) हुई हो विवाह के वक्त वोही बालक पाणिग्रहण करे या दूसरा? इन दृष्टांतों मूजिब भस्मग्रह के प्रभाव से जिन साधु साध्वी की उदय उदय पूजा नहींहोती थी, भस्मग्रह के उतरे बाद तिनकी ही उदय उदय पूजा होती है, परंतु ढुंढक पहिले नहीं थे कि भस्मग्रह के उतरे बाद तिनकी उदय उदय पूजा होवे इस वास्ते जेठमल्ल का लिखना सत्य नहीं है ॥

तथा श्रीवग्गचूलिया सूत्रमें कहा है कि बाईस(२२) गोठिल्ले पुरुष काल करके संसार में नीच गति में और बहुत नीच कुल में

प्रतिमा के तोड़ने वाले, हीलना करते हुए, खींसना करते हुए, निंदा करते हुए, गरहा करते हुए, पराभव करते हुए, चैत्य (जिन प्रतिमा) तीर्थ, और साधु साध्वी को उत्थापेंगे ॥

तथा इसी सूत्र मे कहा है, कि श्रीसंघ की राशि ऊपर ३३३ वर्ष की स्थिति वाला धूमकेतु नामा ग्रह बैठेगा, ओरतिसके प्रभाव सें कुमत पंथ प्रकट होगा, इस मूजिब ढुंढकों का कुमत पंथ प्रकट हुआ है. और तिस ग्रहकी स्थिति अब पूरी हो गई है, जिससें दिन प्रति दिन इस पंथ का निकंदन होता जाता है ! आत्मार्थी पुरुषों ने यह बात वग्ग चूलिया सूत्र में देख लेनी ॥

समाकतसार (शल्य) नामा पुस्तक के दूसरे पृष्ट की १९मी पंक्ति में जेठमल्ल ने लिखा है कि "सिद्धांत देखके संवत् (१५३१) में दयाधर्म प्रवृत हुआ" यह बिलकुल झूठ है क्योंकि श्री भगवती सूत्र के २०मे शतक के ८मे उद्देशे में कहा है किभगवान् महावीर स्वामी का शासन एक बीस हजार (२१०००) वर्ष तक रहेगा सो पाठ यह है ॥

गोयमा जंबुद्दीवे दीवे भारहेवासे इमीसे उस्सप्पिणीए ममं एकवीसं वाससहस्साइं तिथ्थे अणुसिज्जिस्सत्ति ॥भ० श० २० उ०८

भावार्थः–हे गौतम ! इस जंबूद्वीप के विषे भरतक्षेत्र के विषे इस उत्सर्पिणी में मेरातीर्थएकबीसहजार(२१०००)वर्षतकप्रवर्त्तेगा

इस सें सिद्ध होता है कि कुमतियों ने दया मार्ग नाम रख के मुख बंधों का जो पंथ चलाया है, सो वेश्या पुत्र के समान है, जैसे वेश्या पुत्र के पिता का निश्चय नहीं होता है, ऐसे ही इस पंथ के देव गुरु का भी निश्चय नहीं है, इस सें सिद्ध होता है कि यह सन्मूर्छिम पंथ हुंडा अवसर्प्पिणी का पुत्र है ॥

श्री भगवती सूत्र के २५में शतक के ६ छट्ठे उद्देशे में कहा है कि व्यावहारिक छेदोपस्थापनीय चारित्र विना गुरु के दिये आता नहीं है और इस पंथ का चारित्र देने वाला आदि गुरु कोई है नहीं क्योंकि ढुंढक पंथ सूरत के रहने वाले लवजी जीवा जी तथा धर्मदास छींबे का चलाया हुआ है तथा इस का आचार और वेष वतीस सूत्र के कथन से भी विपरीत है, क्योंकि श्री प्रश्न व्याकरण सूत्र के पांच में संवर द्वार में जैन साधुके यह उपकरण लिखे हैं, तथा च तत्पाठः-पडिग्गहो पायबंधण पाय केसरिया पायट्ठवणं च पडलाइंतिन्निव रयत्ताणं गोच्छओ तिन्निय पच्छागा रओहरण चोल पट्टक मुहणंतगमाइयं एयं पिय संजमस्स उववूहट्टयाए ॥

भावार्थ-पात्र १ पात्र बंधन २ पात्र केशरिका ३ पात्रस्थापन ४ पडले तीन ५ रजस्त्राण ६ गोच्छा ७ तीन प्रच्छादक १० रजोहरण ११ चोलपट्टा १२ मुखवस्त्रिका १३ वगैरह उपकरण संजम की वृद्धि के वास्ते जानने ॥

ऊपर लिखे उपकरणों में ऊन के कितने, सूतके कितने, लंबाई वगैरह का प्रमाण कितना, किस किस प्रयोजन के वास्ते और किस रीति से वर्त्तने, वगैरह कोई भी ढुंढक जानता नहीं है, और न यह सर्व उपकरण इन के पास है, तथा सामायिक, प्रतिक्रमण दीक्षा, श्रावक व्रत, लोच करण, छेदोपस्थापनीय चारित्र, वगैरह जिस विधि से करते हैं, सो भी स्वकपोल कल्पित है, लंबा रजोहरण, विना प्रमाण का चोलपट्टा, और कुलिंग की निशानी रूप दिन रात मुख बांधना भीजैनशास्त्रानुसार नहीं है, मतलब प्रायः कोई भी क्रिया इस पंथ की जैन शास्त्रानुसार नहीं है, इस वास्ते

येह दासी पुत्र तुल्य हैं,इन में सेठाइका कोई भी चिन्ह नहीं है, अनंते तीर्थंकरों के अनंते शास्त्रों की आज्ञा से विरुद्ध इनका पंथ है इस वास्ते किसी भी जैनमतानुयायी को मानना न चाहिये ॥

और जो संघपट्ट का तीसरा काव्य लिखा है, तिस में तेरां (१३) खोट हैं, और तिसके अर्थ में जो लिखा है"नवा नवा कुमत प्रगट थाशे"सो सत्य है वो नवीन कुमत पंथ तुमारा ही है,क्योंकि जैन सिद्धान्त से विरुद्ध है,और जो इस काव्य के अर्थ में लिखा है "छकायना जीव हणीने धर्म प्ररूपसे" इत्यादि यह सर्व महा मिथ्या है क्योंकि काव्याक्षरों में से यह अर्थ नहीं निकलता है इस वास्ते जेठा ढुंढक महामृषा वादी था,और तिसको झूठ लिखने का बिलकुल भय नहीं था,इस वास्ते इस का लिखा प्रतीति करणे योग्य नहीं है ॥

तथा चौथा काव्य लिखा तिस में तेवीस (२३) खोट है, इस काव्य के अर्थ में जो लिखा है "हिंसा धर्म को राज सूर मंत्रधारीनी दीपती"इत्यादि सम्पूर्ण काव्यका जो अर्थ लिखा है सो महा मिथ्या और किसी की समझ में न आवे एसाहै,क्योंकि काव्याक्षरों में से यह अर्थ निकलता नहीं है,इसी वास्ते मुंहबंधे महा मृषावादी अज्ञानी पशु तुल्यहैं,बुद्धिमानों को इनका लिखना कदापि मानना न चाहिये ॥

सतारवां काव्य लिखा तिसमें (१७) खोट हैं ओर इसके अर्थ में जो लिखा है "छ काय जीव हणीने हींस्याये धर्म कहे छें सूत्र वाणी ढांकीने कुपंथ प्रकरण देखी कोरण थापी चेत्य पोसाल करावी अधो मार्गें घाले छे कीहांइ सूत्र मध्ये देहरा कराव्या नथी कह्या" यह अर्थ महा मिथ्या है क्योंकि काव्याक्षरों में है नहीं इस वास्ते

मुंहबंधों का पंथ निःकेवल मृषावादियों का चलाया हुआ है॥

तथा वीसमें काव्य में सात ७ खोट है और इसका जो अर्थ लिखा है सो सर्व ही महा मिथ्या लिखा है एक अक्षर भी सच्चा नहीं ऐसे मृषावादीयों के धर्म को दया धर्म कहते हैं ? ऐसा झूठ तो म्लेछ (अनार्य) भंगी भी लिखते बोलते नहीं हैं॥

तथा इक्कीसमें (२१) काव्य में बारां (१२) खोट है तिस में ऐसा अधिकार है,वेष धारी जिन प्रतिमा का चढावा खाने वास्ते सावद्य काम का आदेश देते हैं,यह तो ठीक है परंतु जेठे ढुंढक ने जो अर्थ इस काव्य का लिखा है, सो झूठा निःकेवल स्वकपोल कल्पित है॥

तथा तीसमा काव्य लिखा है तिस में (१३) तेरां खोट हैं इस का अर्थ जेठे ने सर्व झूठ ही लिखा है संशय होवे तो वैयाकरण पंडितों को दिखा के निश्चय कर लेना॥

पूर्वोक्त छी काव्य के लिखे अर्थों को देखने से सिद्ध होता है कि समकित सार (शल्य) के कर्त्ता ने अपना नाम जेठ मल्ल नहीं किंतु झूठ मल्ल ऐसा सार्थक नाम सिद्ध कर दिया है अब विचार करना चाहियेकि जिस को पद पदमें झूठ बोलने का,उलटे रस्ते च लनेका,झूठे अर्थकरने का,और झूठे अर्थ लिखने का,भय नहीं तिस के चलाए पंथ को दया धर्म कहना औरतिसधर्म को सच्चामानना यह विना भारी कर्मी जीवोंके अन्य किसी का काम है ?॥

जो ढुंढक पंथ की उत्पति जेठमल्ल ने लिखी है सो सर्व झूठी मिथ्या बुद्धि के प्रभाव से लिखी है,और भोले भव्य जीवों को फसाने वास्ते विना प्रयोजन,तिस में सूत्र की गाथा लिख मारी है परंतु इस ढुंढक पंथ की खरी उत्पत्ति श्री हीरकलश मुनि विरचित

कुमति विध्वंसन चौपई तथा अमरसिंह ढुंढक के पडदादे अमोलक चंद के हाथ की लिखी हुई ढुंढक पट्टावलि के अनुसार नीचे मूजिब है ॥

ढुंढकमत की पट्टावली

गुजरात देश के अहमदावाद नगर में एक लुंका नामक लिखारी ज्ञान जी यति के उपाश्रय में पुस्तक लिखके आजीविका करता था एक दिन उस के मन में बेइमानी आनेसे एक पुस्तक के सात पत्रे बीचमेसे लिखने छोड दीये, जब पुस्तक के मालक ने पुस्तक अधूरा देखा, तव लुंके लिखारी की बहुत भंडी करके उपाश्रय में से निकाल दिया, और सब को कह दिया कि इस बेइमान से कोइ भी पुस्तक न लिखवावें,इसतरह लुंकाआजीविका भंग होने से बहुत दुःखी होगया औरइस्से वो जैनमत का द्वेषी बन गया,जब अहमदावाद में लुंके का जोर न चला तब वो वहां से चल के लींबडी गाममें गया,तहां लुंकेका संबंधी लखमशी वाणीया राज्य का कारभारी था,तिस कों जाके कहा,भगवंत का धर्म लुप्त होगयाहै, मैंने अहमदावाद में सच्चा उपदेश करा परंतु मेरा कहना न मान के उलटा मुझ कों मार पीट के तहां से निकाल दीया,तब मैं तेरे तरफ से सहायता मिले गी ऐसे धार के यहां आया हूं,इस वास्ते जेकर तूं मुझ को सहायता करे तो मैं सच्चे दया धर्म की प्ररूपणा करूं इस तरह हलाहल विषप्रायः असत्य भाषण कर के बिचारे कलेजाविनाके मूढमति लखमशी को समझाया, तब उस ने उसकी बात सच्ची मान के लुंके कों कहा कि तूं लींबडी केराज्य में बेधडक प्ररूपणा कर, मैं तेरे खान पानकी खबररखुंगा,इसतरह

सहायता मिलने से लुंके ने संवत १५०८ में जैन मार्ग की निंदा करनी शुरू करी, परंतु अनुमान छब्बीस वर्ष तक तो उसका उन्मार्ग किसी ने अंगी कार नही करा, संवत १५३४ में एक अकल का अंधा भूणा नानक वाणीया लुंके को मिला, तिसने महा मिथ्यात्व के उदय से लुंके का मृषा उपदेश माना और लुंके के केहने से विना गुरु के भेष पहनके मूढ अज्ञानी जीवों को जैन मार्ग से भ्रष्ट करना शुरू कीया ॥

लुंकेने इकत्तीस सूत्र सच्चे माने और व्यवहार सूत्र सच्चा नही माना, और जहां जहां मूल सूत्रका पाठ जिन प्रतिमा के अधिकार का था, तहां तहां मनःकल्पित अर्थ लगा के लोगोंको समझाने लगा॥

भूणे (भाणजी) का शिष्य रूपजी संवत १५६८ में हुआ तिस का शिष्य संवत् १५७८ महा सुदि पंचमी के दिन जीवाजी नामक हुआ, तिसका शिष्य संवत १५८७ चैत्रवदि चौथ को वृद्धवर सिंहजी हुआ, तिसका शिष्य संवत १६०६ में वरसिंहजी हुआ, तिसका शिष्य संवत १६४९ में जसवंत हुआ, इसके पीछे संवत १७०९ में वजरंगजी नामक लुंपकाचार्य हुआ, उस वजरंगजी के पास सूरत के वासी वोहरा वीरजी की बेटी फूलां बाइ के गोद लिये बेटे लवजी नामक ने दीक्षा लीनी दीक्षा लिये पीछे जब दो वर्ष हुए तब दशवैकालिक सूत्र का टबा वांचा वांचकर गुरु को कहने लगा कि तुम तो साधु के आचार से भ्रष्ट हो इस तरह कहने से जब गुरु के साथ लडाई हुई तब लवजी ने लुंपकमत और गुरु को त्याग के थोभणरिख* वगैरह को साथ लेकर स्वयमेव दीक्षा लीनी और मुंह के पाटी बांधी, उस लवजी का शिष्य सोमजी

* इस का दूसरा नाम भूणा है।

तथा कानजी हुआ, कानजी के पास गुजरात का रहने वाला धर्मदास छींबा दीक्षा लेने को आया परंतु वो कानजी का आचार भ्रष्ट ज्ञान कर स्वयमेव साधु बन गया, और मुंह के पाटी बांध ली, इन के (ढूंढकों के) रहने का मकान ढूंढ अर्थात् फूटा हुआथा इस वास्ते लोकों ने ढूंढक नाम दीया, और लुंपकमति कुंवर जी के चेले धर्मसी, श्रीपाल और अमीपाल ने भी गुरु को छोडके स्वयमेव दीक्षा लीनी तिन में धर्मसी ने आठ कोटी पच्चक्खाण का पंथ चलाया सो गुजरात देश में प्रसिद्ध है।

धर्मदास छींपी का चेला धनाजी हुआ, तिस का चेला भुदरजी हुआ, और तिस के चेले रघुनाथ, जैमलजी और गुमानजी हुए इनका परिवार मारवाड देश में विचरता है, तथा गुजरात मालवे में भी है॥

रघुनाथ के चेले भीखम ने तेरापंथी मुंह बंधों का पंथ चलाया।

लवजी ढूंढकमत का आदि गुरु (१) तिसका चेला सोमजी (२) तिसका हरिदास (३) तिस का वृंदावन (४) तिसका भुवानीदास (५) तिसका मलूकचंद (६) तिसका महासिंह (७) तिसका कुशालराय (८) तिसका छजमल्ल (९) तिसका रामलाल (१०) तिसका चेला अमरसिंह (११) मीं पीढी में हुआ, अमरसिंह के चेले पंजाब देश में मुंहबांधे फिरते हैं॥

कानजी के चेले मालवा औरगुजरात देश में हैं॥

समकितसार जिस के जवाब में यह पुस्तक लिखा जाता है तिसका कर्त्ता जेठ मल्ल धर्मदास छींबे के चेलों में से था और वो ढूंढकके आचरण से भी भ्रष्ट था इसवास्ते तिसके चेले देवीचंद और मोतीचंद दोनों तिसको छोड़के दिल्लीमें जोगराजके चेले हजारीमल्लके पास आ रहे थे दिल्ली के श्रावक केसरमल्ल जोकि हजारीमल्ल का

सेवक था तिसके मुंह से हमने देवीचंद मोतीचंद के कथनानुसार सुना है कि जेठमल्ल को झूठ बोलने का विचार नहीं था इतनाही नहीं किंतु तिसके ब्रह्मचर्य का भी ठिकाना नहीं था इसवास्ते जेठ मल्ल ने जो लुंपकमत की उत्पत्ति लिखी है बिलकुल झूठी और स्वकपोल कल्पित है, और हमने जो उत्पत्ति लिखा है सो पूर्वोक्त ग्रंथोंके अनुसार लिखीहै इसमें जो किसी ढूंढक या लुंपकको असत् मालुम होवे तो उसने हमारे पास से पूर्वोक्त ग्रंथ देख लेने*

११में पृष्टमें जेठमल्ल नें (५२) प्रश्न लिखे हैं तिनके उत्तर

पहिले औरदूसरे प्रश्न में लिखा है कि चेला मोल लेते हो(१) छोटे लड़कोंको विना आचार व्यवहार सिखाए दीक्षा देते हो (२), जवाब—हमारे जैन शास्त्रों में यह दोनों काम करनेकी मनाई लिखीहै और हम करते भी नहीं हैं,पूज्य (डेरेदारयति) करते हैं तो वे अपने आप में साधुपनेका अभिमान भी नहीं रखते हैं परंतु ढूंढक के गुरु लुंकागच्छ में तो प्रायः हर एक पाट मोल के चेले से ही चला आया है और ढूंढक भी यह दोनों काम करते हैं तिनके दृष्टांत— जेठमल्ल के टोले के रामचंद ने तीन लड़के इस रीति से लिये (१) मनोहरदास के टोले के चतुर्भुज ने भर्तानामा लड़का लिया है (२) धनीराम ने गोरधन नामा लडका लिया है (३) मंगलसेन ने दो लड़के लिये हैं (४) अमरसिंह के चेले ने अमीचंद नामा लड़का लिया है (५) रूपांढूंढकणी ने पांच वर्ष की दुर्गी नामा लड़की ला है (६) राजां ढुंढणीने तीन वर्ष का जीया नामा

* इस ढूंढक मत की पटावली का विस्तार पूर्वक वर्णन ग्रंथकर्त्ता ने श्रीजैनतत्त्वादर्श में करा है इसवास्ते यहां संक्षेप से मतलब जितनाही लिखा है ॥

लड़की (७) यशोदा ढुंढणीनें मोहनी और सुंदरी लड़की सात वर्ष की (८) हीरां ढुंढणी ने छी वर्ष की पार्वती नामा लड़की (९) अमरसिंहकेसाधुने रामचंदनामालड़काफीरोजपुरमें लियाजिस के बदले में उसके बाप को २५०) रुपये दिये (१०) बालकराम ने आठ वर्ष का लालचंद नामा लड़का (११) बलदेव ने पांच वर्ष का लड़का (१२) रूपचंद ने आठ वर्ष का पालीनामा डकौत का लड़का (१३) भावनगर में भीमजी रिखके शिष्य चूनीलाल तिस के शिष्य उमेदचंद ने एक दरजी का लडका लियाथा जिसकी माता ने श्रीजिनमंदिर में आके अपना दुःख जाहिर किया था आखीर में अदालत की मारफत वो लड़का तिसकी माताको सपूर्द किया गया था (१४) इत्यादि सैंकड़ों ढूंढियों ने ऐसे काम किये हैं और सैंकड़ों करते हैं* इस वास्ते संवेगी जैन मुनियोंको कलंक देने वास्ते जेठमल्ल ने जो असत्य लेख लिखा है सो अपने हाथ से अपना मुख स्याही से उज्वल किया है!

तीसरे प्रश्नका उत्तर—पंचवस्तुक नामा शास्त्र में लिखाहै कि दीक्षा वक्त मूल का नाम फिराके दूसरा अच्छा नाम रखना †

---

*संवत् १९५१ चैत्रवदि ११ बृहस्पतिवार के रोज जब सोहनलाल को युवराज पदवी दी तब सवत् १९५२ चैत्र सुदि १ के रोज लुधिहाना नगर में ढूंढियों ने ६२ बोल बनाये हैं उन में ३५ में बोल में लिखा है कि "आज्ञा बिना चेला चेली करनी नहीं वारसों को खबर कार देनी बिना खबर मूंडना नहीं तथा दाम दिवा के तथा बेपरतीते को करना नहीं दीक्षा महोत्सव में सलाह देनी नहीं दीक्षा वाले को ऊठ, बैठ, खाना दाना देना, दिवाना शास्त्री हरफ सिखाने नहीं"।

† श्रीउत्तराध्ययन सूत्र के नवमे अध्ययन में लिखा है कि नमिराजर्षि प्रत्येक बुद्ध की माता मदनरेखा ने जब दीक्षा धारण करी तब उसका नाम सुव्रता स्थापन करा सो पाठ यह है "तीएवि तासिं साहूणीणं समीवे गहिया दिक्खाकय सुव्वयनामा तव संजमकुणमाणी विहरइ" इत्यादि ॥

(४) चौथे प्रश्न में लिखा है कि "कान पड़वाते हो" उत्तर- यह लेख मिथ्या है क्योंकि हम कान पड़वाते नहीं हैं कान तो कान फटे योगी पड़वाते हैं ॥

(५) खमासमणे वहोरते हो (६) घोडा रथ वैहली डोली में बैठते हो (७) गृहस्थ के घर में बैठके वहोरते हो (८) घरों में जाके कल्पसूत्र वांचते हो (९) नित्यप्रति उस ही घर वहेरते हो (१०) अंघोल करते हो (११) ज्योतिष निमित्त प्रयुंजते हो (१२) कलवाणी करके देते हो (१३) मंत्र,यंत्र,झाड़ा,दवाई करते हो इन नव प्रश्नोंके उत्तर में लिखने का कि जैन मुनियों को यह सर्व प्रश्न कलंक रूप हैं क्योंकि जैन संवेगी साधु ऐसे करते नहीं हैं,परंतु अंतके प्रश्नमें लिखे मूजिब मंत्र,यंत्र,झाड़ा,दवाई वगैरह ढूंढक साधु करते हैं,यथा (१) भावनगर में भीमजी रिख तथा चूनीलाल (२) बरवाला में रामजी रिख (३) बोटाद में अमरशी रिख (४) ध्रांगधरा में शाम जी रिख वगैरह मंत्र यंत्र करते हैं यंत्र लिख के धुलाके पिलाते हैं कच्चे पाणीकी गड़वीयां मंत्रकर देते हैं अपने पासों दवाई की पुडीयां देते हैं बच्चों के शिर पर रजोहरण फिराते हैं वगैरह सब काम करते हैं इस वास्ते यह कलंक तो ढूंढकों के ही मस्तकों पर है (१४) में प्रश्नमें जो लिखा है सो सत्य है क्योंकि व्यवहारभाष्य श्राद्धविधिकौमुदी आदि ग्रंथोंमें गुरुको समेला करके लाना लिखाहै और ढूंढक लोक भी लाने वक्त और पहुंचाने वक्त वजिंतर बजवाते हैं भावनगर में गोबर रिख के पधारने में और रामजी ऋष के विहार में वजिंतर बजवाये थे और इस तरां अन्यत्र भी होता है * ॥

---

* रावलपिंडी शहरमें पार्वतीढूंढनीके चौमासे में दर्शनार्थ आए बाहरले भाइयों को

(१५) मे प्रश्न में "लड्डू प्रतिष्ठा ते हो" लिखा है सो असत्य है

(१६) सात क्षेत्रों निमित्त धन कढाते हो (१७) पुस्तक पूजाते हो (१८) संघ पूजा कराते हो और संघ कढाते हो (१९) मंदिर की प्रतिष्ठा कराते हो (२०) पर्यूषणा में पुस्तक देके रात्रि जागा कराते हो यह पांच प्रश्न सत्य हैं क्योंकि हमारे शास्त्रों में इस रीति से करना लिखा है जैसे ढूंढक दीक्षा ढूंढक मरण में तुम महोत्सव करते हो ऐसे ही हमारे श्रावक देवगुरु संघ श्रुत की भक्ति करते हैं और इस करने से तीर्थंकर गोत्र बांधता है यह कथन ज्ञाता सूत्र वगैरह शास्त्रों में है इसको देख के तुमारे पेट में क्यों शूल उठता है ? इन कामों में मुनि का तो उपदेश है, आदेश नहीं ॥

(२१) में प्रश्न में लिखा है "पुस्तक पात्र वेचते हो" इसकाउत्तर–

हमारा कोई भी साधु यह काम नहीं करता है, करे तो वो साधु नहीं, परंतु मुंह बंधे ढूंढक और ढूंढकनीयां करती हैं, दृष्टांत (१) अजमेर में ढूंढनीयां रोटीयां वेचनी हैं (२) जयपुर में चरखा कांतती हैं (३) बलदेव गुलाब नंदराम और उत्तमचंद प्रमुख रिख कपडे वेचते हैं (४) भियाणी में नवनिध ढूंढक दुकान करता है (५) दिल्ली में गोपाल ढूंढक हुक्के का तमाकु बनाके वेचता है (६) वीकानेर और दिल्ली में ढूंढनीयां अकार्य करती हैं (७) कनीराम के चेले राजमल ने कितने ही अकार्य किये सुने हैं (८) कनीराम का चेला जयचंद दो ढूंढक श्राविकायों को लेके भाग गया और कुकर्म करता रहा (९) बोटाद में केशवजी रिख पछम

महोत्सव पूर्वक नगरमें शहरवाले लायेथे तथा हुशियारपुरमें सोहनलाल ढूंढक के चौमासे में मोती के परिवार में पुत्रोत्पत्ति के हर्ष में महोत्सव पूर्वक स्वामी जी के दर्शनार्थ आए थे पुत्र को चरणों पर लगा के लड्डू बांटके बडी खुशी मनाई थी।

गाम की बनीयाणी को लेके भाग गया है * यह तुमारे (ढुंढकके) दया धर्म की उदय उदय पूजा हो रही है ?

(२२) माल उगटावते हो (२३) आधाकर्मी पोसाल में रहते हो (२४) मांडवी (विमान) कराते हो (२५) टीपणी (चंदा) कराके रुपैये लेते हो (२६)गोतम पडघा कराते हो यह पांचों प्रश्न असत्य हैं, क्योंकि संवेगी मुनि ऐसे नहीं करते हैं, परंतु २३ में तथा २४ में प्रश्न मूजब ढुंढकों के रिख करते हैं ॥

(२७) संसार तारण तेला कराते हो (२८) चंदन बाला का तप कराते हो, यह दोनों प्रश्न ठीक हैं; जैसे शास्त्रों में मुक्तावलि कनकावलि, सिंहनिः क्रीडितादि तप लिखे हैं; तैसे यह भी तप है, और इस से कर्म का क्षय, और आत्मा का कल्याण होता है ॥
(२९)तपस्या कराके पैसा लेते हो(३०)सोना रूपाकी निश्रेणी (सीढी) लेते हो(३१)लाखा पड़वा कराते हो,यह तीनों ही प्रश्न मिथ्या हैं॥

(३२) उजमणा कराते हो लिखा है,सो सत्य है, यह कार्य उत्तम है, क्योंकि यह श्रावक का धर्म है,और इस से शासन की उन्नति होती है,तथा श्राद्धविधि,संदेहदोलावलि वगैरह ग्रंथों में लिखा है ॥

(३३) पूज ढोवराते हो–सो श्रावक की करणी है,और श्रीजिन मंदिर की भक्ति निमित्त करते हैं ॥

(३४) श्रावक के पास मुंडका दिलाके डुंगर पर चढते हो। यह असत्य है, क्योंकि अद्यापि पर्यंत किसी भी जैनतीर्थ पर साधु का मुंडका नहीं लिया गया है ॥

---

* जगरावा जिला लुधियाना में रूपचंद के दो साधु और अमरसिंह की साध्वी का संयोग हुआ और आधान रह गया सुना है, तथा बनुड में एक साधु ने अपना अकार्य गोपने के वास्ते छप्पर को आग लगादी ऐसे सुना है और समाणे में एक ढुंढक साधु को अकार्य की शंका से श्रावकों ने वारी मे बैठने से रोक दिया पट्टी में एक परमानंद के चेले के अकार्य से ढुंढक श्रावक रात्रि के वक्त थानक को ताला लगाते थे।

(३५) माला रोपण कराते हो। यह सत्य है मालारोपण करानी श्री महा निशीथ सूत्र में कही है॥

(३६) अशोक वृक्ष बनाते हो, यह श्रावक का धर्म है॥

(३७) अष्टोत्तरा स्नात्र कराते हो। यह श्रावक की करणी है, और इस सें अरिहंत पदका आराधन होता है, यावत् मोक्ष सुख की प्राप्ति होतीहै, श्रीरायपसेणी सूत्र प्रमुख सिद्धांतोंमें सतरां भेद सें यावत् अष्टोत्तरशत भेद तक पूजा करनी कही है॥

(३८) प्रतिमा के आगे नैवेद्य धराते हो यह उत्तम है, इस सें अनाहार पद की प्राप्ति होती है। श्रीहरिभद्रसूरि कृत पूजापंचाशक, तथा श्राद्ध दिन कृत्य वगैरह ग्रंथों में यह कथन है॥

(३९) श्रावक और साधु के मस्तकोपरि वासक्षेप करते हो, यह सत्यहै कल्पसूत्रवृत्ति वगैरह शास्त्रोंमें कहाहै परंतु तुम(ढूंढक) दीक्षा के समय में राख डालते हो सो ठीक नहीं है, क्योंकि जैन शास्त्रों में राख डालनी नहीं कही है॥

(४०) नांद मंडाते हो लिखा है, सो ठीक है, नांद मांडनी शास्त्रों में लिखी है। श्री अंगचूलिया सूत्र में कहा है कि व्रत तथा दीक्षा श्रीजिनमन्दिर में देनी— यतः

तिहि नक्खत्त मुहुत्त रविजोगाइय पसन्न दिवसे अप्पा वोसिरामि। जिणभवणाइपहाणखित्ते गुरू वंदित्ता भणइ इच्छकारि तुम्हे अम्हंपंच महव्वयाइं राइभोयणवेरमण छट्ठाइं आरोवावणिया॥

भावार्थ–तिथि, नक्षत्र, मुहूर्त्त, रविजोग आदि जोग, ऐसे प्रशस्त दिनमें,आत्माको पापसे वोसिरावे,सो जिनभवन आदि प्रधान क्षेत्रमें गुरुको वंदना करके कहे–प्रसाद करके आप हम को पांच महाव्रत और छट्ठा रात्रि भोजन विरमण आरोपण करो (देओ) ॥

(४१) पदीकच्चाक वांधते हो लिखा है, सो मिथ्या है।

(४२) वंदना करवाते हो,वंदना करनी सो श्रावकोंका मुख्यधर्म है।

(४३) लोगोंके शिर पर रजोहरण फिराते हो, यह काम हमारे संवेगी मुनि नहीं करते हैं, परंतु तुमारे रिख यह काम करते हैं, सो प्रथम लिख आए हैं।

(४४) गांठमें गरथ रखते हो अर्थात् धन रखतेहो,यह महा असत्य है, इस तरह लिखनेसे जेठेने तेरवें पापस्थानक का बंधन किया है॥

(४५) डंडासण रखते हो लिखा, सो ठीक है, श्रीमहानिशीथ सूत्र में कहा है *

(४६) स्त्री का संघट्टा करते हो लिखा है, सो मिथ्या है ॥

(४७) पगों तक नीची पछेवड़ी ओढते हो लिखा है,सो मिथ्या है,क्योंकि संवेगी मुनि ऐसे नहीं ओढते हैं,परन्तु तमारे रिख पग की पानी (अड्डियों) तक लंबा घघरे जैसा चोलपट्टा पहिरते हैं।

(४८) सूरिमंत्र लेते हो लिखा है,सो गणधर महाराज की परंपराय से है, इस वास्ते सत्य है॥

(४९) कपड़े धुलवाते हो लिखा है, सो असत्य है॥

(५०) आंबिल का ओलि कराते हो लिखा है,सो सत्य है,महा उत्तम है, श्रीपालचरित्रादि शास्त्रों में कहा है, और इस से नव पद का आराधन होता है, यावत् मोक्ष सुख की प्राप्ति होती है ॥

---

*श्रीव्यवहार सूत्र भाष्यादिकमें भी डंडासण रखना लिखा है।

(५१) यति मरे बाद लड्डू लाहते हो लिखा है,सो असत्य है, हमने तो ऐसा सुना भी नहीं है,कदापि तुमारे ढूंढक करते हों, और इस से याद आगया हो ऐसे भासता है *

(५२)यतिके मरेबाद थूभ करातेहो-यह श्रावक की करणीहै, गुरु भक्ति निमित्त करना यह श्रावक का धर्म है; श्रीआवश्यक,आचार दिनकरादि सूत्रोंमें लिखाहै।और इसमें साधुका उपदेशहै,आदेशनहीं॥

ऊपर मूजिब (५२) प्रश्न जेठमलनें लिखे हैं, सो महा मिथ्यात्व के उदयसे लिखे हैं,परंतु हमने इनके यथार्थ उत्तर शास्त्रानुसार दीये हैं,सो सुज्ञ पुरुषों ने ध्यान देकर वांच लेने॥

अब अज्ञानी ढूंढिये शास्त्रों के आधार बिना कितनेक मिथ्या आचार सेवते हैं तिनका वर्णन प्रश्नों की रीतिसे करते हैं॥

(१) सारादिन मुंह बांधे फिरते हो,सो किस शास्त्रानुसार ?

(२) बैलकी पूंछ जैसा लंबा रजोहरण लटका कर चलते हो, सो किस शास्त्रानुसार ?

(३) भीलों के समान गिलती बांधते हो,सो किस शा० ?

(४) चेला चेली मोल का लेते हो, सो किस शा० ?

(५) जूठे बरतनों का धोवण समूर्च्छिम मनुष्योत्पत्ति युक्त लेते हो और पीते हो, सो किस शास्त्रानुसार ?

(६) पूज्य पदवी की चादर ओढते हो,सो किस शा० ?॥

(७) पेशाब से गुदा धोते हो, सो किस शा० ?

---

*सुननेमें आया है कि अमृतसरमें एक ढूंढनीके मरे बाद सेवकों ने पिंड भराये थे तथा पंजाब में जब किसी ढूंढीये या ढूंढनी के मरनेपर लोक एकत्र होते हैं तो खूब मिठाईयों पर हाथ फेरते हैं॥

(४०) दया पाले तो दश व्रतका फल बताते हो, सो किस० ?

(४१) सम्यक्त्क देते हो तब (२५) व्रत कराते हो,सो किस० ?

(४२)बड़ी सम्यक्त्क देते हो तब(१८०)व्रत कराते हो,सो कि०?

(४३) व्रत बेला इत्यादि के पारणे पोरसी करे तो दूना फल कहते हो,सो किस शास्त्रानुसार ?

(४४) बेले से लेकर आगे पांच गुने व्रत फलकी संख्या कहते हो, सो किस शास्त्रानुसार?*

(४५) चार चार महीने आलोयणा करते हो, सो किस० ?

(४६) पोसह करे तो ११ ग्यारवां बड़ा व्रत कहके उच्चराते हो, सो किस शास्त्रानुसार ?

(४७) ११ ग्यारवां छोटा व्रत कहके पोसह पारना कहते हो, सो किस शास्त्रानुसार ?

(४८) सामायिक करे तो नवमा व्रत कहके उच्चारना कहते हो, सो किस शास्त्रानुसार † ?

(४९) सामायिक करने वक्त एक दो मुहूर्त्त तथा दो चार घड़ीयां ऐसे कहना, किस शास्त्रानुसार ?

(५०) सामायिक पारने वक्त नवमा सामायिक व्रत कहके पारना, सो किस शास्त्रानुसार ?

(५१) व्रत करके पानी पीना होवे तो पोसह न करे, संवर करे, कहते हो, सो किस शास्त्रानुसार ?

---

* इस प्रश्नका मतलब यह है कि लगातार दो व्रत करेतो पांचव्रतका फलहोवे, तीन करे तो पच्चीस, चार करे तो सवासौ, पांच करे तो सवाछैसौ, छै व्रत करे तो सवा इकतीस सौ ३१२५ व्रतका फल होवे इत्यादि॥

† गुजरात मारवाड़ के कितनेक ढिढूंयों में यह रिवाज है॥

(५२) जब कोई दीक्षा लेने वाला होवे तब उसके नाम से पुस्तक तथा वस्त्र पात्र लेते हो, सो किस शास्त्रानुसार ?

(५३) जब आहार करतेहो तब पात्रोंके नीचे कपड़ा बिछाते हो, जिसका नाम मांडला कहते हो, सो किस शास्त्रानुसार ?

(५४) सामायिक जिस विधि से करते हो, सो किस० ?

(५५) सामायिक पारने का विधि किस शास्त्रानुसार ?

(५६) पोसह करने का विधि किस शास्त्रानुसार ?

(?७) पोसह पारने का विधि किस शास्त्रानुसार ?

(५८) दीक्षा देने का विधि किस शास्त्रानुसार ?

(५९) संथारा करने का विधि किस शास्त्रानुसार ?

(६०) श्रावक को व्रत देने का विधि किस शास्त्रानुसार ?

(६१) देवसी पड़िकमणेका विधि किस शास्त्रानुसार ?

(६२) राइ पड़िकमणेका विधि किस शास्त्रानुसार ?

(६३) पक्खी पड़िकमणेका विधि किस शास्त्रानुसार ?

(६४) चौमासी पड़िकमणेका विधि किस शास्त्रानुसार ?

(६५) संवच्छरी पड़िकमणे का विधि किस शास्त्रानुसार ?

(६६) चौमासे पहिले एक महीना आगे आना कहते हो, सो किस शास्त्रानुसार ?

(६७) सांझको पंचमी लग्यां संवच्छरी करनी, सो किस० ?

(६८) पूज्य पदवी देने का विधि किस शास्त्रानुसार ?

(६९) अनन्त चौबीसी पड़िकमणे में पढनी किस० ?

(७०) ढालां तथा चौपइयां बांचनीयां और थेइया २ मानना, सो किस शास्त्रानुसार ?

(७१) श्रावण दो होवें तो दजे श्रावणमें पर्यूषण करने किस० ?

(७२) भादों दो होवें तो पहिले भादों में पर्यूषण करने,किस०?

(७३) नावा में बैठके उतरे तेलेका दण्ड कहते हो,सो किस०?

(७४) लस्सी (छास) और शरबत (मीठापानी) पीकर एक दो मास तक रहना और कहना कि महिने दो महिने के व्रत किये है, सो किस शास्त्रानुसार ?

(७५) एक साधुको महिने से ज्यादा तपस्या कराके सब साधु एक ठिकाने कल्पसे ज्यादा रहते हो, सो किस शास्त्रानुसार ?

(७६) जब लोच करते हो, तब गृहस्थी को व्रत वगैरह कराके चढ़ावा लेते हो, सो लोच आप करना और दंड गृहस्थी को देना,सो किस शास्त्रानुसार ?

(७७) रजोहरण की डंडीपर कपडा लपेटना सो जीव रक्षा के निमित्त कहते हो, सो किस शास्त्रानुसार ?

(७८) सफेद नवीन कपड़े पहनने किस शास्त्रानुसार ?

(७९) हमेशां सूर्य उदय होवे तब आज्ञा लेते हो, और पच्चक्खाण कराते हो सो किस शास्त्रानुसार ?

(८०) बुढेको डंडारखना,और कोनहीं रखना कहतेहो,सो किस०?

(८१) मुहपत्ती बांधनेसे वायुकाय की रक्षा होती है ऐसे कहते हो सो किस शास्त्रानुसार ?

(८२) हाथमें लटकाके गौचरी लाते हो, सो किस शा०?

(८३) अन्यतीर्थी के वास्ते भोजन करा होवे उसको कहना कि तुमको शंका न होवे तो दे दो, सो किस शास्त्रानुसार ?

(८४) रात्रि को सूई रखे तो एक व्रतका दंड कहते हो, सो०?

(८५) सूई टूट जावे तो बेले (दो व्रत)का दंड कहतेहो, सोकिस०?

(८६)सूई खोई जावे तो तेले (३व्रत)का दंड कहतेहो, सो किस०?

(८७) पांच पदकी तथा आठ पदकी खमावणा कहते हो सो किस शास्त्रानुसार ?

(८८) शास्त्रोंमें साधुओंके समूहको कुल गण संघ कहे हैं और तुम टोला कहते हो सो किस शास्त्रानुसार ?

(८९) मुहपत्तीमें डोरा डालना और मुंहके साथ बांधना सो किस शास्त्रानुसार ?

(९०) ओघेकी डण्डी मर्यादा विनाकी लंबी रखनी सो किस० ?

(९१) वड़े बारां व्रत बैठके बोलने सो किस शास्त्रानुसार ?

(९२) छोटे बारां व्रत खड़े होके बोलने सो किस शास्त्रानुसार ?

(९३) जब नमुत्थुणं कहना तब पहिलें थइ थूइ तथा नमस्कार नमुत्थुणं कहना सो किस शास्त्रानुसार ?

(९४)नदी उतरके बेले तेलेका दंड लेना सो किस शास्त्रानुसार ?

(९५) रस्तेमें नदी आती होवे तो दो चार कोसके फेरमें जाना। परंतु नदी नहीं उतरनी सो किस शास्त्रानुसार ?

(९६) जंगल जाना तब खंडीये (कपडे के टुकडे) से गुदा पोछनी सो किस शास्त्रानुसार ?

(९७) सामायिकमें सोहागण स्त्री पंचरंगी मुहपत्ती बांधे, और विधवा एक रंगी बांधे, सो किस शास्त्रानुसार ?

(९८) दीवालीके दिनोंमें उत्तराध्ययन सुनाना सो किस० ?

(९९) भगवान् महावीर स्वामीने दीवालीके दिन उत्तराध्ययन कहा कहते हो सो किस शास्त्रानुसार ?.

(१०२) ओघेके ऊपर डोरेके तीन बंधन देने सो किस० ?

(१०१)ओघेकी दशियोंमें जंजीरी पावना सो किस० ?

(१०२)रजोहरण मोंढे(कंधे)पर डालके विहार करना सो किस० ?

(१०३) प्रथम बड़ा साधु पांचपदकी खमावना करे पीछे छोटे साधु करे सो किस शास्त्रानुसार ?

(१०४) कंडरीकने एक हजार वर्षतक बेले बेले पारणा किया कहते हो सो किस शास्त्रानुसार ?

(१०५) गोशालेके ११ लाख श्रावक कहतेहो सो किस०?

(१०६) साधु चोलीसमान और गृहस्थी दावन समान सो किस०?

(१०७) पडिकमणा आया पीछे बड़ी दीक्षा देनी सो किस०?

(१०८) सोला दिनकी अथवा तेरा दिनकी पाखी नहीं करनी सो किस शास्त्रानुसार ?

(१०९) पांचवें आरेके अंतमें चार अध्ययन दशवैकालिकके रहेंगे ऐसे कहते हो सो किस शास्त्रानुसार ?

(११०) पूनीया श्रावककी सामायिक कहते हो सो किस०

(१११) बेलेसे उपरांत पारिठावनीया आहार नहीं देना सो किस शास्त्रानुसार ?

(११२) सूत्रोंका त्याग कर देना, अपनी निश्राय नहीं रखने, सो किस शास्त्रानुसार ?

(११३) छोटी पूंजणी रखनी सो किस शास्त्रानुसार ?

(११४) पोथीपर रंगदार डोरा नहीं रखना कहते हो सो किस०?

(११५) आप चिट्ठी नहीं लिखनी, ग्रहस्थी से लिखाना सो किस शास्त्रानुसार ?

(११६) कपडे सज्जीसे नहीं धोने,पानीसे धोने सो किस०?

(११७) ध्यान पार कर मन चला, वचन चला, काया चली, कहते हो सो किस शास्त्रानसार ?

(११८) पशमका कपड़ा नहीं लेना सो किस शास्त्रानुसार *?

(११९) कई जगह श्रावक पडिकमणेमें श्रमणसूत्र कहते हैं सो किस शास्त्रानुसार, क्योंकि श्रमणसूत्र में तो साधुके पांच महाव्रत और गोचरी वगैरह की आलोयणा है ॥

(१२०) कई जगह ढूंढक श्रावक सामायिक बांधू ऐसे कहते हैं सो किस शास्त्रानुसार ?

(१२१) विहार करनेके बदले उठे कहते हो सो किस० ?

(१२२) एक जना लोगस्स पढलेवे और सबका काउसग्ग हो जावे सो किस शास्त्रानुसार ?

(१२३ पर्युषणापर्व में अंतगडदशांग सूत्र वांचना किस० ?।

(१२४) कई जगह कल्पसूत्र वांचते हो और मानते नहीं हो सो किस शास्त्रानुसार ?

(१२५) कई जगह पर्युषणामें गोशालेका अध्ययन वांचते हो सो किस शास्त्रानुसार ?

(१२६) कोई रिख मरजावे तो पुस्तक वगैरह गृहस्थोंकी तरह हिस्से करके वांटलेते हो सोकिस शास्त्रानुसार ? दृष्टान्त—लींबडी में देवजी रिखके बहुत झगडेके बाद चारां हिस्से में बांटा गया है॥

(१२७) धोलेरा तथा लींबड़ी वगैरह में पैसा वगैरह डालने के भंडारे बनाये हैं सो किस शास्त्रानुसार ?†

---

*लुधीआना नगरमें निकाले ढूंढियों के नूतन ५२ बोलों में लिखा है कि "पशम का कपड़ा दिनमें नहीं ओढना रातकी बात न्यारी" ॥

† पंजाब देश शहर हुशियारपुरमें संवत् १९४८ के माघ-महीने में पुस्तकों के भंडारेके नामसे रुपैये एकत्र किये थे जिसमें कितनेक बाहिर नगरको लोग पोष्टसे भेजने को कह गए थे, कितनेकने उसी वक्त दे दिये थे, अब सुनते हैं कि दे जाने वाले पश्चातापकरते हैं, और भेजने वालेमौनकर बैठे हैं और लेने वाले माई और भाईदोनोंको हजम कर गये हैं ॥

(१२८) धोलेरा में वाड़ी बनाई है सो० ?

ऊपर के प्रश्न ढूंढकोंके आचार वगैरह के संबंध में लिखे हैं इन पर विचार करने से प्रगटपणे मालूम होगा कि इनका आचार व्यवहार जैन शास्त्रोंसें विरुद्ध है।

सुज्ञजनो ! संवेगी जैन मुनि देश विदेशमें विचरते हैं, तिन के उपकरण और क्रिया वगैरह प्रायः एक सदृश ही होती है; और ढूंढकोंके मारवाड़, मेवाड़, पंजाब, मालवा, गुजरात, तथा काठियावाड़ वगैरह देशों में रहने वाले रिखों (ढूंढक साधुओं) के उपकरण, पोसह, प्रतिक्रमण वगैरहका विधि और क्रिया वगैरह प्रायःपृथक् पृथक् ही होते हैं,इससे सिद्ध होता है कि इनकी क्रिया वगैरह स्वकपोल कल्पित है, परन्तु शास्त्रानुसार नहीं है।

ढूंढक लोक मिथ्यात्वके उदयसे बत्तीस ही सूत्र मान के शेष सूत्र पंचांगी तथा धर्म धुरंधर पूर्वधारी पूर्वाचार्यों के बनाये ग्रन्थ प्रकरण वगैरह मानते नहीं हैं तो हम उन (ढूंढकों) को पूछते हैं कि नीचे लिखे अधिकारों को तुम मानते हो, और तुमारे माने बत्तीस सूत्रों के मूल पाठमें तो किसी भी ठिकाने नहीं है तो तुम किसके आधारसे यह अधिकार मानते हो ?

बत्तीस सूत्रोंके बाहिरके जो जो बोल ढूंढिये मानते हैं वे बोल यह हैं

(१) जंबू स्वामी की आठ स्त्री ॥

(२) पांचसौ सत्ताईस की दीक्षा।

(३) महावीर स्वामीके सत्ताईस भव।

(४) चंदनबालाने उड़दके बाकुले विहराए।

(५) चंदनबाला दधिवाहन राजाकी बेटी ।
(६) चंदनबाला धन्ना शेठ के घर रही ।
(७) चंदनबालाने छै महीनेका पारणा कराया ॥
(८) संगम देवताका उपसर्ग ।
(९) श्रीमहावीरस्वामी के कानमें कीले ठोके ।
(१०) श्रीमहावीरस्वामी ने(१४)चौमासे नालंदे के पाड़े कीए ।
(११) श्रीमहावीरस्वामीको पूरण शेठने उड़दके बाकुले दीने ।
(१२) श्रीमहावीरस्वामीसे गौतमने वाद किया ।
(१३) श्रीमहावीरस्वामीने चंडकोसीया समझाया ।
(१४) श्रीमहावीरस्वामीने मेरुपर्वत कंपाया ।
(१५) चेड़ा राजाकी सातों बेटी सती ।
(१६) अभयकुमारने महिल जलाए ।
(१७) श्रेणिक राजा चार बोल करे तो नरकमें न जावे ।
(१८) श्रेणिक के समझाने को अगड़बंब बनाया ॥
(१९) प्रसन्नचंद राजाका अधिकार ।
(२०) दीवाली के दिन अठारह देशके राजाओं ने पोसह किया ।
(२१) श्रीमहावीरस्वामीका कुल तप ।
(२२) श्रीमहावीरस्वामी का जमाली भाणजा ।
(२३) श्रीमहावीरस्वामीका जमाली जवाई ।
(२४) त्रिशला राणी चेड़ा राजा की बहिन ॥
(२५) करकंडु पदमावतीका बेटा ।
(२६) नमिराजा मदनरेखा और जुगबाहूका चरित्र ।
(२७) ब्रह्मदत्त चक्रवर्त्ति की कथा ।
(२८) सगर चक्रवर्त्ति की कथा ।

(२९) सुभूम चक्रवर्त्ति सातवां खंड साधने गया।
(३०) मेघरथ राजाने परेवड़ा (कबूतर) बचाया॥
(३१) श्रीनेमिनाथ राजेमतीके नव भव।
(३२) राजेमतीके बापका नाम उग्रसेन।
(३३) श्रीपार्श्वनाथस्वामीने नाग नागनी बचाये।
(३४) श्रीपार्श्वनाथस्वामीको कमठ ने उपसर्ग किया।
(३५) श्रीपार्श्वनाथ स्वामीके दश भव।
(३६) श्रीऋषभदेवके जीवने धन्नाशेठके भवमें घृतका दान दिया
(३७) श्रीढंढण मुनिका अधिकार।
(३८) श्रीबलभद्र मुनिने वनमें मृगको प्रतिबोध किया।
(३९) श्रीमेतारज मुनिका अधिकार।
(४०) सुभद्रा सतीका अधिकार।
(४१) सोलां सतियोंके नाम।
(४२) श्रीधन्ना शालिभद्रका अधिकार।
(४३) श्रीथूलभद्रका अधिकार।
(४४) निरमोही राजा का अधिकार।
(४५) गुणठाणा द्वार।
(४६) उदयाधिकार १२२ प्रकृतिका।
(४७) बंधाधिकार १२० प्रकृतिका।
(४८) सत्ताधिकार १४८ प्रकृतिका।
(४९) दश प्राण।
(५०) जीवके ५६३ भेदकी बडी गतागती।
(५१) बासठीये की रचना।
(५२) भृगुपुरोहितादिके पूर्व जन्मका वृत्तान्त।

(५३) भृगुपुरोहितने अपने बेटोंको बहकाया।
(५४) रामायणका अधिकार।
(५५) श्रीगौतमस्वामी देव शर्मा को प्रति बोधने वास्ते गये।
(५६) पैंतीस वाणी न्यारी न्यारी।
(५७) अरिहंतके बारां गुण।
(५८) आचार्य के छत्तीस गुण।
(५९) उपाध्याय के पच्चीस गुण।
(६०) सामायिकके ३२ दोष।
(६१) काउसग्गके १९ दोष।
(६२) श्रावकके २१ गुण।
(६३) लोक १४ रज्जु प्रमाण।
(६४) पहली नरक १ रज्जु की।
(६५) दूसरी नरकसे एक एक रज्जुकी वृद्धि।
(६६) सम्यक्त्वके ६७ बोल।
(६७) पाखी पडिकमणेमें बारह लोगस्स का काउसग्ग करना।
(६८) चौमासी पडिकमणेमें वीस लोगस्सका काउसग्ग करना।
(६९) संवच्छरीको ४० लोगस्सका काउसग्ग करना।
(७०) संवच्छरीको पैंठका तेला।
(७१) पातरे लाल काले धोले रंगने।
(७२) रोज पडिकमणेमें चार लोगस्सका काउसग्ग करना।
(७३) मरुदेवी माता हाथीके हौदे में मोक्ष गई।
(७४) ब्राह्मी सुंदरी कुमारी रही।
(७५) भरत बाहुबलका युद्ध।
(७६) दश चक्रवर्त्ति मोक्ष गये।

(७७) नंदिषेणका अधिकार ।

(७८) सनतकुमार चक्रवर्त्तिका रूप देखने को देवते आये।

(७९) छटे मईने लोच करनी।

(८०) भरतजीके दश लाख मण लूण नित्य लगे।

(८१) बाहुबलिको ब्राह्मी सुंदरीने कहा "वीरा मोरा गजथकी उतरो"

(८२) बाहुबलि १ वर्ष काउसग्ग रहा।

(८३) सगर चक्रवर्त्तिके साठ हजार बेटे।

(८४) भगीरथ गंगा लाया।

(८५) बारां चक्रवर्त्तिकी स्थिति।

(८६) बारांचक्रवर्त्तिकी अवगाहना।

(८७) नव वासुदेव बलदेवोंकी स्थिति।

(८८) नव वासुदेव बलदेवोंकी अवगाहना।

(८९) नव प्रतिवासुदेवोंकी स्थिति।

(९०) नव प्रतिवासुदेवोंकी अवगाहना।

(९१) नव नारद के नाम

(९२) चौवीस तीर्थंकरके अंतरे

(९३) एकादश रुद्र

(९४) स्कंदक मुनिकी खाल उतारी

(९५) स्कंदक मुनिके ४९९ चेले घाणी में पीडे

(९६) अरणिक मुनिका अधिकार

(९७) आषाढभूति मुनिका अधिकार

(९८) आषाढभूति नटणी वाले का अधिकार

(९९) सुदर्शनशेठ अभया राणीका अधिकार

(१००) आठदिन के पर्यूषणा करने

(१०१) चेलणा राणी छल करके श्रेणिकने व्याही।

(१०२) छप्पनकोड़ यादव।

(१०३) द्वारकामें ७२ कोड़ घर।

(१०४) द्वारकाके बाहिर ६० कोड़ घर।

(१०५) रेवतीने कोलापाक वहराया।

(१०६) श्रीपार्श्वनाथकी स्त्रीका नाम प्रभावती।

(१०७) श्रीमहावीरस्वामीकी बेटीकोढंक नामाश्रावकने समझाया

(१०८) भगवानकी जन्मराशि ऊपर दो हजार वर्षका भस्मग्रह

(१०९) भगवानके निर्वाणसे दीवाली चली।

(११०) हस्तपाल राजा वीनती करे चरम चौमासा यहां करो

(१११) शालिभद्रने पूर्व जन्ममें खीरका दान दिया

(११२) कयवन्ना कुमारकी कथा

(११३) अभयकुमारकी कथा

(११४) जंबूस्वामी की आठ स्त्रियोंके नाम

(११५) जंवूकुमारका पूर्वभवमें भवदेव नाम और स्त्रीका नागीला नाम

(११६) जंबूकुमारके माता पिताका नाम धारणी तथा ऋषभदत्त

(११७) अठारह नाते एक भवमें हुए तिसकी कथा॥

(११८) जंबूकुमारकी स्त्रियोंने आठ कथा कहीं॥

(११९) जंबूकुमारने आठ कथा कहीं।

(१२०) प्रभवा पांचसो चोरों सहित आया।

(१२१) जंबूकुमारके दायजे में ९९ क्रोड़ सुनैये आवे।

(१२२) सीता सतीको रावण हरके लेगया।

(२२३) रावणके भाइयोंका नाम कुंभकरण विभीषण था।

(१२४) रावणकी बहिनका नाम सुर्पनखा।
(१२५) रावणका बहनोई खरदूषण।
(१२६) रावणकी राणीका नाम मंदोदरी।
(१२७) रावणके पुत्रका नाम इंद्रजीत।
(१२८) रावणकी लंका सोनेकी।
(१२९) पवनंजय तथा अंजना सतीका पुत्र हनुमान और इनका चरित्र।
(१३०) लक्ष्मणजीकी माताका नाम सुमित्रा।
(१३१) सीताने धीज करी।
(१३२) जरासंधकी बेटी जीवजसा।
(१३३) जराविद्या नेमिनाथके चर्ण जलसे भाग गई।
(१३४) कुंतीका बेटा कर्ण।
(१३५) पांडवोंने जूएमें द्रौपदी हारी।
(१३६) वसुदेवकी ७२००० स्त्री।
(१३७) वसुदेव पूर्वभवमें नंदिषेण था और तिसने साधुकी वैयावच्च करी।
(१३८) हरकेशी मुनिका पूर्वभव।
(१३९) पांचवें आरेमें सौ सौ वर्षे ६ महीने आयु घटे।
(१४०) पांचवें आरेका जव (जौं) का आकार।
(१४१) पांचवें आरे लगते १२० वर्षका आयु।
(१४२) संपूर्ण पदवी द्वार।
(१४३) भरतजीकी आरीसे भवनमें अंगठी गिरी।
(१४४) भरतजीको देवताने साधुका भेष दिया।
(१४५) साधुका भेष देखकर राणीयां हसने लगी।

(१४६) श्रीऋषभदेवजीने पारणेमें १०८घड़े इक्षुरसके पीए ।
(१४७) मरुदेवी माताने ६५००० पीढ़ीयां देखीं ।
(१४८) मरुदेवी माताको रोते रोते आंखों में पड़ल आगए ।
(१४९) श्रीऋषभदेव तथा श्रेयांस कुमारका पूर्वभव ।
(१५०) भरतजीने पूर्वभवमें पांचसौ मुनियोंको आहार लाकर दिया ।
(१५१) बाहुबलिने पूर्वभवमें पांचसौ मुनियोंकी वैयावच्च करी
(१५२) श्रीऋषभदेवजीने पूर्वभवमें बैलोंको अंतराय दीना इस वास्ते एक वर्ष तक भूखे रहे ।
(१५३) प्रद्युम्न कुमार हरा गया ।
(१५४) शांव कुमारका चरित्र ।
(१५५) जरासंधके काली कुमारादि पांचसौ बेटे यादवोंके पीछे आए ॥
(१५६) यादवोंकी कुलदेवीने काली कुमार छला
(१५७) रावण चौथी नरकमें गया ।
(१५८) कुंभकर्ण तथा इंद्रजीत मोक्ष गए ।
(१५९) कौरव पांडवोंका युद्ध ।
(१६०) रहनेमिने ५०स्त्रियां त्यागी * ।
(१६१) चेड़ाराजाकी पुत्री चेलणाने जोगियोंको जूत्तीयां कतरके खिलाईं
(१६२) शालिभद्रकी ३२ स्त्रियां ।
(१६३) शालिभद्रकी माताका नाम भद्रा ।
(१६४) शालिभद्रके पिताका नाम गोभद्र

* कितनेक ५०० भी कहते है

(१६५) शालिभद्रकी बहिन सुभद्रा।
(१६६) शालिभद्रका बहनोई धन्ना।
(१६७) शालिभद्र रोज एक एक स्त्री छोड़ता था।
(१६८) धन्नाजीकी आठ स्त्रियां।
(१६९) धन्नाजीने एकही दिनमें आठ स्त्रियां त्यागी
(१७०) धन्ना और शालिभद्रने संथारा किया।
(१७१) संथारेकी जगह पर शालिभद्रकी माता गई।
(१७२) धन्नाजीने आंख नहीं टमकाई सो मोक्ष गया।
(१७३) शालिभद्रने आंख टमकाई सो मोक्ष नहीं गया।
(१७४) एवंती सुकुमालका चरित्र।
(१७५) विजय शेठ और विजया शेठाणीका अधिकार।
(१७६) प्रभुके निर्वाण बाद ९८० वर्षे सूत्र लिखे गये।
(१७७) बारां वरसी काल पड़ा।
(१७८) चंद्रगुप्तराजाको सोला स्वप्न आए।
(१७९) पांचवें आरेके छेहडे, दुप्पसह साधु।
(१८०) पांचवें आरेके छेहडे, फल्गुश्री साध्वी।
(१८१) पांचवें आरेके छेहडे, नागील श्रावक।
(१८२) पांचवें आरेके छेहडे, सत्यश्री श्राविका।
(१८३) एक आर्या (साध्वी) महाविदेहसे मुहपत्ती लेआई।
(१८४) थूलिभद्र वेश्याके घर रहा।
(१८५) सिंह गुफा वासी साधु नैपाल देशसे रत्नकंबल लाया।
(१८६) दिगंबर मत निकला।
(१८७) विष्णु कुमारका संबंध।
(१८८) सलाका, प्रतिसलाका, महासलाका और अनवस्थित

इन चार प्यालोंका अधिकार।

(१८९) वीस विहरमानका अधिकार।

(१९०) दश प्रकारका कल्प।

(१९१) जंबूस्वामीके निर्वाण पीछे दश बोल व्यवच्छेद हुए।

(१९२) गौतमस्वामी तथा अन्य गणधरोंका परिवार।

(१९३) अठावीस लब्धियोंके नाम तथा गुण।

(१९४) असझाइयोंका काल प्रमाण।

(१९५) बारह चक्री, नव बलदेव, नव वासुदेव, नव प्रतिवसु-देव,किस किस प्रभुके वक्तमें और किस किस प्रभु के अंतर में हुए॥

(१९६) सर्व नारकियों के पाथडे,अंतरे,अवगाहना तथा स्थिति

(१९७) सीझना द्वार बड़ा।

(१९८) नरककी ९९ पड़तला (प्रतर)।

(१९९) जंवूस्वामीकी आयु।

(२००) देवलोककी ६२ पड़तलां।

(२०१) पक्खीको पैंठका व्रत।

(२०२) लोच कराके सब साधुओंको वंदना करनी।

(२०३) दीक्षा देतां चोटी उखाड़ना।

(२०४) अधिक मास होवे तो पांच महीनेका चौमासा करना

अब बत्तीस सूत्रोंमें जो जो बोल कहे हैं और ढूंढक मानतें नहींहैं,तिनमेंसे थोड़े बोल निष्पक्ष पाती, न्याय वान,भगवान्की वाणी सत्य मानने वाले,और सुगति में जानेवाले भव्य जीवोंके ज्ञानके वास्ते लिखते हैं॥

(१) श्रीप्रश्नव्याकरण सूत्रके पांचवें संवरद्वारपमें साधुके उप-

(१४) श्रीनंदीसूत्रमें १४००० सूत्र कहे हैं, ढूंढिये नहीं मानते हैं, ऊपर लिखे मूजिब अधिकार सूत्रोंमें कहे हैं, इनकी भी ढूंढकोंको खबर नहीं मालूम देती है, तो फेर इनको शास्त्रोंके जाणकार कैसे मानीए ?

अब कितनेक अज्ञानी ढूंढक ऐसे कहते हैं, कि हमतो सूत्र मानते हैं निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि, टीका नहीं मनते हैं।

इसका उत्तर

(१) सूत्रमें कहा है कि:-"अत्थं भासेइ अरहा सुत्तं गुंत्थंति गणहरा निउणा"।

अर्थ-सूत्र तो गणधरोंके रचे हैं और अर्थ अरिहंतके कहे हैं तो सूत्र मानना, और अर्थ बताने वाली निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि, टीका नहीं माननी यह प्रत्यक्ष जिनाज्ञा विरुद्ध नहीं हैं ? जरूर है

(२) श्रीप्रश्नव्याकरण सूत्रमें कहा है कि व्याकरण पढे बिना सूत्र वांचे तिसको मृषा बोलने वाला जाणना सो पाठ यह है,

नामक्खाय निवाय उवसग्ग तद्धिय समास संधि पय हेउ जोगिय उणाइ किरिया विहाण धाउसर विभित्तिवन्नजुत्तं तिकालं दसविहं पि सच्चं जह भणियं तह कम्मुणा होइ दुवालस विहाय होइ भासा वयणंपियहोइ सोलसविहं एवं अरिहंत मणुन्नायं समिक्खियं संजएणं कालंमिय वत्तव्वं॥

अर्थ–नाम, आख्यात, निपात, उपसर्ग, तद्धित, समास, संधि पद, हेतु, यौगिक, उणादि, क्रिया, निधान, धातु, स्वर, विभक्ति, वर्ण युक्त, तीन काल, दश प्रकार का सत्य, बारां प्रकार की भाषा, सोलां प्रकारका वचन जाणना, इस प्रकार अरिहंतने आज्ञा करी है, ऐसे सम्यक् प्रकारसे जानके, बुद्धि द्वारा विचार के साधुने अवसर अनुसार बोलना ॥

इस प्रकार सूत्रमें कहा है, तोभी ढूंढीये व्याकरण पढे बिना सूत्र बांचते हैं, तो अब विचारणाचाहिये, कि पूर्वोक्त वस्तुओंका ज्ञान विना व्याकरण के पढे कदापि नहीं हो सक्ता है, और व्याकरण का पढना ढूंढीये अच्छा नही समझते हैं, तो पूर्वोक्त पाठका अनादर करनेसे जिनाज्ञाके उत्थापक इनको समझना चाहिये कि नहीं ? जरूर समझना चाहिये ॥

(३) श्रीसमवायांग सूत्र तथा नंदिसूत्रमें कहा है किः–

आयारेणं परित्ता वायणा संक्खिज्जा अणु ओगदारा संक्खिज्जा वेढा संक्खिज्जा सिलोगा संक्खिज्जाओ निज्जुत्तिओ संक्खिज्जाओ पडिवत्तिओ संक्खिज्जाओ संघयणीओ इत्यादि ॥

यद्यपि सूत्रोंमें कहा है तोभी ढूंढक निर्युक्ति प्रमुखको नहीं मानते हैं, इस वास्ते येह सूत्रोंके विराधक हैं ॥

(४) श्रीठाणांग सूत्रके तीसरे ठाणेके चौथे उद्देशेमें सूत्र

प्रत्यनीक,अर्थ प्रत्यनीक और तदुभयप्रत्यनीक एवं तीन प्रकार के प्रत्यनीक कहे हैं–यतः–

सुयं पडुच्च तओ पडिणीया पण्णत्ता सुत्त पडिणीए अत्थपडिणीए तदुभयपडिणीए ॥

ढूंढक इस प्रकार नहीं मानते हैं इसवास्ते येह जिन शासन के प्रत्यनीक हैं ॥

(५) श्रीभगवती सूत्रमें कहा है कि जो निर्युक्ति न माने, तिसको अर्थ प्रत्यनीक जाणना ढूंढक नहीं मानते हैं, इसवास्ते येह अर्थ प्रत्यनीक हैं ॥

(६) श्रीअनुयोग द्वार सूत्रमें दोप्रकारका अनुगम कहा है यतः–

सुत्ताणुगमे निज्जुत्ति अणुगमेय–तथा–निज्जुत्ति अणुगमेतिविहे पण्णत्ते उवघायनिज्जुत्ति अणुगमे इत्यादि–तथा–उद्देसे निद्देसेनिग्गमेखित्तकाल पुरिसेय । इत्यादिदोगाथहैं

–ढूंढिये पंचांगीको नहीं मानते हैं तो इससूत्र पाठका अर्थ क्या करेंगे ?

(७) श्रीभगवतीसूत्रके२५ में शतकके तीसरे उद्देशेमें कहाहै–किः–

सुत्तत्थो खलु पढमो बीओ निज्जुत्ति मिस्सिओ भणिओ । तइओय निरविसेसो । एस विही होइ अणु ओगो * ॥ १ ॥

---

*श्रीनंदिसूत्रमें भी यह पाठ है ॥

अर्थ-प्रथम निश्चय सूत्रार्थ देना, दूसरा निर्युक्ति सहित देना और तीसरा निर्विशेष (संपूर्ण) देना यह विधि अनुयोग अर्थात् अर्थ कथनकी है-इस सूत्र पाठसें तीसरे प्रकार की व्याख्यामें भाष्य चूर्णि और टीका इनका समावेश होता है और ढूंढिये नहीं मानते हैं तो पूर्वोक्त पाठको कैसे सत्य कर दिखावेंगे ?

(८) श्रीसूयगडांग सूत्रके २१ में अध्ययन में कहा है-कि:-

अहागडाइं भुजंति अणमणे सकम्मुणा
उवलित्ते वियाणिज्जा अणुवलित्तेति वा ॥१॥
एएहिं दोहिंठाणेहिं ववहारो न विज्जइ
एएहिं दोहिं ठाणेहिं अणायारं तु जाणए ॥२॥

ढूंढिये टीकाको नहीं मानते हैं तो इन दोनों गाथाओंका अर्थ क्या करेंगे ?

कितनेक कहते हैं कि टीकामें परस्पर विरोध है इस वास्ते हम नहीं मानते हैं इसका उत्तर-यदि शुद्ध परं परागत गुरुकी सेवा कर के तिनके समीप अध्ययन करें तो कोइ भी विरोध न पडे,और जेकर विरोधके कारण से ही नहीं मानना कहते हो, तो बत्तीस सूत्रों के मूल पाठमें भी परस्पर बहुत विरोध पडते हैं-जैसे कि:-

(१) श्रीजंबुद्वीप पन्नत्ति सूत्रमें ऋषभ कूटका विस्तार मूल में आठ योजन, मध्यमें छौ योजन, और ऊपर चार योजन कहा है, फेर उसीमें ही कहा है कि ऋषभ कूटका विस्तार मूलमें बारां योजन मध्यमें आठ योजन, और ऊपर चार योजन है बताइये एक ही सूत्र में दो बातें क्यों ?

(२) श्रीसमवायांग सूत्रमें श्रीमल्लिनाथ प्रभुके (५७००) मन पर्यवज्ञानी कहे हैं, और श्रीज्ञातासूत्रमें (८००) कहे हैं,यह क्या ?

(३) श्रीसमवयांग सूत्रमें श्रीमल्लिनाथजीके (५९००) अवधि ज्ञानी कहे हैं और श्रीज्ञातासूत्रमें (२०००) कहे हैं सो क्या ?

(४) श्रीज्ञातासूत्रमें श्रीमल्लिनाथजीकी दीक्षाके पीछे ६ मित्रों की दीक्षा लिखी है, और श्री ठाणांगसूत्रमें श्रीमल्लिनाथजी के साथ ही लिखी है सो क्या ?

(५) श्रीउत्तराध्ययन सूत्रके ३३ में अध्ययनमें वेदनीय कर्मकी जघन्य स्थिति अंतर्मुहूर्तकी कही है,और श्री पन्नवणा सूत्रके २३ में पद में बारां मुहूर्तकी कही हैं, सो क्या ?

इस तरह अनेक फरक हैं, जिनमें से अनुमान (९०) श्रीमद्यशोविजयजी कृत वीरस्तुतिरूप हुंडीके स्तवन के बालावबोध में पंडित श्रीपदमविजयजीने दिखलाए हैं, परंतु यह फरक तो अल्प बुद्धिवाले जीवोंके वास्ते हैं,क्योंकि कोई पाठांतर, कोई अपेक्षा,कोई उत्सर्ग, कोई अपवाद, कोई नयवाद, कोई विधिवाद, कोई चरितानुवाद, और कोई वाचनाभेद हैं,सो गीतार्थ ही जानते हैं,जिनमेंसे वहुतसे फरक तो निर्युक्ति,टीका प्रमुखसे मिटजाते हैं क्योंकि निर्युक्तिके कर्त्ता चतुर्दश पूर्वधर समुद्र सरिखी बुद्धिके धनी थे, ढूंडकों जैसे मूढमति नहीं थे ?

ऐसे पूर्वोक्त प्रकार केअनाचारी,भ्रष्ट, दुराचारी,कुलिंगीयोंको, जैनमतके, चतुर्विध संघके तथा देव,गुरु शास्त्रके निंदकों को, तथा दैत्य सरिखे रूप धारनेवाले स्वच्छंदमतियोंको,साधु माननेको और इनके धर्मकी उदय२ पूजाकहनी तथा लिखनी महामिथ्या दृष्टियों का काम है ?

और जो सूयगडांग सूत्रकी गाथा लिखके जेठेने अपनी परंपराय बांधी है सो असत्य है, क्योंकि इन गाथायोंमें सिद्धांतकारने ऐसा नहीं लिखा है कि पंचम कालमें मुहबंधे ढूंढक मेरी परंपरायमें होवेंगे, इसवास्ते इन गाथायोंके लिखनेसे ढूंढक पंथ सच्चा नहीं सिद्ध होता है, परंतु ढूंढक पंथ वेश्यापुत्र तुल्य है यह तो इस ग्रंथमें प्रथम ही सावित करचुके हैं ?

॥ इति प्रथम प्रश्नोत्तर खंडनम् ॥

(२) आर्यक्षेत्र की मर्यादा विषय।

दूसरे प्रश्नोत्तर में जेठा रिख लिखता है कि "तारा तंबोल में जैनी जैनमतके मंदिर मानते हैं" उसपर श्रीबृहत्कल्प सूत्रका पाठ लिखके आर्य्यक्षेत्रकी मर्यादा बताके पूर्वोक्त कथनका खंडन किया है; परन्तु जेठे का यह पूर्वोक्त लिखना महा मिथ्या है, क्योंकि जैनशास्त्रों में तारातंबोल में जैनमत, वा जैनमन्दिर लिखे नहीं हैं, और हम इस तरह मानते भी नहीं हैं यह तो जेठे के शिर में विनाही प्रयोजन खुजली उत्पन्न हुई है, इसवास्ते यह प्रश्नोत्तर ही झूठाहै और श्रीबृहत्कल्पसूत्रका पाठ तथा अर्थलिखाहै सो भी झूठा है, क्योंकि प्रथम तो जो पाठ लिखा है सो खोटों से भरा हुआ है, और उसका जो अर्थ लिखा है सो महा भ्रष्ट स्वकपोल कल्पित झूठा लिखा है,उसने लिखा है कि " दक्षिण में कोसंबी नगरी तक सो तो दक्षिण दिशा में समुद्र नजदीक है आगे समुद्र जगती तक है तो समुद्र का क्या कारण रहा," अब देखिये जेठेकी मूर्खता ! कि कोशांबी नगरी प्रयागके पास थी, जिस जगे अब

कोसम ग्राम बसता है और आवश्यक सूत्रमें लिखा है कि कोशांबी नगरी यमुना नदी के कनारे पर है जेठा मूढ़मति लिखता है कि कोशांबी दक्षिण देश में समुद्र के कनारे पर है, यह कोशांबी कौन से ढुंढक ने वसाइ है? इससें तो अंग्रेज सरकार की ही समझ ठीक है कि जिन्होंने भी कोशांबी प्रयाग के पास ही लिखी है; इस वास्ते जेठे का लिखना सर्व झूठ है शेष अर्थ भी इसी तरह झूठे हें ॥ इति ॥

(३) प्रतिमा की स्थिति का अधिकार।

तीसरे प्रश्नोत्तरमें जेठेने " प्रतिमा असंख्याते काल तक नहीं रह सक्ती है" तिस पर श्रीभगवती सूत्रका पाठ लिखा है, परन्तु तिस पाठ तथा अर्थ में बहुत खोट हैं ; तथा इस लेखसें मालूम होता है कि जेठा महा अज्ञानी था, और दही के भुलावे कपास खाता था क्योंकि हमतो प्रतिमा का असंख्याते काल तक रहना देव साहाय्यसे मानते हैं, और श्रीभगवती सूत्रमें जो स्थिति लिखी है सो देव साहाय्य बिना स्वाभाविक स्थिति कही है, और देव शक्ति तो अगाध है॥

और ढुंढियेभी कहते हैं कि चक्रवर्त्ती छी खंड साधके अहंकार युक्त होके ऋषभकूट पर्वत ऊपर नाम लिखनेके वास्ते जाता है, वहां तिसपर्वत पर बहुतसे नाम दृष्टिगोचर होनेसें अपना अहंकार उतर जाता है;पीछे एक नाम मिटाके अपना नाम लिखता है अब विचार करो,कि भरत चक्री हुआ तब अठारां कोटाकोटि सागरोपमका तो भरतक्षेत्र में धर्म विरह था, तो इतने असंख्याते काल पहिलें हुए चक्रवर्त्तियोंके कृत्रिम नाम असंख्याते काल तक रहे तो

देव सानिध्यसें श्रीशंखेश्वर पार्श्वनाथ की प्रतिमा तथा श्री अष्टापद तीर्थ वगैरह रहे इसमें कुछ भी असंभव नहीं है, तथा श्री जंबूद्वीप पन्नत्तिसूत्रमें प्रथम आरे भरतक्षेत्रका वर्णन नीचे मूजिब है, :—

तीसेणं समए भारहेवासे तत्थ २ बहवे वणराइओ पणणत्ताओ किणहाओ किणहाभासाओ जावमणोहराओ रयमत्तछप्पय कोरग भिंगारग कोडलग जीव जीवगणंदिमुहक-विल पिंगल लखग कारंडक चक्कवाय कलहंस सारस अणेग सउणगण मिहुण विरियाओ सद्दुणणत्तिए महुर सरणादि ताउ संपिंडिय णाणाविहा गूच्छवावी पुरकरिणी दीहियासु इत्यादि ॥

अर्थ—तिस समय भरतक्षेत्रमें तहां तहां वहुत बनराज हैं, कृष्ण कृष्णवर्णशोभावत् यावत् मनोहरहै मद करके रक्त ऐसे भ्रमर, कोरक भींगारक, कोडलक, जीव जीवक, नंदिमुख, कपिल,पिंगल, लखग, कारंडक,चक्रवाक, कलहंस,सारस अनेक पक्षियोंके मिथुन (जोडे) तिनों करके सहित है वृक्ष मधुर स्वर करके इकठे हुए हैं, नानाप्रकारके गुच्छे वौडीयां पुष्करिणी, दीर्घिका वगैरह में पक्षी विचरते हैं,

ऊपर लिखे सूत्रपाठमें प्रथम आरे भरतक्षेत्रमें वौडी, पुष्करिणी प्रमुखका वर्णन किया है तो विचारो कि वौडी किसने कराई ? शाश्वती तो है नहीं, क्योंकि सूत्रोंमें वे वौडीयां शाश्वती कही नहीं हैं

और तिस कालमें तो युगलिये नव कोटाकोटि सागरोपमसे भरत क्षेत्रमें थे, उनको तो यह बोडी प्रमुखका करना है नहीं, तो तिस सें पहिले की अर्थात् नव कोटाकोटी सागरोपम जितने असंख्यातेकाल की वे बोडीयां रही, तो श्रीशंखेश्वर पार्श्वनाथ की प्रतिमा तथा अष्टापद तीर्थोपरि श्रीजिनमंदिर देव सानिध्यसें असंख्याते कालतक रहे इसमें क्या आश्चर्य है ?

प्रश्नके अंतमें जेठा लिखता है कि "पृथिवीकायकी स्थिति तो बाइसहजार (२२०००) वर्षकी उत्कृष्टी है, और देवतायों की शक्ति कोई आयुष्य बधानेकी नहीं" इसतरां लिखनेसे लिखने वालेने निःकेवल अपनी मूर्खता दिखलाईहै क्योंकि प्रतिमा कोई पृथिवीकायके जीवयुक्त नहींहै, किंतु पृथ्वीकायका दल है तथा जेठा लिखता है कि "पहाडतो पृथ्वीके साथ लगे रहते हैं इसवास्ते अधिकवर्ष रहते हैं, परंतु उसमेंसे पत्थरका टुकडा अलग किया होवे तो बाइस हजारवर्ष उपरांत रहे नहीं" इस लेखसे तो वो पत्थर नाश होजावे अर्थात् पुदगल भी रहे नहीं ऐसा सिद्ध होता है, और इससे जेठे की श्रद्धा ऐसीमालूम होतीहै कि किसी ढूंढकका सौ (१००) वर्ष का आयुष्य होवे तो वो पूर्ण होए तिसका पुदगलभी स्वमेवही नाश हो जाताहै, उसको अग्निदाह करना ही नहीं पडता ! ऐसे अज्ञानी के लेखपर भरोसा रखना यह संसार भ्रमणका ही हेतु है ॥ इति ॥

इति तृतिया प्रश्नोतर खंडनम् ॥

(४) आधाकर्मी आहार विषयिक

चौथे प्रश्नोत्तरमें लिखा हैं कि "देवगुरु धर्मके वास्ते आधाकर्मी आहार देनेमें लाभ है" जेठे ढूंढकका यह लिखना निःकेवल झूठ है, क्योंकि हमारे जैनशास्त्रोंमें ऐसा एकांत किसीभी ठिकाने लिखा नहीं है,और न हम इसतरह मानते हैं॥

और जेठेने लिखा है कि "श्रीभगवती सूत्रके पांचमें शतक के छठे उद्देशेमें कहा है कि जीव हणे,झूठ बोले, साधु को अनेषणीय आहार देवे,तो अल्प आयुष्य बांधे" यह पाठ सत्य है, परंतु इस पाठमें जीव हणे, झूठ बोले, यह लिखा है,सो आहार निमित्त समझना,अर्थात् साधु निमित्त आहार बनातेजो हिंसा होवे सो हिंसा और साधु निमित्त बनाके अपने निमित्त कहना सो असत्य समझना,तथा इस ही उद्देशके इससें अगले आलावेमें लिखा है कि जीवदयापाले, असत्य न बोले,साधुको शुद्ध आहार देवे,तो दीर्घ आयुष्य बांधे,इस आलावेकी अपेक्षा अल्प आयुष्यभी शुभबांधे, अशुभ नहीं, क्योंकि इसही सूत्रके आठमें शतकके छठे उद्देशेमें लिखा है कि–

समणोवासगस्सणं भंते तहारूवं समणंवा माहणंवा अफासुएणं अणेसणिज्जेणं असण पाणं जावपडिलाभेमाणे किं कज्जइ?

गोयमा! बहुतरियासे निज्जरा कज्जइ अप्पतराएसे पावे कम्मे कज्जइ

अर्थ–हेभगवन्! तथारूप श्रमण माहनको अप्राशुक अनेषणीय अशन पान वगैरह देनेसे श्रमणोपासकको क्या होवे?

हे गौतम ! पूर्वोक्त काम करनेसे उसको बहुतर निर्जरा होवे, और अल्पतर पापकर्म होवे,अब विचारोकि साधु को अप्राशूक अनेषणीय आहारादि देनेसेअल्पतर अर्थात् बहुतही थोडा पाप,और बहुतर अर्थात् बहुतज्यादा निर्जरा होवे तो बहुनिर्जरावाला ऐसा अशुभ आयुष्य जीव कैसे बांधे ? कदापि न बांधे,परंतु ज्ञानावरणीय कर्म के प्रभावसे यह पाठ जेठेको दिखाई दिया मालूम नहीं होता है, क्योंकि उत्सूत्र प्ररूपक शिरोमणि, कुमतिसरदार जेठा इस प्रश्नोत्तर के अंतमें "मांसके भोगी और मांसके दाता, दोनोंही नरकगामी होते हैं, तैसेही आधाकर्मीका भी जान लेना" इस तरां लिखता है, परंतु पूर्वोक्त पाठमें तो अप्राशूक अनेषणीय दाताको बहुत निर्जरा करने वाला लिखा है,पृष्ट (१८) पंक्ति (१३) में जेठेने अप्राशक अनेषणीयका अर्थ आधाकर्मी लिखा है, परंतु आधाकर्मीतो अनेषणीय आहारके(४२)दूषणोंमेंसे एकदूषण है,क्याकरे ? अकल ठिकाने न होनेसे यह बात जेठेकी समझमें आई नहीं मालूम देती है ॥

तथा ढूंढिये पाट, पातरे, थानक वगैरह प्रायः हमेशां आधाकर्मी ही वरतते हैं; क्योंकि इनके थानक प्रायः रिखोंके वास्ते ही होते हैं, श्रावक उनमें रहते नहीं हैं, पाटभी रिखोंके वास्ते ही होते हैं, श्रावक उनपर सोते नहीं हैं और पातरे भी रिखोंके वास्ते ही बनानेमें आते हैं, क्योंकि श्रावक उनमें खाते नहीं हैं, तथा ढूंढिये अहीर,छींबे, कलाल, कुंभार, नाई, वगैरह जातियोंका प्रायः आहार ल्याके खाते हैं, सो भी दोष युक्त आहारका ही भक्षण करते हैं क्योंकि श्रावक लोकतो प्रसंगसे दूषणों के जाणकार प्रायः होते हैं, परंतु वे अज्ञानीतो इस बातको प्रायः स्वप्नमेंभी नहीं जानते हैं, इसवास्ते जेठे के दीये मांसके दृष्टांत मूजिब ढूंढियों के रिखोंको

और उनको आहार पानी वगैरह देने वालोंको अनंता संसार परि-भ्रमण करना पड़ेगा,हाय ! अफशोस ! विचारे अनजान लोक तुमारे जैसे कुपात्रको आहार पानी वगैरह देवें, और उसमें पुण्य समझें, उनकी स्थितितो उलटी अनंत संसार परिभ्रमणकी होती है, तो उससे तो वेहतर है कि उन रिखों को अपने घरमें आनेही न देवें कि जिससे अनंत संसार परिभ्रमण करना न पडे ॥

और श्रीसूयगडांगसूत्र के अध्ययन (२१) में तथा श्रीभगवती सूत्रके शतक (८) में रोगादि कारणमें आधाकर्मी आहारकी आज्ञा है, कारण विना नहीं, सो पाठ प्रथम लिख आए हैं, जेठे ढूंढकने यह पाठ क्यों नहीं देखा ? भाव नेत्र तो नहीं थे, परंतु क्या द्रव्य भी नहीं थे ?

तथा श्रीभगवती सूत्रमें कहा है कि रेवती श्राविकाने प्रभुका दाहज्वर मिटाने निमित्त बीजोरापाक कराया, और घोडे के वास्ते कोलापाक कराया,प्रभु केवलज्ञानके धनीने तो अपने वास्ते बनाया बीजोरापाक लेना निषेध किया और कोलापाक लानेकी सिंहा अणगारको आज्ञाकरी, वो ले आया, और प्रभुने रागद्वेष रहित पणे अंगीकार कर लिया,परंतु बीजोरापाक प्रभु निमित्त बनाके रेवती श्राविका भावे तो "करेमाणे करे" की अपेक्षा विहराय चुकी थी,तो तिसने कोई अल्प आयुष्य बांधा मालूम नहीं होता है, किंतु तीर्थं-कर गोत्र बांधा मालूम होता है *

इसवास्ते श्रीजैनधर्मकी स्याद्वादशैलि समझे विना एकांत पक्ष खेंचना यह सम्यग्दृष्टि जीवका लक्षण नहीं है ॥ इति ॥

---

*देखो ठाणांगसूत्र तथा समवायांग सूत्र ।

(५) मुहपत्ती बांधनेसे सन्मूच्छिम जीवकी हिंसा होती है इस बाबत ॥

पांचवें प्रश्नोत्तरमें जेठेने "वायुकायके जीवकी रक्षा वास्ते मुह पत्ती मुंहको बांधनी" ऐसे लिखा है, परंतु यह लिखना ठीक नहीं है क्योंकि मुंहसे निकलते भाषाके पुद्गलसे तो वायुकायके जीव हणे नहीं जाते हैं, और यदि मुखसे निकले पवनसे वे हणे जाते हैं, तो तुम ढूंढिये काष्टकी, पाषाणकी, या लोहेकी, चाहे कैसी मुहपत्ती बांधों, तोभी वायुकायके जीव हने विना रहेंगे नहीं, क्योंकि मुखका पवन बाहिर निकले विना रहता नहीं है; यदि मुखका पवन बाहिर न निकले, पीछा मुखमें ही जावे तो आदमी मरजावे, इस वास्ते यह निश्चय समझना, कि मुंहपत्ती जो है सो त्रस जीवकी यत्ना वास्ते है, सो जब कामपड़े तब मुखवस्त्रिका मुख आगे देके बोलना श्रीओघनिर्युक्तिमें कहा है यतः–

संपाइमरयरेणुपमज्जणट्ठावयंतिमुहपोत्तिं इत्यादि

अर्थ–संपातिम अर्थात् मांखी मछरादि त्रस जीवोंकी रक्षावास्ते जब बोले, तब मुखवस्त्रिका मुख आगे देकर बोले इत्यादि।

तथा जेठेने पूर्वोक्त अपने लेखको सिद्ध करने वास्ते श्रीभगवती सूत्रका पाठ तथा टीका लिखी है, सो निःकेवल झूठ है, क्योंकि श्रीभगवती सूत्रके पाठ तथा टीकामें वायुकायका नाम भी नहीं है, तो फेर जेठमल मृषावादीने वायुकायका नाम कहां से निकाला ? तथा यह अधिकार तो शक्रेंद्रका है, और तुम ढूंढिये तो देवताको अधर्मी मानतेहो, तो फेर उसकी निरवद्यभाषा धर्मरूप क्योंकर मानी?

जब देवताको तुमने धर्म करने वाला समझा, तो श्रीजिन प्रतिमा पूजनेसे देवताको मोक्षफल जो श्रीरायपसेणा सूत्रमें कहा है, सो क्यों नहीं मानते ?

तथा ढूंढकोंकी तरां मुहपत्ती सारादिन मुंहको बांध छोड़नी किसी भी जैनशास्त्रमें लिखी नहीं है, प्रथम तो सारादिन मुहपाटी बांधनी कुलिंग है, देखनेमें दैत्यका रूप दीखता है, गौयां, भैसां, बालक, स्त्रियां प्राय-देखके डरते हैं, कुत्ते भौंकते हैं, लोक मश्करी करते हैं, ऐसा वेढंगा भेष देखके कई हिंदु, मुसलमान, फिरंगी, बड़े बड़े बुद्धिमान् हैरान होते, और सोचते हैं कि यह क्या सांग है ? तात्पर्य जितनी जैनधर्मकी निंदा जगतमें लोक प्रायः आजकाल करते हैं, सो ढूंढकोंने मुखपाटी बांधके ही कराई है, तथा ढूंढकोंने मुंहके तो पाटीबांधी, परंतु नाक, कान, गुदा, इनके ऊपर पाटी क्यों नहीं बांधी? इन द्वाराभी तो वायुकायके जीव भाफसे मरते होंगे ? तथा शास्त्र में लिखा है कि जो स्त्री हिंसा करती होवे, तिसके हाथसे साधु भिक्षा लेवे नहीं; तब तो ढूंढकोंकी जिन श्राविकायों ने मुख, नाक, कान गुदाके पाटीबांधी होवे, तिनके ही हाथसे ढूंढियोंको भिक्षा लेनी चाहिये, क्योंकि ना बांधनेसे, ढूंढिये हिंसा मानते हैं और मुखसे निकले थूकके स्पर्शसे दो घड़ीबाद सन्मूर्च्छिम जीवकी उत्पत्ति शास्त्र में कही है, तबतो महा अज्ञानी ढूंढक मुहपत्ती बांधके असंख्याते सन्मूर्च्छिम जीवोंकी हिंसा करते हैं; सो प्रत्यक्ष है ॥

तथा श्रीआचारांगसूत्रके दूसरे श्रुतस्कंधके दूसरे अध्ययनके तीसरे उद्देशेमें कहा है यतः—

से भिक्खु वा भिक्खुणी वा ऊसास माणे वा

निसासमाणेवा कासमाणेवा छीयमाणे वा जंभायमाणेवा उड्डुवाएवा वायणिसग्गे वा करेमाणे वा पुव्वामेव आसयंवा पोसयं वा पाणिणा परिपेहित्ता ततो संजयामेव ओसासेज्जा जाव वायणिसग्गेवा करेज्जा ॥

भावार्थ–उच्छ्वास निश्वास लेते,खांसी लेते,छींक लेते,उवासी लेते,डकार लेते, हुए साधुने हस्त करके मुंह ढांकना–अब विचारो कि मुंह बांधा हुआ होवे तो ढांकना क्या ? तथा जेठेने लिखा है, कि "नाक ढांकना किसी भी जगह कहा नहीं है" तो मुख बांधनाभी कहां कहा है,सो बताओ ॥

तथा शास्त्रमें मुंहपत्ती और रजोहरण त्रस जीवकी यत्नावास्ते कहे हैं, और तुम तो मुहपत्ति वायुकायकी रक्षा वास्ते कहतेहो तो क्या रजोहरण वायुकायकी हिंसा वास्ते रखते हो ? क्योंकि रजोहरणतो प्रायः सारादिन वारंवार फिरानाही पड़ता हैं,प्रश्नके अंत में जेठा लिखता है कि "पुस्तककी आशातना टालने वास्ते मुंहपत्ती कहते हैं,वे झूठ कहते है" जेठेका यह पूर्वोक्त लिखना असत्य है, क्योंकि खुले मुंह बोलनेसे पुस्तकोंपर थूक पड़नेसे आशातना होती है, यह प्रत्यक्ष सिद्ध है * तथा जेठेने लिखा है कि "पु-

*पार्वती ढूंढकनी भी अपनी बनाई ज्ञानदीपिकामें लिखती है कि "पाठक लोकोंको विदित हो कि इस परमोपकारी ग्रंथको मुखके आगे वस्त्र रखकर अर्थात् मुख ढांपकर पढना चाहिये क्योंकि खुले मुखसे बोलनेमें सूक्ष्म जीवोंकी हिंसा होजाती है,और ग्रन्थ पर (पुस्तकपर) थूक पड़जाती है ॥

स्तक तो महावीरस्वामी के निर्वाणवाद लिखे गए हैं तो पहिलेतो कुछ पुस्तककी आशातना होनी नहीं थी" यह लिखना भी जेठेका अज्ञानयुक्त है,क्योंकि अठारां लिपि तोश्रीऋषभदेवके समयसे प्रगट हुई हुई है तथा तुमारे किस शास्त्रमें लिखा है कि महावीरके निर्वाण वाद अमुक संवतमें पुस्तक लिखे गए हैं, और इससे पहिले कोई भी पुस्तक लिखे हुए नहीं थे ? और यदि इससे पहिले बिलकुल लिखत ही नहीं थी,तो श्रीठाणांगसूत्रमें पांचप्रकारके पुस्तक लेनेकी साधुको मनाकरी है, सो क्या बात है ? जरा आंखें मीटके सोच करो ॥ ॥ इति ॥

(६) यात्रातीर्थ कहे हैं तद्विषयिक

छट्ठे प्रश्नोत्तरमें जेठेने भगवतीसूत्रमेंसे साधुकी यात्रा जो लिखी है,सो ठीक है;क्योंकि साधु जब शत्रुंजय गिरनार आदि तीर्थों की यात्रा करता है, तब तीर्थभूमिके देखने से तप, नियम, संयम स्वाध्याय, ध्यानादि अधिक वृद्धिमान् होते हैं, श्रीज्ञातासूत्र तथा अंतगडदशांगसूत्रमें कहा है कि–जाव सित्तुंजे सिद्धा–इस पाठ से सिद्ध है कि तीर्थ भूमिका शुभ धर्मका निमित्त है, नहीं तो क्या अन्य जगह मुनियोंको अनशन करनेके वास्ते नही मिलती थी ?

तथा श्रीआचारांगसूत्रकी निर्युक्तिमें घणे तीर्थोंकी यात्रा करनी लिखी है * और निर्युक्ति माननी श्रीसमवायांगसूत्र तथा श्रीनंदि

---

* श्रीआचारांग सूत्रकी निर्युक्तिका पाठ यह है यतः–
दंसण णाण चरित्ते तव वेरग्गेय होइ पसत्था ।
जाय जहा ताय तहा लक्खण वोच्छं सलक्खणओ ॥ ४६ ॥

सूत्रके मूलपाठमें कही है, परंतु ढूंढिये निर्युक्ति मानते नहीं हैं; इस वास्ते यह महा मिथ्या दृष्टि अनंत संसारी हैं॥

तित्थगराण भगवओ पवयण पावयणि अइसड्ढीणं
अहिगमण णमण दरिसण कित्तणओ पूयणा थुणणा॥ ४७॥
जम्माभिसेय णिक्खमण चरण णाणुप्पत्तीय णिव्वाणे।
दियलोय भवणमंदर णंदीसर भोम णगरेसु॥ ४८॥
अट्ठावय मुज्जंते गयग्गपए्य धम्मचक्केय।
पास रहावत्तणयं चमरुप्पायं च वंदामि॥ ४९॥
गणियं णिमित्त जुत्ती संदिट्ठी अवितह इमं णाणं।
इय एगंत मुवगया गुणपच्चइया इमे अत्था॥ ५०॥
गुणमाहप्पं इसिणाम कित्तणं सुरणरिंद पूयाय।
पोराण चेइयाणियइइ एसा दंसणे होइ॥ ५१॥

भावार्थ—भावना दो प्रकारकी है,प्रशस्त भावना और अप्रशस्त भावना; तिनमें प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान,मैथुन और परिग्रह तथा क्रोध,मान,माया और लोभ में अप्रशस्त भावना जाननी।

यदुक्तं—"पाणवह मुसावाए अदत्तमेहुण परिग्गहे चेव।
कोहेमाणे माया लोभेय हवंति अपसत्था॥"

और दर्शन,ज्ञान, चारित्र, तप, वैराग्यादिकमें प्रशस्तभावना जाननी तिनमें प्रथम दर्शनभावना जिससे दर्शन (सम्यक्त्व)कीशुद्धिहोती है,उसका वर्णन शास्त्रकार करतेहैं।

तित्थगराण भगवओ इत्यादि:—

तीर्थंकर भगवंत, प्रवचन, आचार्यादि युगप्रधान, अतिशय ऋद्धि मत—केवलज्ञानी मनःपर्यवज्ञानी, अवधिज्ञानी, चौदहपूर्वधारी, तथा आमर्षौषध्यादि ऋद्धिवाले, इनके सन्मुख जाना, नमस्कार करना, दर्शन करना गुणोत्कीर्त्तन करना, गंधादिकसे पूजन करना,स्तोत्रादिकसे स्तवन करना इत्यादि दर्शनभावनाजाननी;निरंतर इसदर्शनभावना के भावनेसे दर्शनशुद्धि होती है,तथा तीर्थंकरोंकी जन्मभूमिमें तथा निःक्रमण, दीक्षा, ज्ञानोत्पत्ति, और निर्वाण भूमिमें, तथा देवलोक भवनोंमें मंदिर (मेरुपर्वत) ऊपर, तथा

दो प्रकारके तीर्थ शास्त्रमें कहे हैं (१) जंगमतीर्थ और (२) स्थावरतीर्थ, जंगमतीर्थ साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका चतुर्विध संघको कहते हैं और स्थावरतीर्थ श्रीशत्रुंजय, गिरनार, आबु, अष्टापद, सम्मेदशिखर, मेरुपर्वत, मानुषोत्तरपर्वत, नंदीश्वरद्वीप, रुचकद्वीप वगैरह हैं, और तिनकी यात्रा जंघाचारण विद्याचारणमुनि भी करते हैं, और तीर्थयात्रा का फल श्रीमहा कल्पादि शास्त्रों में लिखा है; परंतु जिसके हृदयकी आंख नहोवे उसको कहांसे दिखे और कौन दिखलावे ?

जेठा लिखता है कि "पर्वत तो हट्टीसमान है वहां हुंडी शीकारने वाला कोई नहीं है" वाह ! इस लेखसे तो मालूम होता है कि अन्य मतावलंबी मिथ्यादृष्टियों की तरां जेठाभी अपने माने भगवान्को फल प्रदाता मानता होगा ! अन्यथा ऐसा लेख कदापि न

नंदीश्वर आदि द्वीपोंमें, पाताल भवनोंमें जो शाश्वते चैत्य हैं, तिनकों में वंदना करता हूं, तथा इसी तरह अष्टापद उज्जयतगिरि (शत्रुंजय तथा गिरनार) गजाग्रपद (दशार्णकूट) धर्मचक्र तक्षशिला नगरीमें, तथा अहिच्छत्रा नगरी जहां धरणेंद्रने श्रीपार्श्वनाथ स्वामी की महिमा करी थी, रथावर्त्त पर्वत जहां श्रीवज्रस्वामीने पादपोपगमन अनशन करा था, और जहां श्रीमहावीरस्वामीका शरण लेकर चमरेंद्रने उत्पतन करा था, इत्यादि स्थानोंमें यथा संभव अभिगमन, वंदन, पूजन, गुणोत्कीर्त्तनादि क्रिया करनेसे दर्शन शुद्धि होती है, तथा यह गणित विषयमें बीजगणितादि (गणितानुयोग) का पारगामी है, अष्टांग निमित्तका पारगामी है, दृष्टिपातोक्त नाना विध युक्ति द्रव्य संयोगका जानकार है, तथा इसको सम्यक्त्वसे देवता भी चलायमान नहीं कर सकते हैं, इसका ज्ञान यथार्थ है जैसे कथन करे हैं तैसे ही होता है इत्यादि प्रकार प्रावचनिक अर्थात् आचार्यादिक की प्रशंसा करनेसे दर्शन शुद्धि होती है इस तरह औरभी आचार्यादिके गुण महात्म्यके वर्णन करनेसे, तथा पूर्व महर्षियों के नामोत्कीर्तन करनेसे, तथा सुरनरेंद्रादिकी करी तिनकी पूजाका वर्णन करनेसे, तथा चिरंतन चैत्यांकी पूजा करनेसे इत्यादि पूर्वोक्त क्रिया करने वाले जीवकी तथा पूर्वोक्त क्रिया की वासनासे वासित है अंतःकरण जिसका उस प्राणी की सम्यक्त्व शुद्धि होती है यह प्रशस्त दर्शन (सम्यक्त्व) संबंधी भावना जाननी, इति,

लिखता, जैनशास्त्रमें तो लिखा है किजहां जहां तीर्थंकरोंके जन्मादि कल्पाणक हुए हैं सो सो भूमि श्रावकको प्रणाम शुद्धिका कारण होनेसे फरसनी चाहिये–यदुक्तं ॥

निक्खामण नाण निव्वाण जम्मभूमीओ वंदइ जिणाणं। णय वसइ साहुजणविरहियम्मिदेसे बहुगुणेवि॥ २३५ ॥

अर्थ–श्रावक जिनेश्वर संबंधी दीक्षा, ज्ञान, निर्वाण और जन्म कल्याणक की भूमिको वंदन करे; तथा साधुके विहार रहित देशमें अन्य बहुत गुणोके होए भी वसे नहीं, यह गाथा श्रीमहावीरस्वामी के हस्त दीक्षित शिष्य श्रीधर्मदास गणिकी कही हुई है॥

और जेठा लिखता है कि "संघ काढ़नेमें कुछ लाभ नहीं है, और संघ काढ़ना किसी जगह कहा नहीं है" इसके उत्तरमें लिखते हैं, कि जैनशास्त्रोंमें तो संघ निकालना बहुत ठिकाने कहा है, पूर्वकालमें श्रीभरतचक्रवर्त्ति, डंडवीर्यराजा, सगरचक्रवर्त्ति, श्रीशांति जिनपुत्र चक्रायुध, रामचन्द्रतथा पांडवों वगैरहने और पांचवें आरे में भी जावडशाह, कुमारपाल, वस्तुपाल, तेजपाल, बाहडमंत्रि वगैरहने बडे आडबरसे संघनिकालके तीर्थयात्रा करी हैं, और सो कल्याणकारिणी शुद्धपरंपरा अब तक प्रवर्त्तती है, तीर्थयात्रा निमित्त संघ निकलते हैं, श्रीजैनशासनकी प्रभावना होती है, शीशा आंखों वालेको उपयोगी होता है, आंधेको नहीं, पालणपुर और पाली में दहीं, छाछ, खा पीके तपस्वी नामधारन करन हारे ऋखोंकीयात्रा करने वास्ते हजारों आदमी चौमासेके दिनो में हरि सबजी निगोद वगैरहके अनंते जीवोंकी हानि करते गये थे, और अद्यापि पर्यंत

घणे ठिकाने लोक ढूंढिये और ढूंढनियोंके दर्शनार्थ जाते हैं, तथा लींबडीमें देवजी रिखको वंदना करने वास्ते कच्छ मांडवीसे जानकी बाई संघ निकालके आई थी, उस वक्त उसको छैणे बजाते हुए, गुलाल उडाते हुए, बडी धूमधामसे सामेला करके नगरमें ले आये थे, इस तरां कितने ही ढूंढीये श्रावक संघ निकाल निकालके जाते हैं, इसमें तो तुम पुण्य मानते हो कि जिसकी गतिका भी कुछ ठिकाना नहीं (प्रायः तो दुर्गति ही होनी चाहिये) और श्रीवीतराग भगवान् तो निश्चय मोक्ष ही गये हैं जिनका अधिकार शास्त्रों में ठिकाने ठिकाने है,तिनका संघ वगैरह निकालके यात्रा करनेमें पाप कहते हो सो तुमारा पाप कर्मका ही उदय मालूम होता है ॥ इति ॥

(७) श्री शत्रुंजय शाश्वता है।

सातवें प्रश्नोत्तरमें जेठेने लिखा है कि "जम्बूद्वीप पन्नत्ति सूत्र में कहा है कि भरतखंड में वैताढ्य पर्वत और गंगा सिन्धु नदी वर्जके सर्व छट्टे आरे में विरला जायेंगे, तो शत्रुंजय तीर्थ शाश्वता किस तरां रहेगा" इस का उत्तर–यह पाठ तो उपलक्षण मात्र है क्योंकि गंगासिन्धुके कुंड, ऋषभकूट पर्वत, (७२) बिल,गंगासिंधु की वेदिका प्रमुख रहेंगे तैसे शत्रुंजय भी रहेगा !

जेठा लिखता है कि "कि पर्वत नहीं रहेगा, ऋषभकूट रहेगा वाहरे दिनमें आंधे जेठे ! सूत्र में तो लिखा है उस भकूड पव्वय अर्थात् ऋषभकूट पर्वत ! और जेठालिखता है,ऋषभकूट पर्वत नहीं ! वाह ! धन्य है ढुंढियो तुमारी बुद्धि को !

और जो जेठेने लिखा है " शाश्वती वस्तु घटती बढ़ती नहीं है सो भी झूठ है क्योंकि गंगा सिंधुका पाट, भरतखंडकी भूमिका,

गंगा सिंधु की वेदिका,लवण समुद्रका जल वगैरह बधते घटते हैं; परन्तु शाश्वते हैं तैसे शत्रुंजय भी शाश्वता है जरा मिथ्यात्व की नींद छोड़के जागो और देखो!

फेर जेठा लिखता है " सब जगह सिद्ध हुए हैं तो शत्रुंजय की क्या विशेषता है " इसका उत्तरः-

तुम गुरु के चरणों की रज मस्तक को लगाते हो और सर्व जगत् की धूड़ (राख) तुमारे गुरु के चरणों करके रज होके लग चुकी है,इस वास्ते तुमारे मानने मूजिब सर्व धूड़ खाक टोकरी भर भरके तुमको अपने शिरमें डालनी चाहिये; क्यों नहीं डालते हो? हमतो जिस जगह सिद्ध हुए हैं, और जिनके नाम ठाम जानते हैं, तिनको तीर्थ रूप मानते हैं,और श्रीशत्रुंजय ऊपर सिद्धहोनेकेअधिकार श्री ज्ञातासूत्र तथा अन्तगड दशांग सूत्रादि अनेक जैन शास्त्रोंमें हैं॥

तथा श्रीज्ञातासूत्रमें गिरनार और सम्मेदशिखर ऊपर सिद्ध होने के अधिकार हैं। इस चौबीसीके बीस तीर्थंकर सम्मेदशिखर ऊपर मोक्ष पद को प्राप्त हुए हैं; श्रीजम्बूद्वीपपन्नत्तिमें श्रीऋषभ देवजी का अष्टापद ऊपर सिद्ध होनेका अधिकार है; श्री वासुपूज्य स्वामी चंपानगरीमें और श्रीमहावीरस्वामी पावापुरीमें मोक्ष पधारे हैं इत्यादि सर्व भूमिका को हम तीर्थ रूप मानते हैं।

तथा तुमभी जिस जगह जो मुनि सिद्ध हुए होवें उनके नाम वगैरहका कथन बताओ,* हम उस जगहको तीर्थ रूप मानेंगे क्योंकि हमतो तीर्थ मानते हैं,नहीं माननेवालेको मिथ्यात्व लगता है इति॥

---

*विचारे कहांसे बतावें जिन चौबीस तीर्थंकरो को मानते हैं, उनका ही सार वर्णन इनके माने बत्तीस शास्त्रोंमें नहीं है तो अन्यका तो क्याही कहना?

(८) कयबलिकम्मा शब्दका अर्थ

आठवें प्रश्नोत्तरमें जेठमूढमति ने 'कयबलिकम्मा' शब्द जो देवपूजाका वाचक है, तिसकाअर्थ फिरानेके वास्ते जैसे कोई आदमी समुद्रमेंगिरे बाद निकलनेको हाथ पैर मारता है तैसे निष्फल हाथ पैर मारे हैं और अनजान जीवोंको अपने फंदेमें फंसानेके वास्ते विना प्रयोजन सूत्रोंके पाठ लिख लिख कर कागज काले किये है, तथापि इससे इसकी कुछभी सिद्धि होती नहीं है, क्योंकि तिसके लिखे (११) प्रश्नोंके उत्तर नीचे मूजिब हैं।

प्रथम प्रश्नमें लिखा है कि "भद्रा सार्थवाही ने बौडीमें किस की प्रतिमा पूजी" इसका उत्तर–बौडी में ताक आला गोख वगैरहमें अन्यदेव की मूर्त्तियां होंगी, तिसकी पूजा करी है, और बाहिर निकल के नाग भूतादि की पूजा करी है; इस में कुछ भी विरोध नहीं है, आज कालभी अनेक बौडियों में ताक वगैरहमें अन्यदेवों की मूर्त्तियां वगैरह होती हैं तथा वैश्नव ब्राह्मण वगैरह अन्य मतावलंबी स्नान करके उसी ठिकाने खडे होके अंजलि करके देवको जल अर्पण करते हैं, सो बात प्रसिद्ध है, और यह भी बलि कर्म है

दूसरे तीसरे प्रश्नमें लिखा है कि "अरिहंतने किसकी प्रतिमा पूजी" अरे मूढ ढुंढको! नेत्र खोल के देखोगे, तो दिखेगा, कि सूत्रों में अरिहंत ने सिद्धको नमस्कार किये का अधिकार है, और गृहस्थावस्था में तीर्थंकर सिद्ध की प्रतिमा पूजते हैं इसी तरह यहां भी श्रीमल्लिनाथ स्वामीने कय बलिकम्मा शब्द करके सिद्ध की प्रतिमा की पूजा करी है।

४–५–६–७ में प्रश्न के अधिकार में लिखा है कि "मज्जन घर में किसकी पूजा करी" इसका उत्तर–जहां मज्जन घर है तहां

ही देव गृह है, और तिसमें रही देवकी प्रतिमा पूजी है, देहरासर (मंदिर) दो प्रकार के होते हैं, घर देहरासर (घर चैत्यालय) और बड़ा मंदिर, तिनमें द्रोपदी ने प्रथम घर चैत्यालय की पूजा करके पीछे बडे मन्दिर में विशेष रीति से सतारां प्रकार की पूजा करी है आज काल भी यही रीति प्रचलित है बहुत श्रावक अपने घर देहरासर में पूजा करके पीछे बडे मंदिर में बन्दना पूजा करने को जाते हैं द्रोपदी के अधिकार में वस्त्र पहिनने की बाबत जो पीछे से लिखाहै सो बड़े मंदिरमें जाने योग्य विशेष सुन्दर वस्त्र पहिने हैं परन्तु "प्रथम वस्त्र पहिने ही नहीं थे, नग्नपणे ही स्नान करने को बैठी थी" ऐसा जेठेने कल्पना करके सिद्ध किया है, सो ऐसी महा विवेकवती राजपुत्री को संभवेही नहीं है, यह रूढी तो प्रायः आज कलकी निर्विकेकिनी स्त्रियों में विशेषतः है॥ *

८ में प्रश्न में लिखा है कि "लकड़हारेने किसकी पूजा करी" इसका उत्तर साफ है कि बनमें अपना माननीय जो देव होगा तिस की उसने पूजा करी॥

९ में प्रश्न में लिखा है कि "केशी गणधर ने परदेशी राजा को स्नान करके बलिकर्म्म करके देव पूजा करने को जावे, इसतरह कहा, तो तहां प्रथम किसकीपूजा करी" इसका उत्तर–प्रथम अपने घर में (जैसे बहुते वैश्नव लोक अबभी देव सेवा रखते हैं तैसे)

* कई विवेकवती स्त्रिया आज कालभी नग्नपणें स्नान नहीं करतीहैं, विशेष करके पूजा करनेवाली स्त्रियों को तो इस बात का प्रायः जरूर ही ख्याल रखना पड़ता है; और श्राद्ध विधि विवेक विलासादि शास्त्रोंमे नग्नपणे स्नान करनेकी मनाई भी लिखी है दक्षिणी लोकों की औरतें प्रायः कपडे सहित ही स्नान करती हैं, अधिक बेपड्द होना तो प्रायः पंजाब देश में ही मालूम होता है॥

रखे हुए देव की पूजा करके पीछे बाहिर निकलकर बडे देवस्थान में पूजा करने का कहा है ॥

१०–११ में प्रश्न में " कोणिक राजा और भरत चक्रवर्त्ति के अधिकार में कयबलिकम्मा शब्द नहीं है तो उन्होंने देव पूजा क्यों नहीं करी " इसका उत्तर–अरे देवानां प्रियो ! इतना तो समझो कि वन्दना निमित्त जाने की अति उत्सुकता के लिये उन्होंने देव पूजा उस वक्त न करी होवे तो उस में क्या आश्चर्य्य है ? तथा इस तुमारे कथन सेही कयबलिकम्मा शब्दका अर्थ देव पूजा सिद्ध होता है, क्योंकि कयबलिकम्मा शब्द का अर्थ तुम ढुंढिये ' पाणी की कुरलियां करी ' ऐसा करते हो तो क्या स्नान करते हुए उन्हों ने कुरलियां न करी होगी? नहीं कुरलियांतो जरूर करी होंगी,परन्तु पूर्वोक्त कारणसें देव पूजा न करी होगी; इसीवास्ते पूर्वोक्त अधिकार में कयबलिकम्मा शब्द शास्त्रकार ने नहीं लिखा है इसतरह हरएक प्रश्नमें कयबलिकम्मा शब्द का अर्थ देव पूजा ऐसा सिद्ध होता है तथा टीका में और प्राचीन लिखत के टव्वे में भी कयबलिकम्मा शब्द का अर्थ देव पूजा ही लिखा है तथा अन्यदृष्टान्तों से भी यही अर्थ सिद्ध होता है–यथाः–

(१) श्रीरायपसेणी सूत्र में सूर्याभ के अधिकार में जब सूर्याभ देवता पूजा करके पीछे हटा तब बचा हुआ पूजाका सामान उस ने बलिपीठ ऊपर रक्खा, ऐसा सूत्र पाठ है, तिस जगह भी पूजो पहार की पीठि का, ऐसा अर्थ होता है ॥

(२)यति प्रति क्रमणसूत्र(पगाम सिष्झाय)में' मंडि पाहुडियाए बलि पाहुडियाए'य हपाठहै,इसका अर्थ भिखारियोंके वास्ते चपप्पणी वगैरहमें रखा हुआ अन्न साधुको नहींलेना;तथा देवकेआगे धराया

नैवेद्य, अथवा तिसके निमित्त निकला अन्न साधु को नहीं लेना ऐसे होता है ॥

(३) नाममाला वगैरह कोश ग्रन्थों में भी बलि शब्द का अर्थ पूजा कहा है—यतः—

पूजार्हणा सपर्याचौं उपहार बली समौ।

(४) निशीथ चूर्णि तथा आवश्यक निर्युक्ति में भी बलि शब्द से देव के आगे धरने का नैवेद्य कहा है ॥

(५) वास्तुक शास्त्रमें तथा ज्योतिःशास्त्र में भी घर देवता की पूजा करके भूतबलि देके घरमें प्रवेश करना कहा है—यतः—

गृह प्रवेशं सुविनीत वेषः
सौम्येयने वासर पूर्व भागे।
कुर्याद् विधा आलय देवतार्चा
कल्याणधिभूत बलिक्रियां च।१।

इस पाठ में भी बलि शब्द करके नैवेद्य पूजा होती है।

ऊपर लिखे दृष्टान्तों से 'कयबलिकम्मा' (कृत बलि कर्मा) शब्द का अर्थ देव पूजा सिद्ध होता है, परन्तु मूर्ख शिरोमणि जेठे ने कय बलिकम्मा अर्थात् 'पाणी की कुरलियां करी' ऐसा अर्थ करा है सो महा मिथ्या है, तथा कय को उय मंगल अर्थात् "कौतुक-मंगलीक पाणी की अंजलि भरके कुरलियां करी" ऐसा अर्थ करा है, सो भी महा मिथ्या है, किसी भी कोष में ऐसा अर्थ करा नहीं है और न कोई पंडित ऐसा अर्थ करताभी है परन्तु महा मिथ्या दृष्टि ढूंढिये व्याकरण, कोष, काव्य, अलंकार, न्याय, प्रमुखके ज्ञान बिना अर्थ का अनर्थ करके उत्सूत्र प्ररूप के अनन्त संसारी होते हैं॥

तथा नाममाला में कौयेको बलिभुक् कहा है, तो क्या ढूंढियों के कहने मूजिब कौये पाणी की कुरलियां खाते हैं ? या पीठी खाते हैं ? नहीं, ऐसे नहीं है, किन्तु वे देवके आगे धरी हुई वस्तुके खाने वाले हैं; इस वास्ते इसका नाम बलिभुक् है, और इस से भी बलिकम्मा शब्द का अर्थ देव पूजा सिद्ध होता है ॥

तथा जेठेने द्रौपदीके अधिकार में लिखा है कि "स्नान करके पीछे वटणा मला" देखो कितनी मूर्खता ! स्नान करके वटणा मलना, यह तो उचित ही नहीं, ऐसी कल्पना तो अज्ञ बालक भी नहीं कर सकता है; परन्तु जैसे कोई आदमी एक वार झूठ बोलता है, उसको तिस झूठके लोपने वास्ते बारंबार झूठ बोलना पड़ता है, तैसेकेवल एक अर्थ के फिराने वास्ते जैसे मनमे आया तैसे लिखते हुए जेठे ने संसार वधनेका जरासा भी डर नहीं रखा ॥

तथा जेठेने लिखा है कि "सम्यग् दृष्टि अन्य देवको पूजते हैं" सो मिथ्या है, क्योंकि अन्य देवको श्रावक पूजते नहीं हैं, मिथ्या दृष्टि पूजते हैं; और जिस श्रावकने गुरुमहाराजके मुखसे षट् आगार सहित सम्यक्त्व उच्चारण करा होवे, सो शासन देवता प्रमुख सम्यग् दृष्टिकी भक्ति करता है, वोहसाधर्मीके संबंध करके करता है; और वो अन्य देव नहीं कहाता है, और जो कोई सम्यग्दृष्टि किसी अन्य देवको मानेगा तो वो यातो सम्यग्दृष्टिही देवता होगा. या कोई उपद्रव करने वाला देवता होगा, और उस उपद्रव करने वाले देवता निमित्त श्रावककों 'देवाभिओगेणं' यह आगार है, परंतु तुंगीयानगरीके श्रावकोंको क्या कष्ट आनपड़ाथा, जो उन्होंने अन्य देवकी पूजाकरी ? जेठा कहता है "गोत्र देवताकी पूजाकरी" सो यह किस पाठका अर्थ है ? गोत्र देवताकी किसी भी श्रावकने

पूजाकरी होवे,तो सूत्रपाठ दिखाओ,मतलब यह कि जेठेने तुंगीया-नगरीके श्रावकने घरके देवकी पूजाकरी, इस विषयमें जो कुतर्क करी हैं, सो सर्व तिस की मूढ़ता की निशानी है; तुंगीया नगरी के श्रावकने अपने घरमें रहे जिनभवनमें अरिहंतदेवकी पूजाकरी यह तो निःसंदेह है, श्रीउपासक दशांगसूत्रमें आनंद श्रावकके अधिकारमें जैसापाठ है, तैसा सर्व श्रावकोके वास्ते जानलेना इस वास्ते मूढमति जेठेने जो गोत्रदेवताकी पूजा तो श्रावकके वास्ते सिद्धकरी, और जिनप्रतिमाकी पूजा निषेधकरी, सो उसका महा मिथ्यादृष्टि पणेका चिन्ह है। ॥ इति ॥

---

(९) सिद्धायतन शब्दका अर्थ

नवमें प्रश्नोत्तर में जेठे मूढ़मति ने 'सिद्धायतन' शब्दके अर्थको फिराने वास्ते अनेक युक्तियां करी हैं, परंतु वे सर्व झूठी हैं क्योंकि 'सिद्धायतन' यह गुण निष्पन्न नाम है, सिद्ध कहिये शाश्वती अरिहंतकी प्रतिमा, तिसका आयतन कहिये घर,सो सिद्धायतन। यह इसकायथार्थ अर्थ है जेठेने सिद्धायतन नामगुण निष्पन्न नहीं है, इसकी सिद्धिके वास्ते ऋषभदत्त और संजति राजा प्रमुख का दृष्टांत दिया है, किजैसे यह नामगुण निष्पन्नमालूम नहीं होते हैं, तैसे सिद्धायतन भी गुण निष्पन्न नाम नहीं है, यह उसका लिखना असत्य है, क्योंकि शास्त्रकारोने सिद्धांतों में वस्तु निरूपण जो नाम कहे हैं वे सर्व नाम गुण निष्पन्न ही हैं, यथाः—

(१) अरिहंत, (२) सिद्ध, (३) आचार्य, (४) उपाध्याय, (५) साधु, (६) सामायिकचारित्र, (७) छेदोपस्थापनीयचारित्र, (८) परिहार विशुद्धिचारित्र, (९) सूक्ष्मसंपरायचारित्र, (१०) यथाख्यातचा-

रित्र, (११) जंबूद्वीप, (१२) लवणसमुद्र, (१३) धातुकीखंड, (१४) कालोदधिसमुद्र,(१५) घृतवरसमुद्र, (१६) दधिवरसमुद्र,(१७) क्षीर वरसमुद्र, (१८) वारुणीसमुद्र,(१९)श्रावकके बारहव्रत, (३१) श्राव- ककी एकादश पडिमा, (४२) एकादश अंगके नाम, (५३) बारह उपांगके नाम, (६५) चुल्लहिमवान् पर्वत, (६६) महाहिमवान् पर्वत, (६७) रूपीपर्वत, (६८) निषधपर्वत, (६९) नीलवंत पर्वत, (७०) नम्मुक्कार सहियं इत्यादि दश पच्चक्खाण,(८०)छेलेश्या,(८६) आठ कर्म इत्यादि वस्तुयोंके नाम जैसे गुणनिष्पन्न हैं, तैसे सिद्धायतन भी गुणनिष्पन्न ही नाम है ॥

दूसरे लौकिक नाम कथा निरूपणमें ऋषभदत्त,संजतिराजा प्रमुख कहे हैं, वे गुणनिष्पन्न होवे भी और ना भीहोवे, क्योंकि वे नाम तो तिन के माता पिताके स्थापन किये हुए होते है ॥

महापुरुष बाबत लिखा है, सो वे महा पापके करनेवाले थे, इसवास्ते महा पुरुष कहे हैं,तिसमें कुछ बाधा नहीं है,परंतु इसबात का ज्ञान जो जैनशैलिके जानकार होवें और अपेक्षा को समझने वाले होवें,उनको होता है, जेठमल सरिखे मृषावादी और स्वमति कल्पनासे लिखने वालेको नही होता है ॥

अनुत्तर विमान के नाम गुण निष्पन्न ही हैं, और तिनका द्वीप समुद्रके नामों साथ संबंध होनेका कोई कारण नहीं है।

श्रीअनुयोग द्वार सूत्रमें कहे गुणनिष्पन्न नामके भेदमें सिद्धा- यतन नामका समावेश होता है।

भरतादि विजयों में मागध१ वरदाम२ और प्रभास ३ यह तीर्थ कहे हैं, सो तो लौकिक तीर्थ हैं; इनको माननेका सम्यग् दृष्टि को क्या कारण है ? अरे मूढ ढूंढीयो ! कुछ तो विचार करो कि जसे

अन्यदर्शनियों में आचार्य, उपाध्याय, साधु, ब्रह्मचारी आदि कहते हैं; और शास्त्रकारभी तिनको साधु कहकर बुलाता है, तो क्या इस से वे जैन दर्शन के साधु कहावेंगे? और वे वंदना करने योग्य होंगे? नहीं, तैसे ही मागधादि तीर्थ जान लेने।

श्रीऋषभानन, (१) चंद्रानन, (२) वारिषेण, (३) और वर्द्धमान (४) यह चार ही नाम शाश्वती जिन प्रतिमाके हैं, क्योंकि प्रत्येक चौवीसी में पंदरह क्षेत्रोंमें मिलाके यह चार नाम जरूर ही पाये जाते हैं, इस वास्ते इस बाबत का जेठेका लिखाण झूठा है।

तथा जेठा लिखता है कि "द्रोपदीके मंदिरमें प्रतिमा थी तो तिसको सिद्धायतन न कहा और जिन घर क्यों कहा" उत्तर–अरे मूढ! जिनगृह तो अरिहंत आश्री नाम है, और सिद्धायतन सिद्ध आश्री नाम है;* इसमें बाधा क्या है?

फिर जेठा लिखता है "धर्मास्ति अधर्मास्ति वगैरह अनादि सिद्धके नाम कहकर तिनको सिद्ध ठहराके तुम वंदना क्यों नहीं करते हो" उत्तर–सिद्धायतन शब्दके अर्थ के साथ इनका कुछ भी संबंध नहीं है तो तिनको वंदना क्यों कर होवे? कदापि ना होवे; परंतु तुम ढूंढिये 'नमो सिद्धाणं' कहतेहो तबतो तुम धर्मास्ति अधर्मास्तिकोही नमस्कारकरतेहोगे! ऐसा तुमारेमत मूजिब सिद्ध होताहै।

फिर जेठेने लिखाहै कि "अनंते कालकी स्थिति है, और स्वयं सिद्ध, विनाकरेहुए, इस वास्तेसिद्धायतन कहिये" उत्तर-अनादिकाल की स्थितिवाली और स्वयंसिद्ध ऐसी तो अनेक वस्तु यथा विमान, नरकावास, पर्वत, द्वीप, समुद्र, क्षेत्र, इनको तो किसी जगह भी सिद्धायतन नहीं कहा है; इस वास्ते जेठेका लिखा अर्थ सर्वथा ही

*शाश्वती अशाश्वती जिन प्रतिमा आश्री नामांतर भेद है परंतु प्रयोजन एकही है।

झूठा है। यदि ढूंढीये हृदय चक्षुको खोल के देखेंगे, तो मालूम हो जावेगा, कि केवल शाश्वती जिन प्रतिमाके भुवनको ही शास्त्रोंमें सिद्धायतन कहा हुआ है,और इसीवास्ते सिद्धायतन शब्दका जो अर्थ टीकाकारोंने करा है,सो सत्य है;और जेठेकाकरा अर्थ सत्य नहीहै।

और जेठे ने लिखा है कि "वैताढ्य पर्वतके ऊपरके नव कूटों में सेएकको ही सिद्धायतन कहाहै,शेष आठको नहीं;तिसका कारण यह है कि शेष कूट देव देवी अधिष्ठित हैं,इस लिये उनकेनाम और और कहे हैं;और इस कूट ऊपर कुछ नहीं है, इसवास्ते इसको सिद्धायतन कूट कहा है"इसका उत्तर–अरे कुमतिओ! बताओ तो सही, कहां कहाहै कि दूसरे कूटों पर देव देवियां हैं, और इसकूट ऊपर नहीं हैं, मनःकल्पित बातें बनाके असत्य स्थापन करना चाहते हो सोतो कभी भी होना नहीं है, परंतु ऊपरके लेखसे तो सिद्धायतन नामको पुष्टि मिलती है। क्योंकि जिस कूटके ऊपर सिद्धायतन होता है, उसही कूटको शास्त्रकारने सिद्धायतन कूट कहा है॥

तथा श्रीजीवाभिगम सूत्रमें सिद्धायतनका विस्तार पूर्वक अधिकार है,सो जरा ध्यान लगाके वांचोंगे तो स्पष्ट मालूम हो जावेगा कि उसमें(१०८) शाश्वते जिनबिंबहै, और अन्यभी छत्रधार चामरधार वगैरह बहुत देवताओं की मूर्त्तियां हैं इससें यही निश्चित होता है कि सिद्ध प्रतिमाके भुवनको ही सिद्धायतन कहा है॥

तथा कई ढूंढीये सिद्धायतनमें शाश्वती जिन प्रतिमा मानते हैं, और तिसको सिद्धायतन ही कहते हैं, परंतु जेठेने तो इसबात का भी सर्वथा निषेध करा है, इससे यही मालूम होताहै कि बेशक जेठमल्ल महा भारी कर्मी था॥ इति॥

(१०) गौतम स्वामी अष्टापद पर चढे.

दशवें प्रश्नमें जेठा कुमति लिखता है कि 'भगवंतने गौतमस्वामीको कहाकि तुम अष्टापद की यात्रा करो तो तुमको केवलज्ञान होवे" यह लिखना महा असत्य है शास्त्रोंमें तो ऐसे लिखा है कि "एकदा श्रीगौतमस्वामी भगवंतसे जुदे किसी स्थान में गये थे, वहां से जब भगवंतके पास आए तब देवता परस्पर बातें करते थे कि भगवंतने आज व्याख्यानावसरे ऐसे कहा है कि जो भूचर अपनी लब्धिसे श्रीअष्टापद पर्वतकी यात्राकरे सो उसी भवमें मुक्तिगामी होवे,यह बात सुनकर श्रीगौतमस्वामीने अष्टापद जानेकी भगवंतके पास आज्ञा मांगी तब भगवंतने बहुत लाभका कारण जानकर आज्ञा दीनी; जब यात्रा करके तापसोंको प्रतिबोध के भगवंतके समीप आए तब(१५००)तापसोंको केवलज्ञान प्राप्त हुआ जानकर श्रीगौतमस्वामी उदास हुए कि मुझे केवलज्ञान कब होगा ? तब श्रीभगवंतने द्रुमपत्रिका अध्ययन तथा श्रीभगवतीसूत्र में चिरसंसिट्ठोसि मे गोयमा इत्यादि पाठोक्त कहके गौतमको स्वस्थ किया" यह अधिकार श्रीआवश्यक, उत्तराध्ययन निर्युक्ति, तथा भगवतीवृत्तिमें कहा है,परंतु भाग्यहीन जेठेको कैसे दिखे?कौएका स्वभावही होता है कि द्राक्षाको छोड़कर गंदकीमें चुंजदेनी, जेठा लिखताहै कि"भगवंतने पांच महाव्रतऔर पंचवीस भावनारूप धर्म श्रेणिक,कोणिक, शालिभद्र,प्रमुखके आगे कहाहै परंतु जिनमंदिर बनवानेका उपदेश दिया नहीं है" यह लिखना मूर्खताईका है क्या इनके पाससे मंदिर बनवानेका इनकोहीउपदेश देना भगवंतकाकोई जरूरी काम था ? तथापि उनके बनाये जिनमंदिरोंका अधिकार सूत्रोंमें बहुत जगह है तथा हि :-

श्रीआवश्यकसूत्र तथा योगशास्त्र में श्रेणिकराजाके बनाये जिनमंदिरोंका अधिकार है ॥

श्रीमहानिशीथ सूत्रमें कहा है कि जिनमंदिर बनवाने वाला बारवें देवलोक तक जाता है यतः—

काउंपिजिणाययणेहिं, मंडियसव्वमेयणीवट्टं ।
दाणाइचउक्केण, सड्ढोगच्छेज्जअच्चुयंजावनपरं ॥

भावार्थ—जिनमंदिरों करके पृथिवी पट्टको मंडित करके और दानादिक चारों (दान, शील, तप, भावना) करके श्रावक अच्युत (बारवें) देवलोक तक जावे इससे उपरांत न जावे ॥

श्रीआवश्यकसूत्रमें वग्गुर श्रावकने श्रीपुरिमतालनगरमें श्री मल्लिनाथजीका जिनमंदिर बनवाके घने परिवार सहित जिनपूजा करी ऐसा अधिकार है, यतः—

तत्तोयपुरिमताले, वग्गुरईसाणअच्चएपडिमं ।
मल्लिजिणाययणपडिमा, अन्नाएवंसिबहुगोट्ठी ।

श्रीआवश्यकमें भरतचक्रवर्त्तिके बनवाये जिनमंदिरका अधिकार है, यतः—

थुभसयभाउगाणं, चौबीसं चेव जिणघरेकासि ।
सव्वजिणाणंपडिमा । वणपमाणेहिंनियएहिं

भावार्थ—एकसौ भाईके एकसौ स्तूप और चौवीस तीर्थंकरके जिनमदिर उसमें सर्व तीर्थंकरकी प्रतिमा अपने अपने वर्ण तथा शरीरके प्रमाणसहित भरतचक्रवर्त्तिने श्रीअष्टापदपर्वत ऊपरबनाई

इसी सूत्रमें उदायनराजाकी प्रभावती राणीने जिनमंदिर बनवाया और नाटकादि जिनपूजा करी ऐसा अधिकार है, यतः-

अंतेउरचेइयघरं कारियं पभावतिएण्हातातिसंझं अच्चेइ अन्नयादेवीणच्चइरायावीणंवायेइ

भावार्थ-प्रभावती राणीने अंतेउर (अपने रहने के महल) में चैत्यघर अर्थात् जिन मंदिर कराया, प्रभावती राणी स्नान करके प्रभात मध्यान्ह सायंकाल तीन वक्त तिस मंदिर में अर्चा (पूजा) करती है एकदा राणी नृत्य करती है और राजा आपवीणा बजाताहै,

प्रथमानुयोगमें अनेक श्रावक श्राविकायोंका जिन मंदिर बनाने का तथा पूजा करनेका अधिकार है ॥

इसी सूत्र में द्वारिका नगरी में श्रीजिनप्रतिमा पूजने का भी अधिकार है ॥

शालिभद्रके घरमें जिनमंदिर तथा रत्नोंकी प्रतिमा थीं और वो मंदिर शालिभद्रके पिताने अनेक द्वारों करके सुशोभित देव विमान करके सदृश्य बनाया था ॥

"यतः शालिभद्र चरित्रे"

प्रधानानेकधारत्न मयार्हद्बिम्बहेतवे॥
देवालयं च चक्रेसौ निजचैत्य गृहोपमम्॥ ५०

ऊपर मुजिब कथन है तो क्या जेठमूढमतिने शालिभद्रका चरित्र नहीं देखा होगा ? कदापि ढूंढिये कहें कि हम शालिभद्र का चरित्र नहीं मानते हैं * तो बत्तीससूत्रमें शालिभद्रका अधिकार

* बहुतसे ढूंढियशालिभद्रका अधिकार मानते हैं ।

परिवार कहा है सो तो दीक्षा लेने समयका है परंतु ग्रंथोंमें५०००० केवली की कुल संपदा गौतमस्वामीकी वर्णन करी है।

(११) नमुत्थुणंके पीछले पाठकी बाबत

जेठा मूढ़मति ११ वें प्रश्नमें लिखता है कि "नमुत्थुणंमें अधिक पद डाले हैं" यह लिखना जेठमलका असत्य है, क्योंकि हमने नमुत्थुणं में कोईभी पद वधाया नहीं है, नमुत्थुणंतो भाव अरिहंत विद्यमानों की स्तुति है, और जो अंतकी गाथा है सो द्रव्य अरिहंतकी स्तुति है ढूंढिये द्रव्य अरिहंतको वंदना करनी निषेध करते हैं, क्योंकि ढूंढिये उनको असंजती समझते हैं इससे मालूम होता है कि ढूंढियोंकी बुद्धिही भ्रष्ट होई हुई है॥

श्रीनंदिसूत्रमें २६ आचार्य जिनमें २४ स्वर्गमें देवता हुए हैं तिनको नमस्कार करा है तो नमुत्थुणंके पिछले पाठमें क्या मिथ्या है? जेकर ढूंढिये इसीकारणसे नंदिसूत्रको भी झूठा कहेंगे, तो जरूर उन्होंने मिथ्यात्व रूप मदिरापान करके झूठा बकवाद करना शुरु किया है ऐसे मालूम होवेगा, तथा अपने गुरु को जो मर गए हैं और जो जिनाज्ञाके उत्थापकनिन्हवहोनेसे हमारी समझ मूजिब तो नरक तिर्यंचादि गतिमें गये होवेंगे, मूर्ख ढूंढिये उन को देवगति में गये समझ कर उनको वंदना क्यों करते हैं? क्योंकि वो तो असंयती, अविरति, अपच्चक्खाणी हैं! कदापि ढूंढिये कहें, कि हमतो गुरुपदको नमस्कार करते हैं, तो अरे मूढो हमारी वंदना भी तो तीर्थंकर पदको ही है और सो सत्य है तथा इसीसे द्रव्य निक्षेपाभी वंदनीक सिद्ध होता है॥

श्रीआवश्यकसूत्रमें नमुत्थुणंकी पिछली गाथा सहित पाठ

है,और उसी मूजिब हम कहते हैं,इसवास्ते जेठे कुमतिका लिखना बिलकुल मिथ्या है ॥

प्रश्नके अंतनें नमुत्थुणं इंद्रने कहा है,इस बाबत निःप्रयोजन लेख लिखकर जेठमलने अपनी मूढ़ता जाहिर करी है।

प्रश्नके अंतर्गत द्रव्य निक्षेपा बंदनीक नहीं है ऐसे जेठेने ठहराया है सो प्रत्यक्ष मिथ्या है क्योंकि श्रीठाणांगसूत्रके चौथे ठाणेमें चार प्रकारके सत्य कहे हैं यतः–

चउव्विहे सच्चे पण्णत्ते। नामसच्चे, ठवणा सच्चे, दव्वसच्चे, भावसच्चे॥

अर्थ–चार प्रकारके सत्य कहे हैं (१) नामसत्य, (२)स्थापना सत्य, (३) द्रव्यसत्य (४) भावसत्य इस सूत्रपाठमें द्रव्य सत्यकहा है और इससे द्रव्य निक्षेपा सत्य है ऐसे सिद्ध होता है ॥

जेठमल ने लिखा है कि "आगामी काल के तीर्थंकर अब तक अविरति,अपच्चक्खाणी चारों गतिमें होवें उनको बंदना कैसे होवे ?"उत्तर–श्रीऋभदेवजीके समयमें आवश्यक में चउविसत्था था या नहीं ? जेकर था,तो उसमें अन्य २३ तीर्थंकरोंको श्रीऋषभ देव जी के समय के साधु श्रावक नमस्कार करते थे कि नहीं ? ढूंढियों के कथनानुसार तो वो अन्य २३ तीर्थंकर बंदनीक नहीं हैं ऐसे ठहरता है और श्रीऋभदेव भगवान् के समय के साधु श्रावक तो चउविसत्था कहते थे और होनेवाले २३ तीर्थंकरोंको नमस्कार करतेथे,यह प्रत्यक्ष है, इसवास्ते अरे मूढढूंढियों! शास्त्रकारने द्रव्य निक्षेपा बंदनीक कहा है इस में कोई शक नहीं है, जरा अंतर्ध्यान हो कर विचार करो और कुमत जाल को तजो ॥

(१२) चारों निक्षेपे अरिहंत बंदनीक हैं इसबाबत।

बारवें प्रश्न की आदि में मूढ़मति जेठमलने अरिहंत आचार्य और धर्म के ऊपर चार निक्षेपे उतारे हैं सो बिलकुल झूठे हैं,इस तरह शास्त्रों में किसी जगह भी नहीं उतारे हैं ॥

और नाम अरिहंतकी बाबत "ऋषभोशांतो नेमोवीरो" इत्यादि नाम लिख कर जेठे ने श्रीवीतराग भगवंत की महा अवज्ञा करी है सो उसकी महा मूढ़ताकी निशानी है और इसी वास्ते हमने उसको मूढ़मति का उपनाम दिया है ॥

जेठमल ने लिखा है, कि "केवल भाव निक्षेपा ही बंदनीक है अन्य तीन निक्षेपे बंदनीक नहीं हैं" परंतु यह उसका लिखना सिद्धांतों से विपरीत है,क्योंकि सिद्धांतों में चारों निक्षेपे बंदनीक कहे हैं ॥

जेठे निन्हवने लिखा है कि "तीर्थंकरोंके जो नाम हैं सो नाम संज्ञा हैं नाम निक्षेपा नहीं,नाम निक्षेपा तो तीर्थंकरोंके नाम जिस अन्य वस्तु में होवे सो है" इस लेख से यही निश्चय होता है कि जेठे अज्ञानीको जैनशास्त्रोंकाकिंचितमात्रभी बोध नहीं था,क्योंकि श्रीअनुयोगद्वार सूत्र में कहा है, यतः :-

जत्थ य जं जाणिज्जा, निक्खेवं निक्खिवे निरवसेसं। जत्थविय न जाणिज्जा, चउक्कयं निक्खिवे तत्थ ॥ ९ ॥

अर्थ–जहां जिस वस्तुमें जितने निक्षेपे जाने वहां उस वस्तु में उतने निक्षेपे करे, और जिस वस्तुमें अधिक निक्षेपे नहीं जाने

सके तो उस वस्तुमें चार निक्षेपे तो अवश्य करे ॥

अब विचारना चाहिये कि शास्त्रकारने तो वस्तुमें नाम निक्षेपा कहा है और जेठा मूढ़मति लिखता है कि जो वस्तुका नाम है सो नाम निक्षेपा नहीं, नाम संज्ञा है तो इस मंदमतिको इतनी भी समझ नहीं थी, कि नाम संज्ञामें और नाम निक्षेपेमें कुछ फरक नहीं है ?

श्रीठाणांगसूत्रके चौथे ठाणेमें नाम, स्थापना, द्रव्य और भाव यह चार प्रकारकी सत्यभाषा कही है जो प्रथम लिख आए है

श्रीठाणांगसूत्रके दशमें ठाणेमें दशप्रकारका सत्य कहा हैं तथा श्री पन्नवणाजीसूत्रके भाषा पदमें भी दश प्रकारके सत्य कहे हैं उनमें स्थापना सच्च कहा है सो पाठ यह है ॥

दसविहे सच्चे पणत्ते तंजहा । जणवय सम्मय ठवणा, नामे रूवे पडुच्चसच्चेय। वव हार भाव जोए, दसमे उवम्मसच्चेय।

अर्थ—दश प्रकारके सत्य कहे हैं, तद्यथा । (१) जनपदसत्य (२) सम्मतसत्य, (३) स्थापनासत्य, (४) नामसत्य, (५) रूपसत्य, (६) प्रतीतसत्य, (७) व्यवहारसत्य, (८) भावसत्य, (९) योगसत्य और (१०) दशमा उपमासत्य ॥

इस सूत्र पाठसे स्थापना निक्षेपा सत्य और वंदनीक ठहरता है, तथा चौवीस जिनकी स्तवना रूप लोगस्सका पाठ उच्चारण करते हुए ऋषभादि चौवीस प्रभुके नाम प्रकटपने कहते हैं और वंदना करते हैं सो वंदना नाम निक्षेपेको है। तथा श्रीऋषभदेव भगवान्के समयमें चौवीसत्था पढ़ते हुए अन्य २३ जिनको द्रव्य

निक्षेपे बंदना होती थी और काउसग्ग करनेके आलावेमें "अरिहंत चेइयाणं करेमिकाउसग्गं बंदणवत्तिआए" इत्यादि पाठ पढते हुए स्थापना निक्षेपा बंदनीक सिद्ध होता है और यह पाठ श्रीआवश्यक सूत्रमें है, इस आलावे को ढूंढिये नहीं मानते हैं इस वास्ते उन के मस्तक पर आज्ञाभंग रूप वज्रदंडका प्रहार होता है ॥

श्रीभगवतीसूत्रकी आदिमें श्रीगणधरदेवने ब्राह्मी लीपिको नमस्कार करा है सो जैसे ज्ञानका स्थापना निक्षेपा बंदनीक है तैसे हीश्रीतीर्थंकरदेवका स्थापना निक्षेपाभी बंदना करने योग्य है ॥

तथा अरे ढूंढियो ! तुम जब "लोगस्सउज्जोअगरे" पढते हो तब "अरिहंते कित्तइस्सं"इस पाठसे चौवीस अरिहंतकी कीर्त्तना करतेहो,सो चौवीस अरिहंत तो इस वर्तमानकालमें नहीं हैं तो तुम बंदना किनको करतेहो ? जेकर तुम कहोगे कि जो चौवीस प्रभु मोक्षमें हैं उनकी हम कीर्त्तना करते हैं तो वो अरिहंत तो अब सिद्ध हैं इसवास्ते " सिद्धे कित्तइस्सं " कहना चाहिये परंतु तुम ऐसे कहते नहीं हो ? कदापि कहोगे कि अतीत कालमें जो चौवीस तीर्थंकर थे उनको बंदना करते हैं तो अतीत कालमें जो वस्तु हो गई सो द्रव्य निक्षेपा है और द्रव्यनिक्षेपे को तो तुम बंदनीक नहीं मानते हो, तो बतावो तुम बंदना किनको करते हो ? जेकर ऐसे कहोगे कि अतीत कालमें जैसे अरिहंत थे तैसे अपने मनमें कल्पना करके बंदना करते है, तो वो स्थापना निक्षेपा है, और स्थापना निक्षेपा तो तुम मानते नहीं हो, तो बताओ तुम बंदना किन को करते हो ? अंतमें इस बात का तात्पर्य इतना ही है कि ढूंढिये अज्ञानके उदयसेऔर द्वेष बुद्धिसे भाव निक्षेपे बिना अन्य निक्षेपे बंदनीक नहीं मानते हैं परंतु उनको बंदना जरूर करनी पड़ती है

और स्थापना अरिहंत को आनंद श्रावक, अंबड तापस, महासती द्रौपदी, वग्गुर श्रावक, तथा प्रभावती प्रमुख अनेक श्रावक श्राविकाओं ने ओर श्रीगौतमस्वामी, जंघाचारण, विद्याचारणादि अनेक मुनियोंने, तथा सूर्याभ, विजयादि अनेक देवताओंने वंदना करी है,तिनके अधिकार सूत्रोंमें प्रसिद्ध हैं, श्रीमहानिशीथ सूत्रमें कहा है कि साधु प्रतिमाको वंदना न करे तो प्रायश्चित्त आवे,इस तरह नाम और स्थापना वंदनीक हैं,तो द्रव्य और भाव वंदनीक हैं इस में क्या आश्चर्य !

जेठमल लिखता है कि "कृष्ण तथा श्रेणिक को आगामी चौवीसी में तीर्थंकर होनेका जब भगवंतने कहा तब तिनको द्रव्य जिन जानकर किसीने वंदना क्यों नहीं करी ?"–यह लिखना बिलकुल विपरीत है क्योंकि उस ठिकाने वंदना करने वा न करने का अधिकार नहीं है, तथापि जेठे ने स्वमति कल्पना से लिखा है, कि किसी ने वंदना नहीं करी है तो बताओ ऐसे कहां लिखा है ?*

और मल्लिकुमरी स्त्री वेषमें थी इस वास्ते वंदनीक नहीं,तैसे ही तिसकी स्त्रीवेष की प्रतिमा भी वंदनीक नहीं तथा स्त्री तीर्थंकरी का होना अछेरे में गिना जाता है, इस वास्ते सो विध्यनुवाद में नहीं आसक्ता है ॥

तथा जेठे ने भद्रिक जीवों को भूलाने वास्ते लिखा है, कि

---

*"श्रीप्रथमानुयोग" शास्त्र जिसमें इतनी वातोंका होना "श्रीसमवायांगसूत्र" तथा "श्रीनंदिसूत्र" में फरमाया है। तथा हि –

सेकिंतं मूलढमाणुओगे एत्थण अरहंताणं भगवंताणं पूव्व भवा देवलोगगमणाणि आउचवणाणि जम्मणाणिअ अभिसेय रायवरसिरीओ सीआओ पव्वज्जाओतवोयभत्ताकेवलणाणुप्पाओतित्थपवत्तणा

उपकरणादि भेष रखते हो, परंतु शुद्ध परंपराय वाले सम्यग् दृष्टि श्रावक तुमको मानते नहीं हैं;तैसे ही जमाली गोशाला प्रमुख का भी जान लेना,तथा तुमारे कुपंथ में भी जो फंसे हुए है,जब उनको यथार्थ शुद्ध जैनधर्मका ज्ञान होताहै,उसी समय जमालीके शिष्यों कि तरां तुमको छोडके शुद्ध जैन मार्ग को अंगीकार कर लेते हैं,और फेर वोह तुमारे सन्मुख देखना भी पसंद नहीं करते हैं।

फेर जेठा लिखता है कि "जैसे मरे भरतार की प्रतिमा से स्त्री की कुछ भी गरज नहीं सरती है,तैसे जिन प्रतिमा से भी कुछ गरज नहीं सरती है,इसवास्ते स्थापना निक्षेपा वंदनीक नहीं है" इस का उत्तर-जिस स्त्री का भरतार मरगया होवे,वोह स्त्री जेकर आसन बिछा कर अपने पति का नाम लेवे तो क्या उसकी भोग वा पुत्रोत्पत्ति आदि की गरज सरे? कदापि नहीं, तबतो तुम ढूंढकों को चउवीस तीर्थंकरों का जाप भी नहीं करना चाहिये,क्योंकि इस से तुमारे मत मूजिब तुमारी कुछ भी गरज नहीं सरेगी, वाहरे जेठे मूढमते! तैंने तो अपने ही आप अपने पगमें कुहाड़ा मारा इतना ही नहीं,परंतु तेरा दिया दृष्टांत जिन प्रतिमा को लगताही नहींहै।

फेर जेठमलजी कहते हैं कि "अजीव रूप स्थापना से क्या फायदा होवे?" उत्तर-जैसे संयम के साधन वस्त्र पात्रादिक अजीव हैं, परंतु तिससे चारित्र साध्या जाता है, तैसे ही जिन प्रतिमा की स्थापना ज्ञान शुद्धि तथा दर्शन शुद्धि प्रमुखका हेतु है जिसका अनुभव सम्यग् दृष्टि जीवों को प्रत्यक्षहै, तथा जैन शास्त्रों में कहा है कि लड़के रस्ते में लकड़ीका घोड़ा बनाके खेलते होवें, तहां साधु जा निकलें, तो "तेरा घोड़ा हटा ले" ऐसे उसको घोड़ा कहे,परंतु लकड़ी ना कहे,यदि लकड़ी कहे तो साधुको असत्य लगे, इस बात

को प्रायः ढूंढिये भी मानते हैं तो विचारना चाहिये कि इस में घोड़ा पन क्या है ? परन्तु घोड़े की स्थापना करी है; तो उस को घोड़ा ही कहना चाहिये, इसवास्ते स्थापना सत्य समझनी। तथा तुम ढूंढिये खंड के कुत्ते, गौ, भैंस, बैल, हाथी, घोडे, सुअर, आदमी, वगैरह खिलौने खाते नहीं हो, तिन में जीव पना तो कुछ भी नहीं है, परंतु जीवपने की स्थापना है, इस वास्ते खाने योग्य नहीं है, * क्योंकि इस से पंचेंद्री जीव की घात जितना पाप लगता है, ऐसे तुम कहते हो तो इस कथनानुसार तुमारे मानने मूजिब ही स्थापना निक्षेपा सिद्ध होता है। तथा श्री समवायांग सूत्र, दशाश्रुतस्कंध सूत्र, दशवैकालिकादि अनेक सूत्रों में तेतीस आशातना में गुरु संबंधी पाट, पीठ, संथारा प्रमुखको पैरलग जावे,तो गुरुकी आशातना होवे,ऐसे कहा है, इस पाठ से भी स्थापना निक्षेपा वंदनीक सिद्ध होता है, क्योंकि यह वस्तु भी तो अजीव हैं,जैसे पूर्वोक्त वस्तुओं में गुरुकी स्थापना होने से अविनय करने से शिष्य को आशातना लगती है, और विनय करनेसे शिष्यको शुभफल होताहै;ऐसेही श्रीजिन प्रतिमाकी स्थापना से भी जानलेना॥ तथा देवताओंने प्रभु की वंदना पूजा करी उस को जीत आचार में गिनके उस से देवता को कुछभी पुण्य बंध नहीं होताहै ऐसा सिद्ध किया है, परंतु अरे मूर्ख शिरोमणि ढूंढको! जीत आचार किसको कहतेहैं?सो भी तुम समझते नहीं हो,

---

* कितनेक अज्ञानी ढूंढिये जिन प्रतिमा के द्वेष से आज काल इस बात को भी मानने से इनकारी होते हैं, यथा जिला लाहौर मुकाम माझा पट्टी में सिरीचद नामा ढूंढक साधुको एक मुगल ने पूछा कि आप कुत्ते, गौ, भैंस, बैल, वगैरह खंड के खिलौने खातेहैं ? जवाब मिला कि बड़ी खुशी से वाह ! अफसोस !!!

और कुछ भी न बन आवे, तो इतना तो अवश्यमेव करना तिसका नाम "जीत आचार" जैसे श्रावकों का जीत आचार है कि मदिरा का पान नहीं करना, दो वक्तप्रतिक्रमण करना वगैरह अवश्यकरणीय है, तो उस से पुण्य बंध नही होता है, ऐसे किस शास्त्र में है? इस से तो अधिक पुण्यका बंध होता है, यह बात निःसंशय है। तथा श्री जंबूद्वीपपन्नत्तिमें तीर्थंकरके जन्म महोत्सव करने को इंद्रादिक देवते आए हें, तहां एकला जीत शब्द नहीं है, किंतु वंदना, पूजना भक्ति, धर्मादिको जानके आए लिखाहै; और उववाइ सूत्रमें जब भगवान् चंपानगरी में पधारे थे तहां भी इसी तरे का पाठ है परंतु जेठेमूढ मति को दृष्टि दोषसे यह पाठ दिखा मालूम नहीं होता है ॥

तथा मूर्ख शिरोमणि जेठा लिखताहै कि " बनीये लोग अपना कुलाचार समझ के मांस भक्षण नहीं करते हैं, इसवास्ते तिनको पुण्य बंध नहीं होता हे" इस लेखसे जेठेने अपनी कैसी मूर्खता दिखलाई है सो थोडे से थोड़ी बुद्धि वाले को भी समझ में आजावे ऐसी है। अरे ढूंढियो! तुमारे मन से तुमको तिस वस्तुके त्यागने से पुण्य का बंध नहीं होता होगा. परंतु हमतो ऐसे समझते हैं कि जितने सुमार्ग और पुण्य के रस्ते हैं वे सर्व धर्म शास्त्रानुसारही हैं, इसवास्ते धर्म शास्त्रानुसारही मांस मदिरा के भक्षण में पापहै, यह स्पष्ट मालूम होताहै, और इस वास्ते सर्व श्रावक तिनका त्याग करते हैं, और पूर्वोक्त अभक्ष्य वस्तुके त्यागने से महा पुण्य बांधतेहैं।

तथा नमुथ्थुणं कहने से इंद्र तथा देवताओंने पुण्यका बंध किया है यह बात भी निःसंशय है–

तथा इंद्रने भी थूभ कराके महा पुण्य उपार्जन करा है, और

अन्य श्रावकोंने तथा राजाओं ने भी जिनमंदिर कराये हैं, और उस से सुगतिप्राप्त करी है; जिसका वर्णन प्रथम लिख चुके हैं, फेर जेठा लिखताहै कि" जिन प्रतिमा देखके शुभ ध्यान पैदा होता है, तो मल्लिनाथजी को तथा तिनकी स्त्रीरूपकी प्रतिमा को देख के राजे कामतुर क्यों होए ? इस वास्ते स्थापना निक्षेपा वंदनीक नहीं " उत्तर– महासती रूपवंती साध्वी को देखके कितने ही दुष्ट पुरुषों के हृदयमें काम विकार उत्पन्न होता है, तो इस करके जेठे की श्रद्धा के अनुसार तो साध्वी भी वंदनीक न ठहरेगी ? तथा रूपवान् साधु को देख के कितनीक स्त्रियों का मन आसक्त हो जाता है बलभद्रादिमुनि वत्, तो फेर जेठे के माने मूजिब तो साधु भी वंदनीक न ठहरेगा? और भगवान् ने तो साधु साध्वी को वंदना नमस्कार करना श्रावक श्राविकाओं को फरमाया है; इस वास्ते पूर्वोक्त लेखसें जेठा जिनाज्ञाका उत्थापक सिद्ध होता है परंतु इसबात में समझने का तो इतनाही है कि जिन दुष्ट पुरुषों को साध्वी को देखके तथा जिन दुष्ट स्त्रियों को साधु को देखके काम उत्पन्न होताहै, सो तिन को मोहनी कर्म का उदय और खोटी गतिका बंधन है; परंतु इससे कुछ साधु, साध्वी अवंदनीक सिद्ध नहीं होतेहैं, तैसेही मल्लिनाथजीको तथातिनकी स्त्रीरूपकी प्रतिमा को देखके ६ राजे कामातुर होए, सो तिन को मोहनी कर्म का उदय है; परंतु इससे कुछ द्रव्य निक्षेपा तथा स्थापना निक्षेपा अवंदनीक सिद्ध नहीं होता है, तथा अनार्य लोकोंको प्रतिमा देखके शुभ ध्यान क्यों नहीं होताहै? ऐसे जेठेने लिखा है, परंतु तिसका कारण तो यह है कि तिसने प्रतिमाको अपने शुद्ध देवरूप करके जानी नहीं है, यदि जान लेवे तो तिनको शुभ ध्यान पैदा होवे, और वे आशातना

भी करे नहीं साधुवत् ॥ तथा श्रीउववाइ सूत्र में *कहा है कि-

तं महाफलं खलु अरिहंताणं भगवंताणं नाम गोयस्सवि सवणयाए ॥

अर्थ-अरिहंत भगवंत के नाम गोत्र के भी सुनने से निश्चय महाफल होता है इत्यादि सूत्र पाठ से भी नाम निखेपा महाफल दायक सिद्ध होता है ॥

अरेढूंढको! ऊपर लिखी बातोंको ध्यान देकर वांचोगे, और विचार करोगे तो स्पष्ट मालूम होजावेगा कि चारों ही निक्षेपे वंदनीक हैं; इस वास्ते जेठमल जैसे कुमतियों के फंदेमें न फंसके शुद्ध मार्ग को पिछान के अंगीकार करो, जिससे तुमारे आत्माका कल्याण होवे ॥

॥ इति ॥

---

(१३) नमुना देखके नाम याद आता है।

जेठा मूढमति तेरवें प्रश्नोत्तरमें लिखता है कि "भगवंतकी प्रतिमा को देखके भगवान् याद आते हैं, इसवास्ते तुम जिनप्रतिमा को पूजतेहो तो करकंडु आदिक बैल प्रमुख को देखके प्रतिबोध होए हैं, तो उन बैल प्रमुखको वंदनीक क्यों नहीं मानतेहो? तिसका उत्तर-अरे ढूंढको! हम जिसके भाव निक्षेपे को वांदते पूजते हैं, तिसके ही नामादि को पूजते हैं; और शास्त्रकारों ने भी ऐसे ही कहा है, हम भाव बैलादि को पूजते नहीं हैं; और न पूजने योग्य मानते हैं, इसी वास्ते तिनके नामादिको भी नहीं पूजते हैं परंतु तुमारे माने बत्तीस सूत्रों में तो करकंडु, दुमुख, नमिराजा, और नगइ राजा, क्या क्या

---

* श्री रायपसेणी सूत्र तथा श्री भगवती सूत्रमें भी ऐसे ही कहा है ॥

देखके प्रतिबोध होये; सो है नहीं और अन्य सूत्र तथा ग्रंथों को तो तुम मानते नहीं हो तो यह अधिकार कहांसे लाके जेठेने लिखा है सो,दिखाओ ?

तथा जेठा लिखता है कि " सूत्रोंमें चंपा प्रमुख नगरियों की सर्व वस्तुयों का वर्णन करा, परंतु जिन मंदिर का वर्णन क्यों नहीं करा? यदि होता तो करते,इसवास्ते उसवक्त जिनमंदिर थे ही नहीं" तिसकाउत्तर–श्रीउववाइ सूत्रमें लिखा है कि चंपानगरीमें "बहुला अरिहंत चेइआइं" अर्थात् चंपानगरीमें बहुत अरिहंत के मंदिर हैं। तथा श्रीसमवायांग सूत्र में आनंदादिक दशश्रावकोंके जिन मंदिर कहे हैं,और आनंदादिकोंने वांदे पूजे हैं इत्यादि अनेक सूत्रपाठ हैं; तथापि मिथ्यात्वके उदयसे जेठेको दीखा नहींहै तो हम क्या करें?

फेर जेठा लिखता है "आज काल प्रतिमाको वंदने वास्ते संघ निकालते हो तो साक्षात् भगवंतको वंदने वास्ते किसी श्रावकने संघ क्यों नहीं निकाला"? तिसका उत्तर–भगवंतको वंदना करने पूजा करने को इकट्ठे होकर जाना उसका नाम संघ है,सो जब भगवंत विचरते थे तब जहां जहां समवसरे थे तहां तहां तिस तिस नगरके राजा,राजपुत्र,सेठ,सार्थवाह प्रमुख बडे,आडंबरसे चतुरंगिणी सेना सजके प्रभुको वंदना करने वास्ते आयेथे; सो भी संघही है जिनके अनेक दृष्टांत सिद्धांतों में प्रसिद्ध हैं तथा भगवंत श्रीमहावीरस्वामी पावापरीमें पधारे तब नव मलेच्छी जातिके और नवलेच्छी जातिके एवं अठारां देशके राजे इकट्ठे होकर प्रभु को वंदना करने वास्ते आये हैं तिनको भी संघही कहते हैं, परंतु जेठेको संघ शब्द के अर्थ की भी खबर नहीं मालूम देती है, तथा प्रभु जंगम तीर्थ थे ग्रामानुग्राम विहार करते थे, एक ठिकाने स्थायी रहना नहीं था; इससे तिनको

णैगमेषीकी प्रतिमाकी आराधना करने से हरिणैगमेषीदेव अराध्य हुआ, तैसेही जिनप्रतिमाको वंदन पूजनादिकसे आराधनेसे सो भी सम्यग्दृष्टि जीवों को आराध्य होता है ॥

तथा जेठमल लिखता है कि "प्रतिमाको वदना करने वास्ते संघ निकालना किसी जगह भी नहीं कहा है" तिस का उत्तर तो हम प्रथम लिख चुके हैं;परंतु जब तुमारे साधु साध्वी आते हैं तब तुम इकट्ठे होके लेनेको जाते हो और जब जाते हैं तब छोड़ने को जाते हो, तथा मरते हैं तब विमान वगैरह बना के घणे आदमी इकठे होकर दुसाले डालते हो, जलाने जाते हो तथा कई जगह पूज्य की तिथि पर इकट्ठे होकर पोसह करते हो, इस तरां आनंद कामदेवादि श्रावकोंने, सिद्धांतों में किसी जगह करा कहा होवे तो बताओ ? और हमारे श्रावकजो करते हैं,सो तो सूत्र पंचांगी तथा सुविहिताचार्य कृत ग्रंथों के अनुसार करते हैं ॥

॥ इति ॥

(१४)नमो बंभीए लिवीए इस पाठ का अर्थ।

चौदहमें प्रश्नोत्तर में जेठे मूढ़मति ने लिखा है कि "भगवती सूत्र की आदि में (नमो बंभीए लिवीए) इस पाठ करके गणधरदेव ने ब्राह्मीलिपीके जाणनहार श्रीऋषभदेव को नमस्कार करा है, परंतु अक्षरोंको नमस्कार नहीं करा है;इस बात ऊपर अनुयोगद्वार सूत्रकी साख दी है कि जैसे अनुयोगद्वारमें पाथेका जाणनहार पुरुष सो ही पाथा,ऐसे कहा है; तैसे ही इस ठिकाने भी लिपी का जाणनहार पुरुष, सो लिपी कहिये,और तिसको नमस्कार करा है" उत्तर–जो लिपी के जाणनहारको नमस्कार करा होवे तब तो भंगी

चमार, फरंगी, मुसलमानादिक सर्व ढूंढकोंके बंदनीकठहरेंगे, क्योंकि वोह सर्व ब्राह्मीलिपीको जानते हैं, यदि नैगमनयकी अपेक्षा कहोगे कि ब्राह्मीलिपी के बनानेवालों को नमस्कार करा है तो शुद्ध नैगम नयके मतसे सर्व लिखारी तुमको वंदनीक होंगे, जेकर कहोगे इस अवसर्पिणी में ब्राह्मीलिपी के आदि कर्त्ता को नमस्कार करा है, तब तो जिस वक्त श्रीऋषभदेव जी ने ब्राह्मीलिपी बनाई थी, उस वक्त तो वो असंयती थे; और असंयतिपने में तो तुम वंदनीक मानते नहीं हो तो फेर 'नमो बंभीए लिवीए' इस पाठका तुम क्या अर्थ करोगे सो बताओ ? और हम तो अक्षर रूप ब्राह्मीलिपी को नमस्कार करते हैं, जिस से कुछ भी हमको बाधक नहीं है, तथा तुम ब्राह्मीलिपी के आदि कर्त्ता को नमस्कार है ऐसे कहते हो सो तो मिथ्या ही है, क्योंकि 'बंभीए लिवीए' इस पद का ऐसा अर्थ नहीं है, यह तो उपचार कर के खींच के अर्थ नीकालीए तो होवे, परंतु विना प्रयोजन उपचार करने से सूत्रदोष होता है, तथा तुमारे कथनानुसार ब्राह्मीलिपी के कर्त्ताको इस ठिकाने नमस्कार करा है तो प्रभु केवल एक ब्राह्मीलिपी के ही कर्त्ता नहीं है, किंतु कुल शिल्पके आदि कर्त्ता हैं, और यह अधिकार श्रीसमवायांगसूत्र में है तो वहां नमों 'सिप्पसयस्स' अर्थात् शिल्पके कर्त्ताको नमस्कार होवे ऐसा भ्रान्ति रहित पद गणधर महाराज ने क्यों न कहा ? इस वास्ते इस से यही निश्चय होता है कि तुम जो कहते हो, सो सूत्र विरुद्ध ही है, तथा 'नमो अरिहंताणं' इस पद में क्या ऋषवदेव न आये जो फेर से 'बंभीए लिवीए' यह पद कहके पृथक् दिखलाए ? कदापि तुम कहोगे कि ब्राह्मीलिपी की क्रिया इन्होंने ही दिखलाई है, इस वास्ते क्रिया गुण करके वंदनीक है; तब तो ऋषभदेव जी

को वंदना करने से ब्राह्मीलिपी को तो वंदना अवश्यमेव हो गई, क्योंकि क्रियाका कर्त्ता वंद्य तो क्रिया भी वंद्य हुई॥

फेर जेठा लिखता है कि "अक्षर छापना तो सुधर्मास्वामी के वक्त में नहीं, था सो तो श्रीवीर निर्वाण के नवसो अस्सी (९८०) वर्ष पीछे पुस्तक लिखे गए तब हुआ है"॥

उत्तर—अरे मूढ़ ! सुधर्मास्वामीके वक्त में अक्षरस्थापना ही नहीं थी तो क्या श्री ऋषभदेव जी ने अठारां लिपी दिखलाई थी तिनका व्यवच्छेद ही होगया था ? और तैसे था, तो गृहस्थोंका लैन, देन, हुण्डी, पत्री, उगराही, पत्र लेखन, व्याज वगैरह लौकिक व्यवहार कैसे चलता होगा ? जरा विचार करके बोलो ! परंतु इस से हमको तो ऐसे ही मालूम होता है कि जेठमल को और तिस के ढूंढकों को सूत्रार्थ का ज्ञान ही नहीं है; क्योंकि श्री अनुयोगद्वार सूत्र में कहा है कि—दव्वसुअंजं पत्तय पोथ्थयलिहियं अर्थ—द्रव्य श्रुत सो जो पत्र पुस्तक में लिखा हुआ हो, तो अरे कुमतियो ! यदि उन दिनों में ज्ञान लिखा हुआ, और लिखा जाता न होता तो गणधर महाराज ऐसे क्यों कहते ? इस वास्ते मतलब यही समझनेका है कि उन दिनों में पुस्तक थे; अठारां लिपी थी; परंतु फकत समग्र सूत्र लिखे हुए नहीं थे, सो वीर निर्वाण के ९८० वर्षे पीछे लिखे गए; आखीर में हम तुमको इतना ही पूछते हैं कि तुम जो कहते हो कि श्री वीर निर्वाण के बाद (९८०) वर्षे सूत्र पुस्तकारूढ़ हुए हैं, सो किस आधार से कहते हो ? क्योंकि तुमारे माने बत्तीस सूत्रों में तो यह बात ही नहीं है॥

तथा जेठमल लिखता है कि "अठारां लिपी अक्षर रूप वंदनीक मानोगे तो तुमको पुराण कुरान वगैरह सर्व शास्त्र वंदनीक

होंगे"। उत्तर-श्रीनंदिसूत्र में अक्षर को श्रुत ज्ञान कहा है, और ज्ञान नमस्कार करने योग्य है;परंतु तिस में कहा। भावार्थ-वंदनीक नहीं है श्रीनंदि सूत्र में कहा है कि अन्य दर्शनियों के कुल शास्त्र जो मिथ्या श्रुत कहाते हैं, वे यदि सम्यग्दृष्टि के हाथ में हैं तो सम्यक् शास्त्रही हैं,और जैनदर्शनकेशास्त्र यदि मिथ्यादृष्टिके हाथमें हैतो वे मिथ्या श्रुत ही हैं इस वास्ते अक्षर वंदना करने में कुछ भी बाधक नहीं है; और जेठमल ने लिखा है कि-"जिनवाणी भावश्रुत है" परंतु यह लिखना मिथ्या है, क्योंकि जिन वाणी को श्रीनंदि सूत्र में द्रव्यश्रुत कहा है और श्रीभगवती सूत्र में "नमोसुअ देव-याए" इस पाठ करके गणधरदेवने जिनवाणी को नमस्कार किया है, तैसे ही ब्राह्मीलीपि नमस्कार करने योग्य है, जैसे जिनवाणी भाषा वर्गणा के पुद्गल रूप करके द्रव्य है, तैसे ब्राह्मीलीपि भी अक्षर रूप करके द्रव्य है ॥

अरे ढूंढको ! जब तुम आदिकर्त्ता को नमस्कार करने की रीति स्वीकार करते हो, तो तीर्थंकरों के आदि कर्त्ता तिन के माता पिता हैं, तिनको नमस्कार क्यों नहीं करते हो ? अरे भाइयो ! जरा ध्यान दे कर देखो तो ऊपर कुल दृष्टांतों से "नमो बंभीए लीवीए" का अर्थ ब्राह्मीलीपि को नमस्कार हो ऐसा ही होता है इसवास्ते जरा नेत्र खोलके देखो जिससे तीर्थंकर गणधर की आज्ञा के लोपक न बनो ॥ इति ॥

(१५) जंघाचारण विद्याचारण साधुओं ने जिन प्रतिमा वांदी है।

पंदरमें प्रश्नोत्तर में जेठमल लिखता है कि "जंघाचारण तथा

विद्याचारण मुनियोंने जिनप्रतिमा नहीं वांदी है" यह लिखना सर्वथा असत्य है, क्योंकि श्रीभगवती सूत्र शतक २० उद्देशे ९में जंघाचारण तथा विद्याचारणमुनियोंका अधिकार है, तिसमें उन्होंने जिनप्रतिमा वांदी है, ऐसे प्रत्यक्षरीतिसे कहा है तिसमें से थोड़ासा सूत्रपाठ इस ठिकाने लिखते हैं। यतः—

जंघाचारस्सणं भंते तिरियं केवइए गति विसए पन्नत्ता गोयमा सेणं इत्तो एगेणं उप्पाएणं रुअगवरे दीवे समोसरणं करेइ करइत्ता तहिं चेइआइं वंदइ वंदइत्ता तओ पडिनियत्तमाणे बीइएणं उप्पाएणं नंदीसरे दीवे समोसरणं करेइ तहिं चेइआइं वंदइ वंदइत्ता इह मागच्छइ इह चेइयाइं वंदइ जंघाचारस्सणं गोयमा तिरियं एवइए गतिविसए पन्नत्ता। जंघाचारस्सणं भंते उड्ढं केवइए गइ विसए पन्नत्ता गोयमा सेणं इत्तो एगेणं उप्पाएणं पंडगवणे समोसरणं करेइ करइत्ता तहिं चेइआइं वंदइ वंदइत्ता तओपडिनियत्तमाणे बितिएणं उप्पाएणं नंदणवणे समोसरणं करइ करइत्ता तहिंचेइआइं वंदइ वंदइत्ताइह माग

च्छइ इह मागच्छइता इह चेइआइं वंदइ जंघाचारस्सणं गोयमाउड्ढंएवइए गति विसए पन्नत्ता।

अर्थ–हे भगवन् ! जंघाचारण मुनिका तिरछी गतिका विषय कितना है? गौतम ! सो एक डिगले रुचकवर जो तेरमा द्वीप है तिसमें समवसरण करे, करके तहांके चैत्य अर्थात्–शाश्वते जिनमंदिर(सिद्धायतन) में शाश्वती जिनप्रतिमा को वांदे; वांदके तहां से पीछे निवर्त्तता हुआ दूसरे डिगले नंदीश्वरद्वीप में समवसरण करे, करके तहांके चैत्योंको वांदे;वांदके यहां अर्थात् भरतक्षेत्र में आवे,आकरके यहांके चैत्य अर्थात् अशाश्वती जिनप्रतिमाको वांदे; जंघाचारणका तिरछी गतिका विषय इतना है तो हे भगवन् ! जंघाचारण मुनि का ऊर्ध्व गतिका विषय कितना है ? गौतम ! सो एक डिगलमें पांडुक वन में समवसरण करे, करके तहां के चैत्यों को वांदे; वांद के वहां से पीछे फिरता हुआ दूसरे डिगल में नंदन वन में समवसरण करे, करके तहांके चैत्य वांदे; वांदके यहां आवे, आकर के यहां के चैत्य वांदे; हे गौतम ! जंघाचारण की ऊर्ध्व गतिका विषय इतना है ॥ जैसे जंघाचारणकी गतिका विषय पूर्वोक्त पाठ में कहा है तैसे विद्याचारण मुनि की गति का विषय भी इसी उद्देशमें कहा है विद्याचारण यहांसे एक डिगलमें मानुषोत्तर पर्वत परजाके तहांके चैत्य वांदते हैं,और दूसरे डिगलमें नंदीश्वर द्वीपमें जाके तहांके चैत्य वांदते हैं;पीछे फिरते हुए एक ही डिगल में यहां आकरके यहां के चैत्य वांदते हैं इस मूजिब विद्याचारण की तिरछी गतिका विषय है,ऊर्ध्वगति में एक डिगलमें नंदनवनमें जाके तहां

के चैत्य वांदे हैं; और दूसरे डिगल में पांडुकवनमें जाके वहांके चैत वांदे हैं,पीछे फिरते हुए एक ही डिगल में यहां आकर के यहांके चैत्य वांदे हैं, इस मूजिब विद्याचारण की ऊर्ध्व गतिका विषय है, सो पाठ यह हैः-

विद्याचारणस्सणं भन्तेतिरयंकेवइए गइवि-सएपन्नत्तेगोयमासेणं इत्तोए गेणउप्पाएणं माणुसुत्तरे पव्वए समोसरणं करेइ करइत्ता तहिं चेइआइं वंदइ वंदइत्ता बीएणं उप्पाणं णंदिसरवरदीवे समोसरणं करेइ करइत्ता तहिं चेइआइं वंदइ वंदइत्ता तओ पडिनि-यत्तइ इह मागच्छइ इह मागच्छइत्ता इह चेइआइं वंदइ विद्याचारणस्सणंगोयमातिरि-यं एव इए गइ विसए पन्नते॥ विद्याचारण-स्सणं भंते उड्ढं केवइए गइ विसए पन्नत्ते गोयमा सेणं इत्तो एगेणं उप्पाएणं णंदणवणे समोसरणं करेइ करइत्ता तहिं चेइआइं वंदइ वंदइत्ता बितिएणं उप्पाएणं पंडगवणे समोसरणं करेइकरइत्ता तहिं चेइआइं वंदई वंदइत्ता तओ पडिनियत्तइ इह मागच्छइ

इहमागच्छइत्ता इह चेइआइं वंदइ विद्या चारणस्सणं गोयमा उढ्ढंएवइएगइ विसए पन्नत्ते ॥ इति ॥

जेठमल, लिखता है कि "जंघाचारण तथा विद्याचारणमुनियोंने श्रीरुचकद्वीप तथा मानुषोत्तर पर्वत पर सिद्धायतन वांदे कहते हो परंतु दोनों ठिकाने तो सिद्धायतन बिलकुल है नहीं तो कहांसे वांदे?

उत्तर-श्रीमानुषोत्तर पर्वत पर चार सिद्धायतन हैं ऐसे श्रीद्वीप सागर पन्नत्तिसूत्र में कहा है तथा श्रीरत्न शेखरसूरि जो कि महा धुरंधर पंडितथे उन्होंने श्रीक्षेत्रसमास नामा ग्रंथमें ऐसे कहा है-यतः

चउसुवि इसुयारेसु इक्कीक्कं नरनगंमि चत्तारि । कूडोवरि जिणभवणा कुलगिरि जिणभवण परिमाणा ॥ २५७ ॥

अर्थ-चार इषुकार में एक एक और मानुषोत्तर पर्वत में चार कूट पर चार जिनभवन हैं सो कुलगिरि के जिन भवन प्रमाण है ॥

तत्तो दुगुणपमाणा चउदाराथुत्त वण्णिय सरूवा ॥ नंदीसर बावण्णाचउकुंडलि रुयगि चत्तारि ॥ २५८ ॥

अर्थ-पूर्वोक्त जिनभवन से दुगुने प्रमाण के चार द्वार वाले और पूर्वाचार्यों ने वर्णन किया है स्वरूप जिन का ऐसे नंदीश्वर में (५२) कुंडलगिरि में चार (४) और रुचक पर्वत पर चार (४) एवं कुल साठ (६०) जिनभवन हैं। इत्यादि अनेक जैन शास्त्रों में

कथन है,इस वास्ते मानुषोत्तर तथा रुचकद्वीप पर जिनभवन नहीं है ऐसा जेठमल का लेख बिलकुल असत्य है। पुनः जेठा लिखता है कि-"नंदीश्वरद्वीप में समभूतला ऊपर तो जिनभवन कहे, नहीं हैं, और अंजनगिरि तो चउरासी (८४) हजार योजन ऊंचा है, तिस पर चार सिद्धायतन हैं, तहां तो जंघाचारण विद्याचारण गये नहीं है" इस का उत्तर-सिद्धायतन को वंदना करने वास्ते ही चारण मुनि तहां गये हैं तो जिस कार्य के वास्ते तहां गये हैं, सो कार्य नहीं किया ऐसे कहा ही नहीं जाता है,क्योंकि श्रीभगवती सूत्र में तहां के चैत्य वांदे ऐसे कहा है; तथा तिन की ऊर्ध्वगति पांडुकवन जो समभूतला से निनानवे (९९) हजार योजन ऊंचा है तहां तक जाने की है, ऐसे भी तिस ही सूत्र में कहा है, और यह अंजनगिरि तो चउरासी (८४) हजार योजन ऊंचा है तो तहां गये हैं उस में कोई भी बाधक नहीं है और जेठमल ने नंदीश्वरद्वीपमें चार सिद्धायतन लिखे हैं,परंतु अंजनगिरि चारके ऊपर चार हैं,और दधिमुख तथा रतिकर ऊपर मिलाके ५२ हैं,और पूर्वोक्त पाठमें भी ५२ ही कहे हैं, इस वास्ते जेठमल का लिखना बिलकुल असत्य है।

तथा जेठमल ने लिखा है- "प्रतिमा वांदी है तहां (चेइ आइं वंदित्तए) ऐसा पाठ है परंतु (नमंस्सइ) ऐसा शब्द नहीं है इसवास्ते प्रतिमा को प्रत्यक्ष देखी होवे तो नमंस्सइ शब्द क्यों नहीं कहा ?" तिस का उत्तर-वंदइ और नमंस्सइ दोनों शब्दोंका भावार्थ-एक ही है इस वास्ते केवल वंदइ शब्द कहा है तिसमें कोई विरोध नहीं है परंतु वंदइ एक शब्द है वास्ते तहां प्रतिमा वांदीही नहीं है,ऐसे कथन से जेठमल श्रीभगवती सूत्रके पाठको विराधने वाला सिद्ध होता है।

पुनः जेठमल लिखता है कि-" तहां चेइआइं' शब्दकरके

चारणमुनिने प्रतिमा वांदीनहीं है, किंतु इरियावही पडिकमने वक्त लोगस्स कहकर अरिहंतको वांदा है सो चैत्यवंदना करीहै"–उत्तरअरे भाई चैत्य शब्दका अर्थ अरिहंत ऐसा किसीभी शास्त्रमेंकहा नहींहै, चैत्य शब्दका तो जिनमंदिर,जिनबिंब और चोतरा बद्ध वृक्ष यहतीन अर्थ अनेकार्थसंग्रहादि ग्रंथों में करे है * और इरियावही पडिक्कमने में लोगस्स कहा सो चैत्य बंदना करी ऐसे तुम कहते हो तोसूत्रों में जहां जहां इरियावहीपडिकमनेका अधिकारहै तहां तहां इरिया वही पडिकमें ऐसें तो कहा है, परंतु किसी जगहभी चैत्यवंदना करे ऐसे नहीं कहा है; तो इस ठिकाने अर्थ फिराने के वास्ते मन में आवे तैसे कुतर्क करते हो सो तुमारा मिथ्यात्व का उदय है॥

फेर "चेइआइं वंदित्तए" इस शब्द का अर्थ फिराने वास्ते जेठमल ने लिखा है कि "तिस वाक्यका अर्थ जो प्रतिमा वांदी ऐसा हैतो नंदीश्वरद्वीपमें तो यह अर्थ मिलेगा परंतु मानुषोत्तर पर्वत पर और रुचकद्वीप में प्रतिमा नहीं है तहां कैसे मिलेगा"? तिसका उत्तर–हमने प्रथम तहां जिनभवन और जिनप्रतिमा हैं ऐसा सिद्ध करदिया है, इस वास्ते चारण मुनियों ने प्रतिमाही वांदी है ऐसे सिद्धहोता है,और इससे ढूंढकोंकी धारी कुयुक्तियां निरर्थकहैं।

तथा जेठमल ने लिखा है कि "जंघा चारण विद्याचरण मुनि प्रतिमा वांदने को बिलकुल गये नहीं हैं क्योंकि जो प्रतिमा वांदने को गये हो तो पीछे आते हुए मानुषोत्तर पर्वत पर सिद्धायतन हैं तिनको वंदना क्यों नहीं करी"? इसका उत्तर–चारणमुनि प्रतिमा वांदनेको ही गये हैं, परंतु पीछे आते हुए जो मानुषोत्तर के चैत्य

* किसी ठिकाने चैत्य शब्द का प्रतिमा मात्र अर्थ भी होता है,अन्य कई कोषों में देवस्थान देवावासादि अर्थ भी लिखे हैं, परन्तु चैत्य शब्द का अर्थ अरिहंत तो कहीं भी नहीं मालूम होता है।

नहीं वांदे है सो तिनकी गतिका स्वभाव है; क्योंकि बीचमें दूसरा विसामा ले नहीं सक्ते हैं, यह बात श्रीभगवती सूत्र में प्रसिद्ध है, परंतु पूर्वोक्त लेखसे जेठमल महामृषावादी उत्सूत्र प्ररूपक था ऐसे प्रत्यक्ष सिद्ध होता है, क्योंकि पूर्वोक्त प्रश्नोत्तर में वो आपही लिखता है कि मानुषोत्तर पर्वत पर चैत्यनही हैं और इस प्रश्न में लिखता है कि मानुषोत्तर पर्वत पर चैत्य क्यों नहीं वांदे ? इससे सिद्ध होता है कि मानुषोत्तर पर्वतपर चैत्यजरूर हैं परंतु जहां जैसा अपने आपकोअच्छालगा वैसा जेठमलने लिखदिया है,किंतु सूत्रविरुद्ध लिखनेका भय बिलकुल रक्खा मालूम नहीं होता है,पुनः जेठमल ने लिखा है कि " चारणमुनियों को चारित्रमोहनीका उदय है इस वास्ते उनकोजाना पड़ा है" परंतु अरेमूढ़ ! यह तो प्रत्यक्ष है कि उनको तो इसकार्य से उलटी दर्शनशुद्धि है,परंतु चारित्र मोहनीका उदय तो तुम ढूंढकों को है,ऐसे प्रत्यक्ष मालूम होता है ॥

फेर जेठमल लिखता है कि " चारणमुनियों ने अपने स्थान में आनके कौनसे चैत्य वांदे" उत्तर–सूत्रपाठ में चारणमुनि"इह मागच्छइ"अर्थात् यहां आवे ऐसे कहा है,तिसका भावार्थ-यह है कि जिस क्षेत्रसे गयेहोवे तिस क्षेत्र में आवे, आनके " इह चेइ आइं वंदइ " अर्थात् इस क्षेत्रके चैत्य अर्थात् अशाश्वती जिन प्रतिमा तिनको वांदे ऐसेकहाहै,परंतु अपने उपाश्रये आवे ऐसे नहीं कहाहै, इस बाबत में जेठमल कुयुक्ति करके लिखता है कि"उपाश्रयमें तो चैत्यहोवे नहीं इसवास्ते तहां कौनसे चैत्यवांदे"?यह केवल जेठमल की बुद्धिका अजीर्ण है, अन्य नहीं,और श्रीभगवती सूत्र के पाठसे तो शाश्वती अशाश्वती जिन प्रतिमा सरीखी ही है, और इन दोनों में अंशमात्र भी फेर नहीं है,ऐसे सिद्ध होता है ॥

जेठमल ने लिखा है कि "चारणमुनि वो कार्य करके आनके आलोये पडिकमे विना काल करे तो विराधक होवे ऐसे कहा है, सो चक्षु इंद्रिय के विषय की प्रेरणा से द्वीप समुद्र देखनेको गये हैं इस वास्ते समझना" यह लिखना जेठमलका बिलकुल मिथ्या है क्योंकि तिन को जो आलोचना प्रतिक्रमणा करना है सो जिनवंदनाका नहीं है, किंतु उस में होए प्रमाद का है; जैसे साधु गोचरी करके आनके आलोचना करता है सो गोचरीकी नहीं, किंतु उसमें प्रमाद वश से लगे दूषणों की आलोचना करता है, तैसे ही चारमुनियों को भी लब्ध्युपजीवन प्रमाद गति है। और दूसरा प्रमादका स्थानक यह है कि जो लब्धिके बल से तीरके वेगकी तरें शीघ्रगतिसे चलते हुए रस्ते में तीर्थयात्रा प्रमुख शाश्वते अशाश्वते जिनमंदिर विना वांदे रह जाते हैं, तत्संबंधी चित्त में बहुत खेद उत्पन्न होता है; इस तरह तीरके वेगकी तरें गये सो भा आलोचना स्थानक कहिये ॥

फेर जेठमल ने अरिहंत को चैत्य ठहराने वास्ते सूत्रपाठ लिखा है तिस में "देवयं चेइयं" इस शब्द का अर्थ "धर्म देव के समान ज्ञानवंत की" ऐसे किया है सो झूठा है क्योंकि देवयं चेइय–दैवतं चैत्यं इव–अर्थ–देवरूप चैत्य अर्थात् जिन प्रतिमा की जैसे पज्जुवासामि–सेवा करता हूं, यह अर्थ खरा है, जेठा और तिस के ढूंढक इन दोनों शब्दों को द्वितीयाविभक्ति का वचन मात्र ही समझते हैं, परंतु व्याकरण ज्ञान विना शुद्ध विभक्ति, और तिसके अर्थ का भान कहां से होवे ? केवल अपनी असत्य बात को सिद्ध करनेके वास्ते जो अर्थ ठीक लगेसो लगा देना ऐसा तिनका दुराशय है, ऐसा इस बात से प्रत्यक्ष सिद्ध होता है ॥

फिर समवायांग सूत्र का चैत्य वृक्ष संबंधी पाठ लिखा है सो

इस ठिकाने विना प्रसंग है,तैसे ही तिस पाठके लिखनेका प्रयोजन भी नहीं है, परंतु फकत पोथी बड़ी करनी, और हमने बहुत सूत्र पाठ लिखे हैं, ऐसे दिखा के भद्रिक जीवों को अपने फंदेमें फंसाना यहीमुख्य हेतु मालूम होता है, और उस जगह चैत्यवृक्ष कहे हैंसो ज्ञान की निश्राय नहीं कहे है, किंतु चौतराबंध वृक्ष का नाम ही चैत्यवृक्ष है, और सो हम इसी अधिकारमें प्रथम लिखआये हैं। भगवान् जिस वृक्ष नीचे केवल ज्ञान पाये हैं,सो वृक्ष चौतरा सहित थे, और इसी वास्ते उन को चैत्यवृक्ष कहा है, ऐसे समझना,परंतु चैत्य शब्द का अर्थ ज्ञान नहीं समझना। तथा तुम ढूंढक बत्तीससूत्रों केविना अन्य कोई सूत्र तो मानते नहीं हो तो अर्थ करते होसो किस के आधार से करते हो ? सो बताओ,क्योंकि कुल कोषों में प्रायः हमारे कहे मूजिब ही चैत्य शब्द का अर्थ कथन किया है,परंतु तुम चैत्य शब्द का अर्थ साधु तथा ज्ञान वगैरह करते हो सो केवल स्वकपोलकल्पित है; और इस से स्पष्ट मालूम होता है कि निः केवल असत्य बोलके तथा असत्य प्ररूपणा करके बिचारे भोले लोगोंको अपने कुपंथ में फंसाते हो॥ इति

(१६) आनंद श्रावक ने जिनप्रतिमा वांदी है॥

सोलवें प्रश्नोत्तरमें आनंद श्रावक ने जिनप्रतिमा वांदी नहीं है, ऐसे ठहराने के वास्ते जेठमल ने उपासक दशांग सूत्र का पाठ लिख के तिस का अर्थ फिराया है इस वास्ते सोही सूत्र पाठ सच्चे यथार्थ अर्थ सहित नीचे लिखते हैं, श्रीउपासक दशांग सूत्र प्रथमाध्ययने,यतः—

नो खलु मे भंते कप्पइ अन्नउत्थिए वा अन्नउत्थियदेवयाणि वा अन्नउत्थियपरिग्गहियाणि अरिहंतचेइयाणि

अन्नउत्थियया वा अन्नउत्थिययदेवयाणि वा अन्नउत्थियय परिग्गहियाइं अरिहंतचेइयाइं वा वंदित्तए वा नमंसित्तए वा पुव्विं अणालत्तेणं आलवित्तए वा संलवित्तए वा तेसिं असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमंवा दाउंवा अणुप्पदाउं वा णण्णत्थ रायाभिओगेणं गणाभिओगेणं बलाभिओगेणं देवयाभिओगेणं गुरुनिग्गहेणं वित्तिकंतारेणं कप्पइ मे समणे निग्गंथे फासुएणं एसणिज्जेण असण पाण खाइम साइमेण वत्थपडिग्गह कंबल पाय पुछणेणं पाडिहारिय पीढफलग सेज्जासंथारएणं ओसहभेसज्जेणय पडिलाभेमाणस्स विहरित्तएत्ति कट्टु इमं एयाणुरूवं अभिग्गहं अभिगिण्हइ ॥

अर्थ--हे भगवन् ! मुझको न कल्पे क्या न कल्पे सो कहते हैं, आजसे लेके अन्य तीर्थी चरकादि, अन्यतीर्थी के देव हरि हरादिक, और अन्य तीर्थीके ग्रहण किये अरिहंतके चैत्य-जिनप्रतिमा इनको वंदना करनी, नमस्कार करना, तथा प्रथमसे विना बुलाये बुलाना, वारं वार बुलाना, यहसर्व न कल्पे, तथा तिनको अशन, पान, खादिम, और

स्वादिम, यह चार प्रकारका आहार देना, वारंवार देना, न कल्पे; परंतु इतने कारणविना सो कहते हैं, राजा की आज्ञासे, लोक के समुदाय की आज्ञासे, बलवान् के आग्रहसे, क्षुद्रदेवताके आग्रहसे, गुरु-माता पिता कलाचार्य वगैरह के आग्रहसे, इन ६ छिंडी (आगार) से पूर्व कहे तिनको वंदनादि करने से दोष न लागे; यह न कल्पे सो कहा, अब कल्पे सो कहते हैं, मुझको कल्पे, जैन श्रमण निर्ग्रंथ को फासु अर्थात् जीव रहित, और एषणीय अर्थात् दोष रहित, अशन, पान, खादिम, स्वादिम, वस्त्र, पात्र, कंबल, रजोहरण, और वरत के पीछे देने ऐसे बाजोठ (चोकी) पट्टादि पटडा वसती तृणादिक संथारा तथा औषध भेषज से प्रतिलाभता थका विचरना ऐसे कहके एतद्रूप अभिग्रह ग्रहण करे *॥

ऊपर लिखेसूत्रपाठके अर्थ में जेठमल ढूंढक लिखता है कि "आनंदश्रावकने न कल्पे में अन्य तीर्थी के ग्रहण किये चैत्य

---

* टीकाकर श्रीअभयदेवसूरि महाराजने यही अर्थ करा है—तथाहि—

नोखलु इत्यादि नोखलु मम भदंत भगवन् कल्पते युज्यते अद्य प्रभृति इतः सम्यक्त्वप्रतिपत्तिदिनादारभ्य निरतिचारसम्यक्त्वपरिपालनार्थं तद्यतनामाश्रित्य अन्नउत्थिएत्ति जैनयूथाद्यदन्यद्यूथं संघान्तरंतीर्थान्तर मित्यर्थस्तदस्तियेषांतेन्ययूथिका श्चरकादिकुतीर्थिकास्तान्अन्ययूथिकदैवतानिवाहरीहरादीनि अन्ययूथिकपरिगृहीतानि वाअर्हच्चैत्यानि अर्हत्प्रतिमालक्षणानि यथाभौतपरिगृहीतानिवीरभद्र महाकालादीनि वन्दितुं वा अभिवादनं कर्त्तुं नमस्यतुंवाप्रणाम पूर्वक प्रशस्तध्वनिभिर्गुणोत्कीर्त्तनं कर्त्तुं तद्भक्तानां मिथ्यात्व स्थिरी करणादिदोष प्रसङ्गादित्यभिप्रायः तथा पूर्वं प्रथम मनालप्तेन सता अन्यतीर्थिकैस्तानेवालपितुंवासकृत्सम्भाषितुंसंलपितुंवा पुनःपुनः संलापं

अर्थात् भ्रष्टाचारी साधुको वोसराया है. परंतु अन्य तीर्थी की ग्रहण करी जिनप्रतिमा नहीं वोसराई है, क्योंकि अन्य तीर्थीकी ग्रहण करी प्रतिमा वोसराई होती तो स्वमतेगृहीत जिन प्रतिमा वांदनी रही सोकल्पेके पाठमें कहता" इसका उत्तर-अरे भाई! कल्पेके पाठ में तो अरिहंत देव और साधुको वंदना नमस्कार करना भी नहीं कहा है, केवल साधुको ही आहार देणा कहा है, तो वोभी क्या तिस

कर्त्तुंयतस्तत्पन्नतरायोगोलककल्पाःखल्वासनादिक्रियायांनियुक्ताभवन्तितत्प्रत्ययश्चकर्मबन्धःस्यात्तथालापादेस्सकाशात्परिचयेन तस्यैवतत्परिजनस्य वा मिथ्यात्वप्राप्तिरितिप्रथमालप्तेनत्वसंभ्रमं लोकापवादभयात्कीदृशस्त्वमित्यादिवाच्यमितितथातेभ्योन्ययूथिकेभ्योशनादि दातुंवासकृत्अनुप्रदातुंवापुनः पुनरित्यर्थः,अयंच निषेधोधर्मबुद्धैव करुणयातुदद्यादपिकिंसर्वथा न कल्पते इत्याह नन्नत्थ रायाभिओगेणंतितृतीयायाःपञ्चम्यर्थत्वात् राजाभियोगं वर्जयित्वेत्यर्थः राजाभियोगस्तु राजपरतन्त्रता गणः समुदायस्तद भियोगो वश्यता गणाभियोगः तस्मात् बलाभियोगो नाम राजगण व्यतिरिक्तस्य बलवतः पारतंत्र्यं देवताभियोगो देवपरतंत्रता गुरुनिग्गहो मातापितृ पारवश्यं गुरूणां वा चैत्यसाधुनांनिग्रहः -प्रत्यनीककृतोपद्रवो गुरुनिग्रहस्तत्रोपस्थिते तद्रक्षार्थमन्ययूथिकादिभ्यो ददद पि नातिक्रामति सम्यक्त्वमिति वित्तीकंतारेणंति वृत्तिर्जीविका तस्याः कान्तारमरण्यं तदिव कान्तार क्षेत्रं कालो वा वृत्तिकान्तारं निर्वाहाभाव इत्यर्थः तस्मादन्यत्तन्निषेधो दानप्रणामादेरितिप्रकृतमिति पडिगाहंतिपात्रं पीढंति पट्टादिकं फलगंति अवष्टंभादिकं फलकं भेसज्जंति पथ्यमित्यादि ॥

तथा बंगालेकी राँयल एसीयाटिक सुसाइटीके सेक्रेट्री डाक्टर

को वंदने योग्य नहीं थे ? परंतु जब अन्यतीर्थी को वंदना करने का निषेध किया, तब मुनिको वंदना करनी यह भावार्थ निकले ही हैं, तथा अन्य तीर्थी के देवकी प्रतिमा को वंदनाका निषेध किया, तब जिन प्रतिमा को वंदना करनी ऐसा निश्चय होता है, और अंबड के आलावे अन्य तीर्थीका निषेध, और स्वतीर्थी को वंदना वगैरह करनी ऐसा डबल आलावा कहा है, तथा जो मुनि परतीर्थीने ग्रहण

ए,एफ, रुडॉल्फ हार्नलसाहिबने भी यही अर्थ लिखा है तथाहि :-

58. Then the householder Ananda, in the presence of the Samana, the blessed Mahavira, took on himself the twelvefold law of a householder, consisting of the five lesser vows and the seven disciplinary vows; and having done so, he praised and worshipped the Samana, the blessed Mahavira, and then spake *to him* thus: "Truly, Reverend Sir, it does not befit me, from this day forward, to praise and worship any man of a heterodox community, * or any of the devas † of a heterodox community, or any of the objects of reverence of a heterodox community; or without being first addressed by them, to address them or converse with them; or to give them or supply them with food or drink, or delicacies or relishes except it be by the command of the king, or by the command of the priesthood, or by the command of any powerful man, or by the command of a deva, or by the order of one's elders, or by the exigencies of living. *On the other hand* it behoves me, to devote myself to providing the Samanas of the Niggantha faith with pure and acceptable food, drink, delicacies and relishes, with clothes, blankets, alms-bowls, and brooms, with stool, plank and bedding, and with spices and medicines.

---

* Such as the charaka (Charkadi-Kutirthikah, comm.) ; see Bhag, pp. 163, 214.

† Such as Hari (Vishnu) and Hara (Shiva), (comm)

किया अर्थात् अन्य तीर्थी में गया सो मुनितो परतीर्थी ही कहिये इस वास्ते अन्यतीर्थी को वंदना न करूं इसमें सो आगया, फेर कहनेकी कोई जरूरत न थी, और चैत्य शब्दका अर्थ साधु करते हो सो निःकेवल खोटा है, क्योंकि श्रीभगवती सूत्रमें असुर कुमार देवता सौधर्म देव लोक में जाते हैं, तब एक अरिहंत, दूसरा चैत्य अर्थात् जिन प्रतिमा, और तीसरा अनगार अर्थात् साधु, इन तीनोंका शरण करते हैं; ऐसे कहा है, यतः-

नन्नत्थ अरहिंते वा अरिहंत चेइयाणि वा भावीअप्पणो अणगारस्स वाणिस्साए उड्ढं उप्पयंति जाव सोहम्मो कप्पो ।

इस पाठमें (१) अरहिंत, (२) चैत्य, और (३) अनगार, यह तीन कहे हैं, यदि चैत्य शब्द का अर्थ साधु होवे तो अनगार पृथक् क्यों कहा, जरा ध्यानदेके विचार देखो ! इसवास्ते चैत्य शब्दका अर्थ मुनि करते हो सो खोटा है, श्रीउपासक दशांगके पाठका सच्चा अर्थ पूर्वाचार्य जो कि महाधुरंधर केवली नहीं परंतु केवली सरिखे थे, वे कर गये हैं, सो प्रथम हमने लिख दिया है; परंतु जेठमल भाग्य हीन था, जिस से सच्चा अर्थ उसको नहीं भान हुआ, और चैत्य साधुका नाम कहते हो सो तो जैनेंद्र व्याकरण, हैमीकोष, अन्य व्याकरण, कोष, तथा सिद्धांत वगैरह किसी भी ग्रंथमें चैत्य शब्द का अर्थ साधु नहीं है, ऐसा धातु भी कोई नहीं है कि जिससे चैत्य शब्द साधु वाचक होवे, तो जेठमलने यह अर्थ किस आधारसे करा? परंतु इस से क्या ! जैसे कोई कुंभार, अथवा हजाम (नाई) ज्वाहिर के परीक्षक जौहरी को झूठा कहे, तो क्या बुद्धिमान पुरुष उस कुंभार,

वा हजाम को जौहरी मान लेंगे ? कदापि नहीं, तैसे ही ज्ञानवान् पूर्वाचार्यों के करे अर्थ असत्य ठहराके अक्षर ज्ञानसे भी भ्रष्ट जेठमल के करे अर्थ को सम्यक् दृष्टि पुरुष सत्य नहीं मानेंगे * इसवास्ते भोले लोकोंको अपन फंदेमें फंसानेके वास्ते जितना उद्यम करते हो उस से अन्य तो कुछ नहीं परंतु अनंत संसार रुलने का फल मिलेगा तथा ढूंढकों को हम पूछते हैं कि आनंद श्रावकने

---

*पूर्वाचार्योंने जैन सिद्धांतोंमें चैत्य शब्दका अर्थ ऐसे प्रतिपादन किया है-तथाहि:-

अरिहंतचेइयाणंति अशोकाद्यष्टमहाप्रातिहार्यरूपां पूजामर्हन्तीत्यर्हन्तस्तीर्थकरास्तेषां चैत्यानि प्रतिमालक्षणानि अर्हच्चैत्यानि इयमत्र भावना चित्तमन्तःकरणं तस्यभावे कर्मणि वा वर्णदृढादिलक्षणे घञि कृते चैत्यंभवति तत्राहर्तां प्रतिमाः प्रशस्तसमाधिचित्तोत्पादनादर्हच्चैत्यानि भण्यंते इत्यवशकसूत्रपंचमकायोत्सर्गाध्ययने ॥

तथा अरिहंतचेइयाणिं तेसिंचेव पडिमाओ तथा चिति सज्ञाने संज्ञानमुत्पाद्यते काष्ठकर्मादिषु प्रतिकृति दृष्ट्वा जहा अरिहंत पडिमा एसा इत्यावश्यकसूत्रचूर्णौ ॥

चितेर्लेप्यादिचयनस्य भावः कर्म वा चैत्यं तच्चसंज्ञाशब्दत्वात् देवताप्रतिबिम्बे प्रासद्धं ततस्तदाश्रयभूतं यद्देवतायागृहं तदप्युपचाराच्चैत्य मिति सूर्यप्रज्ञप्ति वृत्तौ द्वितीयदले ॥ चित्तस्य भावाः कर्माणि वा वर्णदृढादिभ्यः ष्यणवेति ष्यङि चैत्यानि जिनप्रतिमास्ता हि चन्द्रकान्त सूर्यकान्त मरकत मुक्ता शैलादि दलनिर्मिता अपि चित्तस्य भावेन कर्मणा वा साक्षात्तीर्थकरबुद्धिं जनयन्तीति चैत्यान्यभिधीयन्ते इति प्रवचनसारोद्धारवृत्तौ ॥

अन्यतीर्थीके देवके चारों निक्षेपे को वंदना त्यागी है कि केवल भाव निक्षेपा ही त्यागा है ? यदि कहोगे कि अन्य तीर्थी के देव के चारों निक्षेपे को वंदना करनी त्यागी है तो अरिहंत देवके चारों निक्षेपे वंदनीक ठेहरे, यदि कहोगे कि अन्यतीर्थी के देवके भावनिक्षेपेको ही वंदने का त्याग किया है तो तिनके अन्य तीन निक्षेप अर्थात् अन्य तीर्थीके देवकी मूर्त्ति वगैरह आनंद श्रावक को वंदनीक ठहरेंगे, इस वास्ते सोच विचार के काम करना, जेठमल लिखता है "जिन प्रतिमा का आकार जुदी तरहका है इस वास्ते अन्यतीर्थी तिसको अपना देव किस तरह माने ?" उत्तर-श्रीपार्श्वनाथ की प्रतिमाको अन्य दर्शनी वद्रीनाथ करके मानते हैं, शांतिनाथ की प्रतिमा को अन्य दर्शनी जगन्नाथ करके मानते हैं, कांगडे के किलेमें ऋषभदेवकी प्रतिमाको कितनेकलोक भैरव करके मानते हैं; तथा पहिलेकीप्रतिमा होवे जो कि कालानुसार किसी कारण से किसी ठिकाने जमीन में भंडारी होवे वोह जगह कोई अन्य दर्शनी मोल लेवे और जब वोह प्रतिमा उस जगह में से उस को मिलती है तो अपने घरमें से प्रतिमा के निकालने से वो अपने ही देव की समझ कर आप अन्य दर्शनी हुआ हुआ भी तिसप्रतिमा की अर्चा-पूजा करता है, और अपने देव तरीके मानता है, इस वास्ते जेठमल का लिखना कि अन्य दर्शनी जिन प्रतिमाको अपना देव करके नहीं मान सक्ते हैं सो बिलकुल असत्य है ॥

फेर लिखा है कि "चैत्यका अर्थ प्रतिमा करोगे तो तिस पाठमें आनंद श्रावकने कहा कि अन्यतीर्थी को, अन्यतीर्थीके देवको और अन्यतीर्थी की ग्रहणकरी जिन प्रतिमाको वांदू नहीं, बुलाऊं नहीं, दान देऊं नहीं, सो कैसे मिलेगा ? क्योंकि जिन प्रतिमाको बुलाना

और दान देना ही क्या ? " उत्तर–अरे ढूंढको ! सिद्धांतकी शैलि ऐसी है कि जिसकोजो संभवे तिसके साथ सो जोड़ना, अन्यथा बहुत ठिकाने अर्थ का अनर्थ होजावे,इसवास्ते वंदना नमस्कारतो अन्यतीर्थी आदि सबके साथ जोड़ना, और दानादिक अन्यतीर्थी के साथ जोड़ना,परंतु प्रतिमाके साथ नहीं जोड़ना, जैसे श्रीप्रश्न व्याकरण सूत्र में तीसरे महाव्रतके आराधने निमित्त आचार्य,उपाध्याय प्रमुख की वस्त्र, पात्र, आहारादिक से वैयावृत्य करनेका कहा है सो जैसे सर्व की एक सरिखी रीतिसे नहीं परंतु जैसे जिसकी उचित होवे और जैसा संभव होवेतैसे तिसकी वेयावच्च समझने की है; तैसे इस पाठमें भी बुलाऊं नहीं, अन्नादिक देऊं नहीं, यह पाठ अन्यतीर्थी के गुरुकेही वास्ते है,यदि तीनों पाठ की अपेक्षा मानोगे तो श्रीमहावीर स्वामीके समयमें अन्यतीर्थी के देव हरि, हर,ब्रह्मा वगैरह कोई साक्षात् नहीं थे, तिनकी मूर्त्तियां ही थीं;तो तुमारे करे अर्थानुसार आनंद श्रावक का कहना कैसे मिलेगा ? सो विचार लेना! कदापि तुम कहोगे कि कितनीक देवीयां अन्नादिक लेती हैं तिनकी अपेक्षा यह पाठ है तो यह भी ठीक नहीं है, क्योंकि देवीकी भी स्थापना अर्थात् मूर्त्ति के पासही अन्नादिक चढ़ाते हैं, तोभी कदाचित् साक्षात् देवी देवताको किसी ढूंढक श्रावक श्राविका या जेठमल वगैरह ढूंढकोंके मातापिताने अन्नादिक चढ़ाया होवे अथवा साक्षात् बुलाया होवे तो बताओ ?

फेर जेठमल लिखताहै कि "जिनप्रतिमा को अन्यमतिने अपने मंदिर में स्थापनकर लिया, तो तिससे जिन प्रतिमा का क्या बिगड़ गया कि जिससे तुम तिसको मानने योग्य नहीं कहते हो" उत्तर–यदि कोई ढूंढकनी या किसी ढूंढक की बेटी या कोई ढूंढक का साधु

मदिरा पीनेवाली, मांस खानेवाली, कुशील सेवने वाली वेश्या के घर में अथवा मांसादि वेचने वाले कसाई के घर में जारहे, तो तुम ढूंढक तिसको जाके वंदना करो कि नहीं? अथवा न्यातमें लेवो के नहीं ? यदि कहोगे कि न वंदना करेंगे और न न्यात में लेंगे तो ऐसे ही जिन प्रतिमा संबंधि समझ लेना ।

फेरजेठमलने लिखा है कि "तुमारे साधु अन्य तीर्थीके मठ में उतरे होवे तो तुमारे गुरु खरे या नहीं ? "-उत्तर-अरे, बुद्धि के दुश्मनो! ऐसे दृष्टांत लिखके बिचारे भोले भद्रिक जीवों को फसाने का क्यों करते हो ? अन्यतीर्थी के आश्रम में उतरने से वोह साधु अवंदनीक नहीं हो जाते हैं, क्योंकि वोह स्वेच्छासे वहां उतरे हैं,और स्वेच्छा से ही वहांसे विहार करने हैं,और उनसाधुओं को अन्य दर्शनियों ने अपने गुरु करके नहीं माना है, तैसे ही अन्य तीर्थीयों की ग्रहण करी जिनप्रतिमासें से जिनप्रतिमा पणा चला नहीं जाता है, परंतु उस स्थान में वोह वंदने पूजने योग्य नहीं है ऐसे समझना ॥

पुनः जेठमलने लिखा है कि "द्रव्य लिंगी पासथ्था वेषधारी निन्हव प्रमुख को किस बोल में आनंदने वोसराया है?" उत्तर-

साधु दीक्षालेता है तब' करेमि भंते' कहता है, और पांच महाव्रत उच्चरता है तिसको भी पासथ्था, वेषधारी, निन्हव प्रमुखको वंदना नमस्कार करने का त्याग होना चाहिये, सो पांच महाव्रत लेनेसमय तिसने तिनका त्याग किस बोलमें किया है सो बताओ ? परंतु अरे अकलके दुश्मनो ! सम्यगदृष्टि श्रावकों को जिनाज्ञा से बाहिर ऐसे पासथ्थे, वेषधारी, निन्हव प्रमुख को वंदना नमस्कार करने का त्यागतो है ही, इस बाबत पाठमें नहीं कहा तो इसमें क्या

विरोध है? प्रश्नके अंत में जेठमलने लिखा है कि "आनंद श्रावक ने अरिहंत के चैत्य तथा प्रतिमाको वंदना करी होवे तो बताओ" इस का उत्तर–प्रथम तो पूर्वोक्त पाठसेही तिसने अरिहंतकी प्रतिमाकी वंदना पूजा करी है ऐसे सिद्ध होता है; तथा श्रीसमवायांग सूत्रमें सूत्रोंकी हुंडी है तिसमें श्रीउपासक दशांग सूत्रकी हुंडी में कहा है कि –

से किं तं उवासगदसाउ उवासगदसासूणं उवासयाणं नगराइं उज्जाणाइं चेइयाइं वणखंडारायाणो अम्मापियरो समोसरणाइं धम्मायरिया ॥

अर्थ–उपासक दशांगमें क्या कथन है? उत्तर–उपासक दशांगमें श्रावकों के नगर, उद्यान, 'चेइआइं' चैत्य अर्थात् मंदिर, वनखंड, राजा, माता, पिता, समोसरण, धर्माचार्यादिकों का कथन है ॥

इससे समझना कि आनंदादि दश श्रावकोंके घरमें जिनमंदिर थे और उन्होंने जिनमंदिर कराये भी थे, और वोह पूजा वंदना प्रमुख करते थे, यद्यपि उपासक दशांग में यह पाठ नहीं है, क्योंकि पूर्वाचार्योंने सूत्रों को संक्षिप्त करदिया है, तथापि समवायांगजी में तो यह बात प्रत्यक्ष है; इस वास्तेजरा ध्यान देकर शुद्ध अंतःकरण से तपास करोगे तो मालूम होजावेगा कि आनंदादि अनेक श्रावकोंने जिन प्रतिमा पूजी है सो सत्य है ॥ इति ॥

(१७) अंबड श्रावक ने जिन प्रतिमा वांदी है।

(१७) वें प्रश्नोत्तर में जेठमलने अंबड तापस के अधिकारका पाठ आनंद श्रावक के पाठके सदृश ठहराया है सो असत्य है इसलिये श्री उववाइसूत्र का पाठ अर्थसहित लिखते हैं –तथाहि –

अंबडस्सणं परिवायगस्स नो कप्पइ अण्ण उत्थिए वा अण्णउत्थिय देवयाणि वा अण्ण-उत्थियपरिग्गहियाइं अरिहंत चेइयाइं वा वंदित्तए वा नमंसित्तए वा णण्णत्थ अरिहंते वा अरिहंतचेइआणिवा ॥

अर्थ–अंबड परिव्राजक को न कल्पे अन्यतीर्थी,अन्यतीर्थी के देव और अन्यतीर्थी के ग्रहण किये अरिहंत चैत्य जिनप्रतिमा को वंदना नमस्कार करना, परंतु अरिहंत और अरिहंत की प्रतिमाको वंदना नमस्कार करना कल्पे* ॥

इस पूर्वोक्त पाठ को आनंद के पाठ के सदृश जेठमल ठहराता है परंतु आनंद गृहस्थी था और अंबड संन्यासी अर्थात् परिव्राजक था, इसवास्ते इन दोनोंका पाठ एकसरिखा नहीं हो सकता,तथा आनंदका पाठ हमने पूर्व लिखदिया है तिसकेसाथ इसपाठको मिलानेसे मालूम होजवेगा कि आनंद के पाठमें अन्य दर्शनीको अशन, पान, खादम, स्वादम देना नहीं,वारंवार देना नहीं, विना बुलाये बुलाना नहीं,वारंवार बुलाना नहीं,यह पाठ है;और इसमें वोह पाठ नहीं है

---

*टीका–अन्नउत्थिएवत्ति अन्ययूथिका अर्हत्संघापेक्षया अन्ये शाक्यादयः चेइयाइंति अर्हच्चैत्यानि जिनप्रतिमा इत्यर्थः णण्ण त्थ अरिहंतेवत्ति न कल्पते इह योयं नेति प्रतिषेधः सोन्यत्रार्हद्भ्यः अर्हतो वर्जयित्वेत्यर्थः स हि किल परिव्राजक वेषधारकोतोन्ययूथिक देवता वन्दनादिनिषेधे अर्हतामपि वन्दनादि निषेधो माभूदितिकृत्वा णण्णत्थे त्याद्यधीतम् ॥

जेठमल लिखताहै कि "आनंदादिक श्रावकोंने व्रत आराधे, पडिमा अंगीकार करीं, संथारा किया, यह सर्व सूत्रों में कथन है, परंतु कितना धन खरचा और किस क्षेत्र में खरचा सो नहीं कहा है"॥

उत्तर–अरे भाई ! सूत्र में जितनी बात की प्रसंगोपात जरूरत थी, उतनी कही है, और दूसरा नहीं कही है, और जो तुम विना कही कुल वातोंका अनादर करतेहो तो आनंदादिक दश ही श्रावकों ने किस मुनिको दान दिया, वो किस मुनिको लेने के वास्ते सामने गये, किस मुनिको छोड़ने वास्ते गये, किस रीति से उन्होंने प्रतिक्रमण किया इत्यादि बहुत वातें जोकि श्रावकोंके वास्ते संभवितहैं कहीनहीं हैं, तो क्या वो उन्होंने नहीं करी है? नहीं जरूर करी हैं, तैसे ही धन खरचने संबंधी बातभी उसमें नहीं कहीहै, परंतु खरचा तो जरूर हा है, और हम पूछते हैं कि आनंदादि श्रावकों ने कितने उपाश्रय कराये सो बात सूत्रों में कही नहीं है, तथापि तुम ढूंढक

तथा श्रीठाणांगसूत्रके चौथे ठाणेके चौथे उद्देशेमें श्रावक शब्दका अर्थ टीकाकार महाराज ने किया है, उसमें भी सात क्षेत्रमें धन लगाने से श्रावक बनता है, अन्यथा नहीं तथाहि:—

श्रान्ति पचन्ति तत्त्वार्थ श्रद्धानं निष्ठां नयन्तीति श्रास्ताथा वपन्ति गुणवत्सप्तक्षेत्रेषु धनबीजानि निक्षिपन्तीति वास्तथा किरन्ति क्लिष्टकर्मरजो विक्षिपन्तीति कास्ततःकर्मधारये श्रावका इतिभवति॥ यदाह ! श्रद्धालुतां श्राति पदार्थ चिन्तनद्धनानि पात्रेषु वपत्यनारतं । किरत्यपुण्यानि सुसाधु सेवनादथापि तं श्रावक माहुरंजसा।

तथा श्रीदानकुलकमें सातक्षेत्रमेंबोया धन यावत् मोक्षफलका देनेवाला कहाहै तथाहि:—

जिणभवणबिंब पुत्थय संघसरूवेसु सत्त खित्तेसु।
वविअं धणंपि जायइ सिवफलयमहो अणंतगुणं ॥ २० ॥

इत्यादि अनेकशास्त्रों में सप्तक्षेत्र विषयिक वर्णनहै, परंतु ज्ञानदृष्टिविना कैसे दिखे।

लोग उपाश्रय करातेहो सो किस शास्त्रानुसार करातेहो सोदिखाओ*।

और जेठमल लिखता है कि "आनंदादिक श्रावकों ने संघ निकाला, तीर्थ यात्रा करी, मंदिर वनवाये, प्रतिमा प्रतिष्ठी वगैरह बातें सूत्र में होवे तो दिखाओ" उत्तर–आनंदादिक श्रावकों के जिनमंदिरों का अधिकार श्रीसमवायांग सूत्र में है, आवश्यक सूत्र में तथा योग शास्त्रमें श्रेणिक राजाके बनवाये जिनमंदिर का अधिकार है, वग्गुर श्रावक ने श्री मल्लिनाथजी का मंदिर बंधाया सो अधिकार श्री आवश्यक सूत्र में है, तथा उसी सूत्र में भरत चक्रवर्त्ती के अष्टापद पर्वत पर चउवीस जिनबिंबस्थापन कराने का अधिकार है, इत्यादि अनेक जैनशास्त्रों में कथन है, तथापि जैसे नेत्र विना के आदमी को कुछ नहीं दिखता है, तैसे ही ज्ञानचक्षु विना के जेठमल और उसके ढूंढकों को भी सूत्र पाठ नहीं दिखता है, तथा जेठमल ने कुयुक्तियों करके सात क्षेत्र उथापे हैं तिन का अनुक्रमसे उत्तर– १-२ क्षेत्र जिनबिंब तथा जिन भवन– इसकी बाबत जेठमल ने लिखा है कि "मंदिर प्रतिमा तो पहलेथे ही नहीं, और जो थे ऐसे कहोगे तो किसने कराये वगैरह अधिकार सूत्र में दिखाओ" इसका उत्तर प्रथम हमने लिख दिया है, और उस से दोनों क्षेत्रसिद्ध होते हैं॥

३ क्षेत्र शास्त्र–इसकी बाबत जेठमल लिखता है कि "पुस्तक तो महावीर स्वामी के पीछे (९८०) वर्षे लिखे गये हैं इससे पहिले तो पुस्तक ही नहीं थे, तो पुस्तक के निमित्त द्रव्य निकालने का क्या कारण ?" उत्तर–इस बात का निर्णय प्रथम हम कर आए हैं, तथा

*पंजाब देशमें थानक, जैनसभा वगैरह नाम से मकान बनाये जाते हैं; जिनके निमित्त थानक, या जैनसभा, या धर्मके नामसे चढ़ावा भी लोगों से लिया जाता है॥

श्री अनुयोगद्वार सूत्र में कहा है कि "दव्वसुयं जं पत्तय पुथ्थय लिहियं" द्रव्य श्रुत सो जो पाने पुस्तक में लिखा हुआ है*, इससे सूत्रकार के समय में पुस्तक लिखे हुए सिद्ध होते हैं, तथा तुमारे कहे मूजिब उस समय बिलकुल पुस्तक लिखे हुए थे ही नहीं तो श्रीऋषभदेव स्वामी की सिखलाई अठारां प्रकार की लिपी का व्यवच्छेद होगया था ऐसे सिद्ध होगा और सो बिलकुल झूठ है, और जो अक्षर ज्ञान उस समय होवे ही नहीं तो लौकिक व्यवहार कैसे चले ? अरे ढूंढको ! इससे समझो कि उस समय में पुस्तक तो थे, फकत सूत्रही लिखे हुए नही थे और सो देवर्द्धी गणि क्षमाश्रमण ने लिखे हैं परंतु (९८०) वर्षे पुस्तक लिखेगये हैं, ऐसे तुमारे जेठमल ने लिखा है सो किस शास्त्रानुसार लिखा है ? क्योंकि तुमारे माने (३२) सूत्रों में तो यह बात है ही नहीं ॥

४-५ मा क्षेत्र साधु, और साध्वी इस की बाबत जेठमल ने लिखा है कि "साधु के निमित्त द्रव्य निकाल के तिसका आहार,

---

* अनुयोगद्वार सूत्र के पाठ की

टीका—तृतीयभेद परिज्ञानार्थमाह सेकिंतमित्यादि अत्र निर्वचनं जाणगसरीर भवियसरीर वइरित्तं दव्वसुतमित्यादि यत्र ज्ञशरीर भव्यशरीरयाः सबंधि अनन्तरोक्त स्वरूपं न घटत तत्ताभ्यां व्यतिरिक्तं भिन्न द्रव्यश्रुतं किं पुनस्तदित्याह पत्तयपुथ्थय लिहियंति पत्र काणि तलताल्यादिसंबंधीनि तत्संघातनिष्पन्नास्तु पुस्तकास्ततश्च पत्रकाणि च पुस्तकाश्च तेषु लिखतं पत्रकपुस्तक लिखतं अथवा पोथ्थयंति पोतं वस्त्रं पत्रकाणिच पोतंच तेषु लिखतं पत्रकपोत लिखितं ज्ञशरीर भव्यशरीर व्यतिरिक्तं द्रव्यश्रुतं अत्रच पत्रकादि लिखितश्रुतस्य भावश्रुत कारणत्वात् द्रव्यत्वमवसेयमिति ॥

उपधि, उपाश्रय, करावे तो सो साधुको कल्पे नहीं, तो उस निमित्त धन निकालने का क्या कारण ? इस बात पर श्री दशवैकालिक, आचारांग, निशीथ वगैरह सूत्रों का प्रमाण दिया है " तिसका उत्तर–साधु साध्वी के निमित्त किया आहार, उपधि, उपाश्रय प्रमुख तिनको कल्पता नहीं है, सो बात हमभी मान्य करते हैं; साधु अपने निमित्त बना नहीं लेते हैं और सुज्ञ श्रावक देते भी नहीं है, परंतु श्रावक अपनी शुद्ध कमाई के द्रव्य में से साधु, साध्वी को आहार, उपधि, वस्त्र, पात्र प्रमुख से प्रतिलाभते हैं, परंतु साधु साध्वी के निमित्त निकाले द्रव्य में से प्रतिलाभते नहीं हैं, और साधु लेते भी नहीं हैं, इन दोक्षेत्रके निमित्त निकाला द्रव्य तो किसी मुनिको महाभारत व्याधि होगया होवे उसके हटाने वास्ते किसी हकीम आदि को देना पड़े, अथवा किसी साधुने काल किया होवे तिस में द्रव्य खरचना पड़े इत्यादि अनेक कार्य्यों में खरचा जाता है तथा पूर्वोक्त काम में भी जो धनाढ्य श्रावक होते हैं तो वो अपने पास से ही खरचते हैं, परंतु किसी गाममें शक्ति रहित निर्धन श्रावक रहते होवें और वहां ऐसा कार्य आनपड़े तो उसमें से खरचा जाता है।

६–७ मा क्षेत्र श्रावक, और श्राविका इनकी बाबत जेठमल लिखता है कि ' पुण्यवान् होवे सो खैरात का दान लेवे नहीं " परंतु अकलके बारदान ढूंढक भाई! समझो तो सही सब जीव एक सरीखे पुण्यवान् नहीं होते हैं, कोई गरीब कंगालभी होते हैं कि जिन को खाने पीने की भी तंगी पड़तीहै तो तैसे गरीब सधर्मीको द्रव्य देकर मदद करनी तिनको आजीविकामें सहायता देनी यह धनाढ्य श्रावकों का फरज है इस वास्ते धनी गृहस्थी अपने सह धर्म्मियों को मदद करते हैं, और जो अपने में शक्ति न होवे तो तिस क्षेत्र

निमित्त निकाले धन में से सहायता करते हैं और सहधर्म्मी को सहायता करे, यह कथन श्री उत्तराध्ययन सूत्र के अठाईसमें अध्ययन में है *

जेठमल लिखता है कि "श्रावक दीन अनाथ को अंतराय देवे नहीं" यह वात सत्य है, परंतु पूर्वोक्त लेखको विचार के देखोगे तो मालूम हो जावेगा कि इससे दीन अनाथ को कोई अंतराय नहीं होती है, तथा इस रीति से श्रावकों को दिया द्रव्य खैरायतका भी नहीं कहाता है ऊपरके लेखसे शास्त्रोंमें सात क्षेत्र कहे हैं, तिनमें द्रव्य लगाने से अच्छे फल की प्राप्ति होती है, और सुश्रावकों का द्रव्य उन क्षेत्रों में खरच होता था, और हो रहा है, ऐसे सिद्ध होता है ॥

---

*श्रीउत्तराध्ययन सूत्रका पाठ यह है :—

निस्संकिय निक्कंखिय निवितिगिच्छा अमूढ दिट्ठीय ।
उववूह थिरी करणे वच्छल्ल पभावणे अट्ठ ॥ ३१ ॥

टीका–निःशंकितं देशतःसर्वतश्चशंकारहितत्वंपुनर्निःकांक्षितत्वं शाक्याद्यन्यदर्शनग्रहणवाञ्छारहितत्वं निर्विचिकित्स्य फलं प्रति सन्देहकरणं विचिकित्सा निर्गता विचिकित्सा निर्विचिकित्सा तस्य भावो निर्विचिकित्स्यं किमेतस्य तपः प्रभृतिक्लेशस्य फलं वर्त्तते नवेति लक्षणं अथवा विदन्तीति विदः साधवस्तेषां विजुगुप्सा किमेते मल मलिनदेहाः अचित्तपानीयेन देहं प्रक्षालयतां को दोषः स्यादित्यादि निन्दा तदभावो निर्विजुगुप्सं प्राकृतार्षत्वात्सूत्रे निर्विचिकित्स्यं इति पाठः अमूढा दृष्टि रमूढदृष्टिः ऋद्धिमत्कुतीर्थिकानां परिव्राजकादीनामृद्धिं दृष्ट्वा अमूढा किमस्माकं दर्शनं यत्सर्वथादरिद्राभिभूतं इत्यादि मोहरहिता दृष्टिर्बुद्धिरमूढदृष्टिः यत्परतीर्थिनांभूयसीमृद्धिं दृष्ट्वापि स्वकीयेऽकिञ्चने धर्मेमतेः स्थिरीभावः। अयंचतुर्विधोप्याचार

इस प्रसंग में जेठमल ने श्रीदशवैकालिकसूत्र की यह गाथा लिखी है-तथाहिः-

पिंड सिज्जं च वत्थं च चउत्थं पायमेवय।
अकप्पियं न इच्छेज्जा पडिगाहिंच कप्पियं।४८।

इस श्लोकका अर्थ प्रकट पणे इतना ही है कि आहार, शय्या वस्त्र और चौथा पात्र यह अकल्पनिक लेने की इच्छा न करे, और कल्पनिक लेलेवे तथापि जेठमल ने दंडे को अकल्पनिक ठहराने वास्ते पूर्वोक्त श्लोक के अर्थमें 'दंडा' यह शब्द लिख दिया है और तिससे भी जेठमल दंडे को अकल्पनिक सिद्ध नहीं कर सका है, बलकि जेठमल के लिखने से ही अकल्पनिक दंडे का निषेध करने से कल्पनिक दंडा साधुको ग्रहण करना सिद्ध होगया, आहार, शय्या, वस्त्र, पात्रवत्। तो भी साधुको दंडा रखना सूत्र अनुसार है, सो ही लिखते हैंः-

श्री भगवतीसूत्र में त्रिविधादे दंडा रखना कहा है सो पाठ प्रथम प्रश्नोत्तर में लिखा है।

श्री ओघनिर्युक्ति सूत्र में दंडे की शुद्धता निमित्त तीन गाथा कही हैं।

अन्तरंग उक्तोऽथबाह्याचारमाह। उपबृंहणा दर्शनादिगुणवतां प्रशंसा पुनः स्थिरीकरणं धर्मानुष्ठानं प्रति सीदतां धर्मवतां पुरुषाणां साहाय्यकरणेनधर्मेस्थिरीकरणं पुनर्वात्सल्यं साधर्मिकाणां भक्तपानाद्यैर्भक्तिकरणं पुनः प्रभावनाच स्वतीर्थोन्नतिकरणमेतेऽष्टौ आचाराः सम्यक्त्वस्य ज्ञेया इत्यर्थः ॥ ३१ ॥

श्री दशवैकालिक सूत्र में विधिवादे 'दंडगंसिवा' इसशब्द करके दंडा पडिलेहना कहा है।

श्रीप्रश्न व्याकरण सूत्र में पीठ, फलक, शय्या, संथारा, वस्त्र, पात्र, कंबल, दंडा, रजोहरण, निषद्या, चोलपट्टा, मुखवस्त्रिका, पाद प्रोंछन इत्यादि मालिक के दिये विना अदत्ता दान, साधु ग्रहण न करे; ऐसे लिखा है। इससे भी साधु को दंडा ग्रहण करना सिद्ध होता है, अन्यथा विना दिये दंडे का निषेध शास्त्रकार क्यों करते? श्री प्रश्न व्याकरण सूत्रका पाठ यह है।

अवियत्त पीढ फलग सेज्जा संथारगवत्थ पाय कंबल दंडगर ओहरण निसेज्जं चोल-पट्टग मुहपोत्तिय पादपुंछणादि भायणंभंडो-वहि उवगरणं ॥

इत्यादि अनेक जैन शास्त्रों में दंडेका कथन है, तो भी अज्ञानी ढूंढक विना समझे विलकुल असत्य कल्पना करके इस बातका खंडन करते हैं, (जो कि किसी प्रकार भी हो नहीं सकता है) सो केवल उनकी मूर्खता का ही सूचक है। प्रश्नके अंतमें जेठमल ढूंढकने "सात क्षेत्रों में धन खरचाते हो उससे चहुट्टेके चोर होतेहो" ऐसा महा मिथ्यात्वके उदयसे लिखाहै परन्तु उसका यह लिखना ऊपरके दृष्टांतोंसे असत्य सिद्ध होगया है क्योंकि सूत्रों में सात क्षेत्रों में द्रव्य खरचना कहा है, और इसी मूजिब प्रसिद्ध रीते श्रावक लोग द्रव्य खरचते हैं, और उससें वो पुण्यानुबंधि पुण्य बांधते हैं, इतना ही नहीं, बलकि बहुत प्रशंसाके पात्र होते हैं यह बात कोई छिपी हुई नहीं है परन्तु असली तहकीकात करनेसे

मालूम होता है कि चहुट्टे के चोर तो वोही हैं जो सूत्रों में कही हुई बातों को उत्थापते हैं, सूत्रों को उत्थपाते हैं, अर्थ फिरा लेते हैं शास्त्रोक्त भेषको छोड़के विपरीत भेष में फिरते हैं इतनाहीनहीं, परन्तु शासन के अधिपति श्रीजिनराज के भी चोर हैं और इस से इनको निश्चय राज्यदंड (अनंत संसार) प्राप्तहोनेवाला है॥

(१९) द्रौपदी ने जिन प्रतिमा पूजी है।

१९ में प्रश्नोत्तर में द्रौपदीके जिनप्रतिमा पूजने का निषेध करने वास्ते जेठमल ने बहुत कुतर्कें करी हैं, परन्तु वे सर्व झूठ हैं इस वास्ते क्रम से तिनके उत्तर लिखते हैं॥

श्रीज्ञाता सूत्रमें द्रौपदी ने जिन मंदिर में जाकर जिन प्रतिमा की १७ सतरे भेदे पूजा करी, नमोथ्थुणं कहा, ऐसा खुलासा पाठ है—यतः—

तएणं सा दोवइ रायवर कन्ना जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ मज्जणघर मणुप्पविसइ ण्हाया कयबलि कम्मा कयकोउय मंगल पायच्छित्ता सुद्ध पावेसाइं वत्थाइं परिहियाइं मज्जण घराओ पडिणिक्खमइ जेणेव जिनघरे तेणेव उवागच्छइ जिनघर मणुपविसइ पविसइत्ता आलोए जिणपडिमाणं

पणामं करेइ लोमहत्थयं परामुसइ एवं जहा सुरियाभो जिणपडिमाओ अच्चेइ तहेव भाणियव्वं जावधुवं डहइ धुवं डहइत्ता वामं जाणु अंचेइ अंचेइत्ता दाहिण जाणु धरणी तलंसि निहट्टु तिखत्तो मुद्धाणं धरणीतलंसि निवेसेइ निवेसइत्ता ईसिं पच्चुणमइ करयल जाव कट्टु एवं वयासि नमोत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं जाव संपत्ताणं वंदइ नमंसइ जिन घराओ पडिणिक्खमइ ॥

अर्थ–तब सो द्रौपदी राजवरकन्या जहां स्नान मज्जन करने का घर (मकान) है तहां आवे, मज्जन घर में प्रवेश करे, स्नान करके किया है वलिकर्म पूजाकार्य अर्थात् घरदेहरे में पूजा करके कौतुक तिलकादि मंगल दधि दूर्वा अक्षतादिक सो ही प्रायश्चित्त दुःस्वप्नादि के घातक किये हैं जिसने शुद्ध और उज्ज्वल बड़े जिन मंदिर में जाने योग्य ऐसे वस्त्र पहिर के मज्जन घर में से निकले, जहां जिनघर है वहां आवे, जिन घर में प्रवेश करे, करके देखते ही जिनप्रतिमा को प्रणाम करे पीछे मोरपीछी ले, लेकर जैसे सूर्याभ देवता जिन प्रतिमाको पूजे तैसे सर्व विधि जाणना, सो सूर्याभका अधिकार यावत् धूपदेने तक कहना। पीछे धूप देके वामजानु (खब्बा गोड़ा) ऊंचा रखे, जिमणा जानु (सज्जा गोड़ा) धरती पर स्थापन करे, करके तीन वेरी मस्तक पृथ्वी पर स्थापे, स्थापके थोड़ीसी नीचे

झुक के, हाथ जोड़के,दशों नखों को मिलाके मस्तक पर अंजली करके ऐसे कहे, नमस्कार होवे अरिहंत भगवंत प्रति यावत् सिद्धिगतिको प्राप्त हुएहैं, यहां यावत् शब्दसे संपूर्ण शक्रस्तव कहना, पीछे वंदना नमस्कार करके जिन घरसे निकले ॥

पूर्वोक्त प्रकारके सूत्रोंमें कथन हैं तो भी मिथ्यादृष्टि ढूंढिये जिन प्रतिमा की पूजा नहीं मानते हैं सो तिनको मिथ्यात्वका उदय है ॥

जेठमल ने लिखाहै कि"किसीने वीतरागकी प्रतिमा पूजी नहीं है और किसी नगरी में जिनचैत्य कहे नहीं है" इसका उत्तर-श्री उववाइ सूत्र में चंपा नगरी में "बहुला अरिहंत चेइयाइं" अर्थात् बहुते अरिहंतके चैत्य हैं ऐसे कहा है, और अन्य सब नगरीयोंके वर्णन में चंपानगरी की भलावणा सूत्रकार ने दी है, तो इससे ऐसे निर्णय होता है कि सब नगरीयों में महल्ले महल्ले चंपानगरी की तरह जिन मंदिर थे, तथा आनंद, कामदेव,शंख, पुष्कली प्रमुख श्रावकों तथा श्रेणिक, महाबल प्रमुख राजाओं की करी पूजाका अधिकार सूत्रोंमें बहुत जगह है इसवास्ते जिस जगह पूजा का अधिकार है उस जगह जिनमंदिर तो है ही इस में कोई शक नहीं तथा तिन श्रावकों के पूजा के अधिकार में "कयबलि कम्मा" शब्द खुलासा है जिसका अर्थ स्वपर सब दर्शन में 'देवपूजा' ही होता है, इसवास्ते बहुत श्रावकों ने जिन प्रतिमा पूजी है और बहुत ठिकाने जिन मंदिर थे ऐसे खुलासा सिद्ध होता है ॥

जेठमल ने लिखाहैकि" फकत द्रौपदी ने ही पूजा करी है और सोभी सारी उमर में एक हीवार करी है" उत्तर-इस कुमति के कथन का सार यह है कि पूजा के अधिकार में स्त्री कही तो कोई श्रावक क्यों नहीं कहा ? अरे मूर्खों के भाई ! रेवती. श्राविकाने औषध

विहराया तो किसी श्रावक ने विहराया क्यों नहीं कहा ? तथा इस अवसर्पिणी में प्रथम सिद्ध मरुदेवी माता हुई, श्री वीर प्रभुका अभिग्रह पांच दिन कम ६ महीने चंदन बालाने पूर्ण किया, संगम के उपसर्ग से ६ महीने वत्सपाली बुढिया क्षीर से प्रभु को प्रतिलाभती भई, तथा इस चउवीसी में श्रीमल्लिनाथ जी अनंती चउवीसीयां पीछे स्त्री पणे तीर्थंकर हुए, इत्यादिक बहुत बड़े २ काम इस चउवीसी में स्त्रियोंने किये हैं प्रायः पुरुष तो शुभ कार्य करे उसमें क्या आश्चर्य है ! परंतु स्त्रियों को करना दुर्लभ होता है, पुरुष को तो पूजाकी सामग्री मिलनी सुगम है, परंतु स्त्री को मुश्कल है, इसवास्ते द्रौपदी का अधिकार विस्तार से कहा है, यदि स्त्रीने ऐसे पूजा करी तो पुरुषों ने बहुत करी हैं इस में क्या संदेह है ? कुछ भी नहीं । और जो कहा है कि एक ही वार पूजाकरी कही है पीछे पूजा करी कहीं भी नहीं कही है इस का उत्तर–प्रतिमा पूजनी तो एक वार भी कही है, परतु द्रौपदी ने भोजन किया ऐसे तो एक वार भी नहीं कहा है तो तुमारे कहे मूजब तो तिसने खाया भी नहीं होवेगा ! तथा तुंगीया नगरीके श्रावकों नेसाधुको एक ही समय वंदना करी कही है, तो क्या दूसरे समय वंदना नहीं करी होगी ? जरा विचार करो कि लग्न (विवाह) के समय मोहकी प्रबलता में भी ऐसे पूर्णोल्लाससे जिन पूजा करी है तो दूसरे समय अवश्य पूजा करीही होवेगी इसमें क्या संदेह है? परंतु सूत्रकार को ऐसे अधिकार वार-वार कहने की जरूरत नहीं है, क्योंकि आगमकी शैली ऐसी ही है, और उस को जानकार पुरुष ही समझते हैं; परंतु तुमारे जैसे बुद्धिहीन मूर्ख नहीं समझते हैं, सो तुमारा मिथ्यात्व का उदय है।

जेठमलने लिखा है कि "पद्मोत्तरराजा के वहां द्रौपदीने बेले

बेलेके पारणे आयंबिलका तप किया परंतु पूजातो नहीं करी" उत्तर-अरे भाई! इतना तो समझो कि तपस्या करनी सो तो स्वाधीन बात है और पूजा करने में जिनमंदिर तथा पूजाकी सामग्री आदि का योग मिलना चाहिये, सो पराधीन तथा संकट में पड़ी हुई द्रौपदी उस स्थल में पूजा कैसे कर सक्ती ? सो विचार के देखो!

जेठमल ने लिखा है कि "द्रौपदी ने पूर्व जन्म में सात काम अयोग्य करे,इसवास्ते तिसकी करी पूजा प्रमाण नहीं"उत्तर-इससे तो ढूंढक और बुद्धिहीन ढूंढक शिरोमणि जेठमल श्रीमहावीर स्वामीको भी सच्चेतीर्थंकर नहीं मानते होवेंगे ! क्योंकि श्री महावीरस्वामी के जीवने भी पूर्व जन्म में कितनेक अयोग्य काम करे थे- जैसे कि-

(१) मरीचिके भवमें दीक्षा विराधी सो अयोग्य।

(२)त्रिदंडीका भेष बनाया सो अयोग्य।

(३) उत्सूत्र की प्ररूपणा करी सो अयोग्य।

(४) नियाणा किया सो अयोग्य।

(५) कितनेही भवों में संन्यासी होके मिथ्यात्व की प्ररूपणा करी सो अयोग्य।

(६) कितनेही भवों में ब्राह्मण होके यज्ञ करे सो अयोग्य।

(७) तीर्थंकर होके ब्राह्मणके कुलमें उत्पन्न हुए सो अयोग्य।

इत्यादि अनेक अयोग्य काम करेतो क्या पूर्वादि जन्ममें इन कामों के करनेसे श्रीमन्महावीर अरिहंत भगवंत को तीर्थंकर न मानना चाहिये ? मानना ही चाहिये, क्योंकि कर्मवशवर्त्ती जीव अनेक प्रकार के नाटक नाचता है, परंतु उससे वर्त्तमान में तिसके उत्तमपणे को कुछभी बाधा नहीं आती है ; तैसे ही द्रौपदी की करी

जिनप्रतिमा की पूजा श्रावक धर्मकी रीतिके अनुसार है, इसवास्ते सोभी मानना ही चाहिये, न माने सो सूत्रविराधक है ।

जेठमल ने लिखा है कि "द्रौपदीकी पूजा में भलामणभी सूर्याभ कृत जिनप्रतिमा की पूजाकी दी है परंतु अन्य किसी की नहीं दी है" उत्तर–सूर्याभ की भलामण देने का कारण तो प्रत्यक्ष है कि जिन प्रतिमाकी पूजाका विस्तार श्रीदेवर्धिगणि क्षमाश्रमणजी ने रायपसेणी सूत्रमें सूर्याभ के अधिकारमें ही लिखा है, सो एक जगह लिखा सब जगह जान लेना, क्योंकि जगह जगह विस्तारपूर्वक लिखने से शास्त्रभारी हो जाते हैं, और आनंद कामदेवादि की भलामण नहीं दी, तिस का कारण यह है कि तिनके अधिकार में पूजा का पूरा विस्तार नहीं लिखा है तो फेर तिनकी भलामण कैसे देवें ? तथा यह भलामणा तीर्थंकर गणधरों ने नहीं दी है, किंतु शास्त्र लिखने वाले आचार्यने दी है, तीर्थंकर महाराजने तो सर्व ठिकाने विस्तार पूर्वक ही कहा होगा परंतु सूत्र लिखने वालेने सूत्र भारी हो जाने के विचार से एक जगह विस्तार से लिख कर और जगह तिस की भलामणा दी है * ।

तथा आनंद श्रावक को सूत्र में पूर्ण बाल तपस्वी की भला-

---

*जैसे ज्ञातासूत्र में श्रीमल्लिनाथ स्वामीके जन्म महोत्सवकी भलामण जंबूद्वीप पन्नत्ति सूत्रकी दी है सो पाठ यह है—

तेणं कालेणं तेणं समएणं अहोलोगवत्थव्वाओ अट्ठ दिसाकुमारिय महत्तरियाओ जहा जंबूद्दीवपण्णत्तिए सव्वं जम्मणं भाणियव्वं णवरं मिहिलियाए णयरीए कुंभरायस्स भवणंसि पभावइए देवीए अभिलावो जोएयव्वो जाव णंदीसरवर दीवे महिमा ॥

इत्यादि अनेक शास्त्रों में अनेक शास्त्रों की भलामणा दी है।

मणा दी है, तो इससे क्या आनंद मिथ्या दृष्टि हो गया ? नहीं ऐसे कोई भी नहीं कहेगा, ऐसेही यहां भी समझना * ॥

जेठमलने लिखा है कि "द्रौपदी सम्यग् दृष्टिनी नहीं थी तथा श्राविका भी नहीं थी क्योंकि तिसने श्रावक व्रत लिये होते तो पांच भर्त्तार (पति) क्यों करती?" उत्तर - द्रौपदीने पूर्वकृत कर्म के उदय से पंचकी शाक्षासे पांच पति अंगीकार करे हैं परंतु तिसकी कोई पांच पति करनेकी इच्छा नहीं थी और इस तरह पांच पति करनेसे भी तिसके शील व्रतको कोई प्रकारकी भी बाधा नहीं हुई है, और शास्त्रकारोंने तिसको महासती कहा है, तथा बहुतसे ढूंढीये भी तिसकोसती मानते हैं, परंतु अकलके दुश्मन जेठमल की ही मति विपरीत हुई है जो तिसने महासतीको कलंक दिया है, और उससे महा पाप का बंधन किया है, कहाहै कि "विनाशकाले विपरीत बुद्धिः"

श्रीभगवती सूत्र में कहाहै कि जघन्यसे चाहे कोई एक व्रत करे तोभी वो श्रावक कहाता है, पुनः तिसही सूत्र में उत्तर गुण पच्चक्खाण भी लिखे हैं; तथा श्रीदशाश्रुतस्कंध सूत्र में "दंसण सावए" अर्थात् सम्यक्त्व धारी को भी श्रावक कहा है श्रीप्रश्नव्याकरण सूत्रवृत्ति मेंभी द्रौपदी को श्राविका कहा है, श्रीज्ञाता सूत्रमें कहाहैकि

तएणं सा दोवइ देवी कच्छुल्लणारयं असंजय अविरय अप्पडिहय अप्पच्चक्खाय पाव-

---

*श्रीज्ञातासूत्रमें श्रीमल्लिनाथस्वामीके दीक्षानिर्गमनकी जमालिकी भलामणा दी है तो क्या श्रीमल्लिनाथस्वामी जमालि सरीखेहोगये ? कदापि नहीं, तथा इसी ज्ञातासूत्रके पाठसे सूत्रोंमें भलामणा, लिखने वाले आचार्यने दी है यह प्रत्यक्ष सिद्ध होता है; नहीं तो जमालितो श्रीमहावीरस्वामीके समयमें हुआ उसके निर्गमनकी भलामणा श्रीमल्लिनाथस्वामीके अधिकार में कैसेहो सकेगी? श्रीज्ञाता सूत्रका पाठ यहहै

"एवं विणिग्गमो जहा जमालीस्स"

कम्मंति कट्टु णो आढाइ णोपरियाणाइणो अभुट्ठेइ ॥

अर्थ– जब नारद आया तब द्रौपदी देवी कच्छुलनामा नवमें नारदको असंजती, अविरती, नहीं हणे, नहीं पच्चखे पापकर्म जिसने ऐसे जानके न आदर करे, आयाभी नजाने, और खड़ीभी न होवे ॥

अब विचार करोकि द्रौपदीने नारद जैसे को असंजती जानके वंदना नहीं करी है तो इससे निश्चय होता है कि वो श्राविका थी, और तिसका सम्यक्त्वव्रत आनंदश्रावक सरीखाथा, तथा अमरकंका नगरी में पद्मोत्तरराजा द्रौपदीको हरके लेगया उस अधिकार में श्री ज्ञातासूत्र में कहा है कि:–

तएणं सा दोवइ देवी छट्ठं छट्ठेणं अणिखित्तेणं आयंबिल परिग्गहिएणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावमाणी विहरइ ॥

अर्थ– पद्मोत्तर राजाने द्रौपदी को कन्याके अंतेउरमें रखा, तब वो द्रौपदी देवी छठ्ठ छठ्ठके पारणे निरंतर आयंबिल परिगृहीत तप कर्म करके अर्थात् बेले बेलेके पारणे आयंबिल करती हुई आत्माको भावती हुई विचरती है, इससे भी सिद्ध होता है कि ऐसे जिनाज्ञा-युक्त तपकी करने वाली द्रौपदी श्राविकाही थी ॥

"द्रौपदीको पांच पतिका नियाणा था सो नियाणा पूरा होनेसे पहिले द्रौपदीने पूजा करी है इसवास्ते मिथ्यादृष्टि पणेमें पूजाकरी है" ऐसे जेठमलने लिखा है तिसका उत्तर– श्रीदशाश्रुतस्कंध में नव प्रकारके नियाणे कहे हैं, तिनमें प्रथमके सात नियाणे काम भोग के हैं, सो उत्कृष्ट रससे नियाणा किया होवे तो सम्यक्त्व प्राप्ति न

होवे, और मंद रससे नियाणा किया होवे तो सम्यक्त्वकी प्राप्ति हो जावे, जैसे कृष्णवासुदेव नियाणा करके होये हैं तिनकोभी सम्यक्त्व कीप्राप्ति हुई है, जेकर कहोगे कि" वासुदेव की पदवी प्राप्त होने पर नियाणा पूर होगया इसवास्ते वासुदेवकी पदवी प्राप्तिहुए पीछे सम्यक्त्व की प्राप्ति हुई है, तैसे द्रौपदी कोभी पांच पति की प्राप्ति से नियाणा पूरा होगया पीछे विवाह (पाणिग्रहण)होनेके पीछे द्रौपदी ने सम्यक्त्व की प्राप्ति करी" तो सोअसत्य है; क्योंकि नियाणातो सारे भवतक पहुंचताहै, श्रीदशाश्रुतस्कंध में ही नवमा नियाणा दीक्षा का कहा है,सो दीक्षा लेनसे नियाणा पूराहोगया ऐसे होवेतो तिस ही भवमें केवलज्ञान होना चाहिये,परंतु नियाणेवालेको केवलज्ञान होनेकी शास्त्रकारने ना कही है। इसवास्ते नियाणा भवपूरा होवे वहां तक पहुंचे ऐसे समझना और मंद रस से नियाणा किया होवे तो सम्यक्त्व आदि गुण प्राप्त हो सकते हैं, एक केवलज्ञान प्राप्त न होवे, ऐसे कहा है; तो द्रौपदी का नियाणा मंद रस से ही हैइस वास्ते बाल्यावस्था में सम्यक्त्व पाई संभवे है ॥

जैसे श्रीकृष्णजीने पूर्व भवमें नियाणा किया था तो वासुदेव का पदवी सारे भव पर्यंत भोगे विना छूटका नहीं, परंतु सम्यक्त्व को बाधा नहीं; तैसे ही द्रौपदी ने पांच पतिका नियाणा किया था तिससे पांचपति होए विना छूटका नहीं, परंतुसो नियाणा सम्यक्त्व को बाधा नहीं करता है ॥

इस प्रसंगमें जेठमलने नियाणेके दो प्रकार (१) द्रव्यप्रत्यय (२) भवप्रत्यय कहे हैं,सो झूठ है,क्योंकि दशाश्रुतस्कंधसूत्रमें ऐसा कथन नहीं है, दशाश्रुतस्कंधके नियाणे मूजिब तो द्रौपदी को सारे जन्ममें केवली प्ररूप्या धर्म भी सुनना न चाहिये और द्रौपदी ने तो

संयम लिया है, इसवास्ते द्रौपदी का नियाणा धर्मका घातक नहीं था और चक्रवर्त्ती तथा वसुदेवको भवप्रत्यय नियाणा जेठमल ने कहा है और जब तक नियाणेका उदय होवे तबतक सम्यक्त्वकी प्राप्ति न होवे ऐसे भी कहा है, तो कृष्ण वासुदेव को सम्यक्त्वकी प्राप्ति कैसे हुई सो जरा विचार कर देखो ! इससे सिद्ध होता है कि जेठमल का लिखना स्वकपोल कल्पित है, यदि आम्नाय विना और गुरुगम विना केवल सूत्राक्षर मात्र को ही देख के ऐसे अर्थ करोगे तो इसही दशाश्रुतस्कंधमें तीसस्थानके महामोहनी कर्म बांधे ऐसेकहाहै और महामोहनी कर्मकीउत्कृष्टी स्थिति(७०)कोटा कोटी सागरोपमकीहै तो परदेशी राजाने घने पंचेंद्रीजीवोंकी हिंसा करी, ऐसे श्रीरायपसेणी सूत्र में कहा है तो तिसको अणुव्रत की प्राप्ति न होनी चाहिये; तथा महामोहनी कर्म बांधके संसार में रुलना चाहिये, परंतु सो तो एकावतारी है, तो सूत्रकी यह बात कैसे मिलेगी? इसवास्ते सूत्र वांचना और तिसका अर्थ करना सो गुरुगम से ही करना चाहिये,परंतु तुम ढूंढकोंको तो गुरुगम है ही नहीं, जिससे अनेक जगा उलटा अर्थ करके महा पाप बांधते हो और सूत्रमें द्रौपदीने पूजा करी वहां सूर्याभ की भलामणा दी है, इससे भी द्रौपदी अवश्यमेव सम्यक्त्ववंती सिद्ध है ; तथा विवाह की महामोहका गिरदी धूम धाम में जिनप्रतिमा की पूजा याद आई, सोपक्कीश्रद्धावंती श्राविका ही का लक्षण है इसवास्ते द्रौपदी सुलभ बोधिनी ही थी ऐसे सिद्ध होता है ।

जेठमल ने लिखा है कि " द्रौपदी के माता पिता भी सम्यग दृष्टि नहीं थे क्योंकि उनोंने मांस मदिरा का आहार बनवाया था" तिसका उत्तर-जेठमलका यह लिखना बिलकुल बेहुदा है, क्योंकि

कृष्ण वासुदेव प्रमुख घने राजे उसमें शामिलथे, पांडव भी तिन के बीच में थे, इससे तो कृष्ण पांडवादि कोई भी सम्यग्दृष्टि न हुए वाहरेजेठमल! तुमने इतनाभी नहीं समझा कि नौकर चाकर जोकाम करते हैं सो राजाहीका करा कहा जाताहै, इसवास्ते द्रौपदीके पिता ने मांस नहीं दीया, जेकर उसका पाठ मानोगे तो कृष्ण वासुदेव, पांडव वगैरह सर्व राजायों ने मांस खाया तुमको मानना पड़ेगा? तथा श्रीउग्रसेन राजाके घरमें कृष्ण वासुदेव, प्रमुख बहुत राजाओं के वास्ते मांसमदिराका आहार बनवाया गया था तिसमें पांडवभीथे, तो क्या तिससे तिनका सम्यक्त्व नाश हो जावेगा ? नहीं, श्रेणिक राजा, कृष्ण वासुदेव प्रमुख सम्यक्त्वदृष्टि थे, परंतु तिनको एकभी अणुव्रत नहीं था तो तिससे क्या तिन को सम्यक्त्व विना कहना चाहिये ? नहीं कदापि नहीं, इसवास्ते इसमें समझनेका इतना ही है कि उस समय विवाहादि महोत्सव गौरी आदिमें उस वस्तुके बनाने का प्रायः कितनेक क्षत्रियोंके कुलका रिवाज था, इसवास्ते यह कहना मिथ्या है, कि द्रौपदी के माता पिता सम्यग्दृष्टि नहीं थे तथा इस ठिकाने जेठमलने लिखा है कि " ६ प्रकार का आहार बनाया " परंतु ज्ञाता सूत्रमें ६ आहार का सूत्रपाठ है नहीं; तिस सूत्रपाठ में चार आहारसे अतिरिक्त जो कथन है सो चार आहार का विशेषण है, परंतु ६ आहार नहीं कहे हैं, इससे यही सिद्ध होता है कि जेठमल को सूत्रका उपयोग ही नहीं था, और उसने जो जो बातें लिखी हैं सो सर्व स्वमति कल्पित लिखी है।

जेठमल लिखता है कि " द्रौपदीने प्रतिमा पूजी सो तीर्थंकर की प्रतिमा नहीं थी क्योंकि तिसने तो प्रतिमाको वस्त्र पहिनाए थे और तुम हालकी जिनप्रतिमाको वस्त्र नहीं पहिनाते हो" तिसका उत्तर-

जिस समय द्रौपदीने जिनप्रतिमाकी पूजा करी तिस समय में जिन प्रतिमाको वस्त्र युगल पहिरानेका रिवाज था सो हम मंजूर करते हैं परंतु वस्त्र पहिरानेका रिवाज अन्यदर्शनियों में दिनप्रतिदिन अधिक होनेसे जिनप्रतिमा भी वस्त्र युक्त होगी तो पिछानमें न आवेगी ऐसे समझके सूत प्रमुख के वस्त्र पहिराने का रिवाज वहुत वर्षों से बंद होगयाहै,परंतु हालमें वस्त्रके बदले जिनप्रतिमाको सोना,चांदी हीरा, माणक प्रमुख की अंगीयां पहिराई जाती हैं, तथा जामा और कबजा–फतुइ कमीज–प्रमुख के आकार की अंगीयां होती हैं,जिन को देखके सम्यग्दृष्टि जीव जिनको कि जिनदर्शनकी प्राप्ति होती है,तिनको साक्षात् वस्त्र पहिराये ही प्रतीत होतेहैं,परंतु महा मिथ्या-दृष्टि ढूंढिये जिनको कि पूर्व कर्म के आवरण से जिन दर्शन होना महा दुर्लभ है तिनको इस बातकी क्या खबर होवे !! तिनको खोटे दूषण निकालने की ही समझ है,तथा हालमें सतरांभेदीपूजा में भी वस्त्र युगल प्रभुके समीप रखनेमें आतेहैं, हमेशां शुद्धवस्त्र से प्रभुका अंग पूंजा जाताहै, इत्यादि कार्योंमें जिनप्रतिमाके उपभोग में वस्त्रभी आते हैं, तथा इस प्रसंग में जेठमल ने लिखा है कि "जिस रीति से सूर्याभने पूजा करी है तिसही रीतिसे द्रौपदीने करी" तो इससे सिद्ध होता है कि जैसे सूर्याभने सिद्धायतन में शाश्वती जिनप्रतिमा पूजी है तैसे इस ठिकाने द्रौपदी की करी पूजा भी जिन प्रतिमा की ही है।

और जेठमल ने भद्रा सार्थवाही की करी अन्यदेव की पूजा को द्रौपदीकी करी पूजाके सदृश होने से द्रौपदी की पूजाभी अन्य-देव की ठहराई है, परंतु वो मूर्खसरदार इतना भी नहीं समझता है कि कितनीक बातोंमें एक सरीखी पूजा होवे तो भी तिसमें कुछ बाधा

नहीं है जैसे हालमें भी अन्य दर्शनी, श्रावक की कितनीक रीति अनुसार अपने देवकी पूजा करते हैं तैसे इस ठिकाने भद्रा सार्थवाही ने भी द्रौपदीकी तरां पूजा करी है तोभी प्रत्यक्ष मालूम होता है कि द्रौपदीने 'नमुथ्थुणं 'कहा है इसवास्ते तिसकी करी पूजा जिन प्रतिमा की ही है, और भद्रा सार्थवाही ने 'नमुथ्थुणं' नहीं कहा है इसवास्ते तिनकी करी पूजा अन्य देवकी है ॥

तथा द्रौपदीने 'नमुथ्थुणं' जिनप्रतिमाके सन्मुख कहा है यह बात सूत्र में है, और जेठमल यह बात मंजूर करता है, परंतु यह प्रतिमा अरिहंतकी नहीं ऐसा अपना कुमत स्थापन करनेके वास्ते लिखताहै कि "अरिहंतके सिवाय दूसरोंके पासभी 'नमुथ्थुणं' कहा जाता है,गोशालेके शिष्य गोशालेको नमुथ्थुणं कहते थे; तथा गोशाले के श्रावक षडावश्यक करते थे तब गोशाले को नमुथ्थुणं कहतेथे" यह सब झूठ है, क्योंकि नमुथ्थुणं के गुण किसी भी अन्यदेव में नहीं है, और न किसी अन्यदेवके आगे नमुथ्थुणं कहा जाता है। तथा न किसी ने अन्यदेव के आगे नमुथ्थुणं कहा है। तोभी जेठमल नेलिखा है कि "अरिहंतके सिवाय दूसरे (अन्यदेवों) के पास भी नमुथ्थुणं कहा जाताहै" तो इस लेख से जेठमलने वीतराग देवकी अवज्ञा करी है; क्योंकि इस लिखने से जेठमलने अन्यदेव और वीतराग देव को एक सरीखे ठहराया है,हा कैसी मूर्खता!अन्यदेव और वीतरागजिनमें अकथनीय फरक है,अपना मत स्थापन करनेके वास्ते तिनकोएक सरीखे ठहराता हैऔर लिखताहै कि 'नमुथ्थुण' अरिहंत केसिवाय अन्यदेवोंके पासभी कहा जाता है, सो यह लेख जैनशैली से सर्वथा विपरीत है, जैनमत के किसी भी शास्त्र में अरिहंत और अरिहंतकी प्रतिमा सिवाय अन्य देवके आगे नमुथ्थुणं कहना, या

किसीने कहा लिखा नहीं है। जेठमलने इस संबंधमें जो जो दृष्टांत लिखे हैं और जो जो पाठ लिखेहैं तिनमें अरिहंत या अरिहंतकी प्रतिमा के सिवाय किसी अन्यदेव के आगे किसीने नमुथ्थुणं कहा होवे ऐसा पाठ तो है ही नही, परंतु भोले लोकों को फंसाने और अपने कुमत को स्थापन करन के लिये विना ही प्रयोजन सूत्रपाठ लिखके पोथी बड़ी करी है, इस से मालूम होता है कि जेठमल महामिथ्या दृष्टि और मृषावादी था और उसने द्रौपदी कृत अरिहंत की प्रतिमाकी पूजालोपने के वास्ते जितनीकुयुक्तियां लिखी हैं सो सर्व अयुक्त और मिथ्या है ॥

तथा जेठमल जिनप्रतिमा को अवधिजिनकी प्रतिमा ठहराने वास्ते कहता है कि "सूत्र में अवधिज्ञानी को भी जिन कहा है इसवास्ते यह प्रतिमा अवधि जिनकी संभव होती है" उत्तर–सूत्रमें अवधि जिन कहा है सो सत्य है परंतु 'नमुथ्थुणं' केवली अरिहंत या अरिहंतकी प्रतिमा सिवाय अन्यकिसी देवताके आगेकहे का कथन सूत्रमें किसी जगा भी नहीं है, और द्रौपदी ने तो 'नमुथ्थुणं' कहा है इसवास्ते वो प्रतिमा केवली अरिहंतकी ही थी, और तिसकी ही पूजा महासती द्रौपदी श्राविका ने करी है ॥

फेर जेठमल कहता है कि "अरिहंतने दीक्षा ली तब घर का त्याग किया है इसलिये तिसका घर होवे नही" उत्तर–मालूम होता है कि मूर्खों का सरदार जेठमल इतना भी नहीं समझता है कि भावतीर्थंकर का घर नहीं होता है, परंतु यह तो स्थापना तीर्थंकर की भक्ति निमित्त निष्पन्न किया हुआ घर है, जैसे सूत्रों में सिद्ध प्रतिमा का आयतन. यानि घर अर्थात् सिद्धायतन कहा है तैसे ही यहभी जिन घर है, तथा सूत्रोंमें देवछंदा कहाहै, इसवास्ते

जेठमलकी सब कुयुक्तियां झूठी हैं ॥

तथा इस प्रसंगमें जेठमलने विजय चोर का अधिकार लिख के बताया है कि " विजय चोर राजगृही नगरी में प्रवेश करने के मार्ग, निकलने के मार्ग, मद्य पान करने के मकान, वेश्या के मकान, चोरों के ठिकाने, दो तीन तथा चार रास्ते मिलने वाले मकान, नाग देवता के, भूत के तथा यक्ष के मंदिर इतने ठिकाने जानता है ऐसे सूत्र में कहा है तो राजगृही में तीर्थंकर के मंदिर होवें तो क्यों न जाने" ? उत्तर- प्रथम तो यह दृष्टांत ही निरुपयोगी है, परंतु जैसे मूर्ख अपनी मूर्खताई दिखाये विना ना रहे, तैसे जेठमलने भी निरुपयोगी लेखसे अपनी पूर्ण मूर्खताई दिखाई है ; क्योंकि यह दृष्टांत बिलकुल तिसके मत को लगता नहीं है , एक अल्पमतिवाला भी समझ सक्ता है, कि इस अधिकार में चोर के रहने के, छिपनेके, प्रवेश करने के, निकलने के, जो जो ठिकाने तथा रस्ते हैं सो सर्व विजयचोर जानताथा ऐसे कहा है। सत्य है क्योंकि ऐसे ठिकानें जानता न होवे तो चोरी करनी मुश्किल हो जावे, सो जैसे सेठ शाहुकारों की हवेलीयां, राज्यमंदिर, हस्तिशाला, अश्वशाला, और पोषधशाला(उपाश्रय) वगैरह नहीं कहे हैं, ऐसे ही जिन मन्दिरभी नहीं कहे हैं क्योंकि ऐसे ठिकाने प्रायः चोरों के रहने लायक नहीं होते हैं, इससे इन के जानने का उसको कोई प्रयोजन नहीं था; परंतु इससे यह नहीं समझना कि उस नगरी में उस समय जिनमंदिर, उपाश्रय वगैरह नहीं थे, परंतु इस नगरी में रहने वाले श्रावक हमेशां जिन प्रतिमाकी पूजा करते थे, इसवास्ते बहुत जिनमंदिर थे ऐसा सिद्ध होता है ।

कोणिक राजाने भगवंत को वंदना करी तिसका प्रमाण

देके जेठमल ऐसे ठहराता है कि " तिसने द्रौपदी की तरह पूजा क्यों नहीं करी ? क्योंकि प्रतिमासे तो भगवान् अधिक थे " उत्तर–भगवान् भाव तीर्थंकर थे, इसवास्ते तिनकी वंदना स्तुति वगैरह ही होती है, और तिनके समीप सतरां प्रकारी पूजामें से वाजिंत्रपूजा, गीतपूजा, तथा नृत्यपूजा वगैरह भी होती है, चामर होते हैं, इत्यादि जितने प्रकार की भक्ति भावतीर्थंकर की करनी उचित है उतनीही होती है, और जिनप्रतिमा स्थापना तीर्थंकर है इस वास्ते तिनकी सतरां प्रकार आदि पूजा होती है,तथा भावतीर्थंकर को नमुथ्थुणं कहा जाता है तिस में " ठाणं संपाविउं कामे " ऐसा पाठ है अर्थात् सिद्धगति नाम स्थानकी प्राप्ति के कामी हो ऐसे कहा जाता है और स्थापना तीर्थंकर अर्थात् जिनप्रतिमा के आगे द्रौपदी वगैरहने जहां जहां नमुथ्थुणं कहा है वहां वहां सूत्र में "ठाणं संपत्ताणं" अर्थात् सिद्धगति नाम स्थानको प्राप्त हुए हो ऐसे जिनप्रतिमा को सिद्ध गिना है, इस अपेक्षा से भावतीर्थंकर से भी जिन प्रतिमा की अधिकता है, दुर्मति ढूंढिये तिसको उत्थापते हैं तिस से वोह महामिथ्यात्वी हैं ऐसे सिद्ध होता है ॥

तथा 'जिन' किस किस को कहते हैं, इस बाबत जेठमल ने श्रीहेमचंद्राचार्य कृत अनेकार्थीय हैमी नाममाला का प्रमाण दिया है,परंतु यदि वह ग्रंथ तुम ढूंढिये मान्य करतेहो तो उसी ग्रंथमें कहा है कि " चैत्यं जिनौक स्तद्बिम्बं चैत्यो जिनसभातरुः " सो क्यों नहीं मानते हो? तथा बलि शब्द का अर्थ भी तिस ही नाममाला में 'देव पूजा' करा है तो वोह भी क्यों नहीं मानते हो यदि ठीक ठीक मान्य करोगे तो किसी भी शब्द के अर्थ में कोई भी बाधा न आवेगी, ढूंढिये सारा ग्रंथ मानना छोड़ के फकत एक शब्द

कि जिस के बहुत से अर्थ होते होवें तिनमें से अपने मन माना एक ही अर्थ निकाल के जहां तहां लगाना चाहते हैं परंतु ऐसे हाथ पैर मारने से खोटामत साचा होने का नहीं है ॥

तथा जेठमल और तिसके कुमति ढूंढिये कहते हैं, कि द्रौपदीने विवाहके समय नियाणेके तीव्र उदयसे पतिकी वांछासे विषयार्थ पूजा करी है " उत्तर--अरे मूढो! यदि पतिकी वांछासे पूजा करीहोती, तो पूजा करने समय अच्छा खूबसूरत पति मांगना चाहिये था, परंतु तिसनेसो तो मांगाहीनहीं है, उसने तो शक्रस्तवन पढ़ा है जिस में " तिन्नाणं तारयाणं " अर्थात् आपतरेहो मुझ को तारो इत्यादि पदों करके शुद्ध भावना से मोक्ष मांगा है; परंतु जैसे मिथ्यात्वी योग्य पति पाऊंगी, तो तुम आगे याग भोग करूंगी इत्यादि स्तुतिमें कहती हैं, तैसे उसने नहीं कहा है, इसवास्ते फकत अपने कुमत को स्थापन करने वास्ते ऐसी सम्यगदृष्टिनी श्राविका के शिरखोटा कलंक चढ़ाते हो सो तुमको संसार वधानेका हेतु है; और इसतरां महासति द्रौपदीके शिर अणहोया कलंक चढ़ाने से तथा उस सम्यक्तवति श्राविकाके अवर्णवाद बोलनेसें तुम बड़ेभारी दुःख के भागी होगे, जैसे तिस महासति द्रौपदी को अति दुःख दिया, भरी सभा के बीच निर्लज्ज होके तिस की लज्जा लेने की मनसा करी, इत्यादिअनेक प्रकारका तिसके ऊपर जुलम करा जिससे कौरवों का सह कुटुंब नाश हुआ; कैयाक्चिक भी उस मूजब करनेसे अपने एक सो भाइयों के मृत्युका हेतु हुआ; पद्मोत्तर राजाने तिस को कुदृष्टिसे हरण किया जिससे आखीर तिसको तिसके शरणे जाना पड़ा और तबही वो बंधनसे मुक्त हुआ, तैसे तुमभी उस महासती के अवर्णवाद बोलने से इस भवमें तो जैनबाह्य हुएहो, इतनाही नहीं

परंतु परभवमें अनंत भव रुलने रूप शिक्षाके पात्र होवोगे इसमें कुछ ही संदेह नहीं है, इसवास्ते कुछ समझो और पापके कुयेमें न डूब मरो, किंतु कुमतको त्यागके सुमतको अंगीकार करो।

"अरिहंतका संघट्टा स्त्री नहीं करती है तो प्रतिमाका संघट्टा स्त्री कैसे करे" तिसका उत्तर–प्रतिमा जो है सो स्थापना रूप है इस वास्ते तिसके स्त्री संघट्टे में कुछभी दोष नहीं है, क्योंकि वो कोई भाव अरिहंत नहीं है किंतु अरिहंतकी प्रतिमा है, यदि जेठमल स्थापना और भाव दोनोंको एक सरीखेही मानता है तो सूत्रों में सोना, रूपा, स्त्री, नपुंसकादि अनेक वस्तु लिखी हैं; और सूत्रों में जो अक्षर हैं वे सर्व सोना रूपा स्त्री नपुंसकादि की स्थापना हैं; इसलिये इनके वांचने से तो किसी भी ढूंढक ढूंढकनी का शील महाव्रत रहेगा नहीं, तथा देवलोक की मूर्तियां, और नरक के चित्र, वगैरह ढूंढकों के साधु, तथा साध्वी, अपने पास रखते हैं; और ढूंढकों को प्रतिबोध करने वास्ते दिखाते हैं, उन चित्रों में देवांगनाओं के स्वरूप, शालिभद्रका, धन्नेका तथा तिन की स्त्रियों वगैरह के चित्राम भी होते हैं; इस वास्ते जैसे उन चित्रों में स्त्री तथा पुरुषपणे की स्थापना है तैसे ही जिनप्रतिमा भी अरिहंतकी स्थापना है, स्थापना को स्त्रीका संघट्टा होना न चाहिये ऐसे जो जेठमल और तिसके कुमति ढूंढक मानते हैं तो पूर्वोक्त कार्यों से ढूंढकों के साधु साध्वीयों का शीलव्रत (ब्रह्मचर्य) कैसे रहेगा? सो विचार करलेना * ।

और जेठमलने लिखा है कि "गौतमादिक मुनि तथा आनं-

---

*सोहनलाल, गैंडेराय, पार्वती, वगैरह का फोटो पंजाब के ढूंढिये अपने पासरखते हैं इससे तो सोहनलाल पार्वती वगैरहके ब्रह्मचर्य का फक्का भी न रहा होगा ! ! !

दादिके श्रावक प्रभुसे दूर बैठे परंतु प्रभुको स्पर्श करना न पाये" उत्तर—मूर्ख जेठमल इतना भी नहीं समझता कि बहुत लोगोंके समक्ष धर्म देशना श्रवण करने को बैठना मर्यादा पूर्वक ही होता है, परंतु सो इसमें जेठमल की भूल नहीं है, क्योंकि ढूंढिये मर्यादा के बाहिर ही हैं; इसवास्ते यह नहीं कहा जा सकता है कि गौतमादि प्रभु को स्पर्श नहीं करते थे और तिनको स्पर्श करने की आज्ञाही नहीं थी क्योंकि श्रीउपासकदशांग सूत्रमें आनंद श्रावकने गौतमस्वामीके चरण कमलको स्पर्श कियेका अधिकार है, और तुम ढूंढिये पुरुषोंका संघट्टा भी करना वर्जते हो तो उसका शास्त्रोक्त कारण दिखाओ? तथा तुम जो पुरुषों का संघट्टा करते हो सोत्याग दो,*।

तथा जेठमलने लिखा है कि "पांच अभिगम में सचित्तवस्तु त्यागके जाना लिखा है" सो सत्य है, परंतु यह सचित्त वस्तु अपने शरीर के भोगकी त्यागनी कही है, पूजाकी सामग्री त्यागनी नहीं लिखी है; क्योंकि श्रीनंदिसूत्र, अनुयोग द्वारसूत्र, तथा उपासकदशांग सूत्र में कहा है कि तीनलोकवासी जीव "महिय पूइय" अर्थात् फूलोंसे भगवान्की पूजा करते हैं,।

जेठमल लिखता है कि "अभोगी देवकी पूजा भोगीदेवकी तरह करते हैं" उत्तर—भगवान् अभोगी थे तो क्या आहार नहीं करते थे? पानी नहीं पीते थे? बैठते नहीं थे? इत्यादि कार्य करते थे, या नहीं? करते ही थे परंतु तिनका यह करना निर्जराका हेतु है, और दूसरे अज्ञानीयों का करना कर्म बंधनका हेतु है, तथा प्रभु जब

---

*ढूंढिये श्रावक, श्राविका, अपने गुरु गुरणी के चरणों कोहाथ लगाके वंदना करते हैं सोभी जेठमलकी अकल मूजिब आज्ञा बाहिर और बेअकल मालूम होते हैं।

साक्षात् विचरते थे तब तिनकी सेवा, पूजा, देवता आदिकोंने करी है सो भोगीकी तरह या अभोगीकी तरह सो विचार लेना ? प्रभु को चामर होतेथे, प्रभु रत्न जडित सिंहासनों पर बिराजने थे, प्रभु के समवसरण में जल थलके पैदा भये फुलों की गोड़े प्रमाण देवते वृष्टि करते थे, देवते तथा देवांगना भगवंत के समीप अनेक प्रकार के नाटक तथा गीत गान करते थे; इसवास्ते प्यारे ढूंढियों ! विचार करो कि यह भक्ति भोगी देवकी नहीं थी किंतु वीतरागदेव की थी और उस भक्ति के करने वाले महापुण्यराशि बंधनके वास्ते ही इस रीतिसे भक्ति करते थे और वैसेही आज भी होती है प्यारे ढूंढियो ! तुम भोगी अभोगी की भक्ति जुदी जुदी ठहराते हो परंतु जिस रीतिसे अभोगी की भक्ति, वंदना, नमस्कारादि होती है तिस ही रीतिसे भोगी राजा प्रमुख की भी करने में आती है, जब राजा आवे तब खड़ा होना पडता है, आदर सत्कार दिया जाता है इत्यादि बहुत प्रकार की भक्ति अभोगीकी तरह ही होनी है और तिसही रीति से तुमभी अपने ऋषि–साधुओंकी भक्ति करते हो तो वे तुमारे रिख भोगी हैं कि अभोगी ? से विचार लेना ! फेर जेठमल लिखता है कि "जैसे पिता को भूख लगनेसे पुत्रका भक्षण करे यह अयुक्त कर्म है तैसे तीर्थंकर के पुत्र समाने षट् काय के जीवों को तीथकर की भक्ति निमित्त हणते हो सोभी अयुक्त है" उत्तर–तीर्थंकर भगवंत अपने मुखसे ऐसे नहीं कहते हैं कि मुझको वंदना, नमस्कार करो, स्नान कराओ, और मेरी पूजा करो, इसवास्ते वे तो षट् काया के रक्षक ही हैं, परंतु गणधर महाराजा की बताई शास्त्रोक्त विधि मूजिब सेवकजन तिनकी भक्ति करते हैं तो आज्ञा-युक्त कार्य में जो हिंसा है सो स्वरूपसे हिंसा है, परंतु अनुबंध से

दया है ऐसे सूत्रोंमें कहा है, इसवास्ते सो कार्य कदापि अयुक्त नहीं कहाजाता है*तथा हम तुमको पूछते हैं कि तुमारे रिख–साधु,तथा साध्वी,त्रिविध त्रिविध जीव हिंसाका पच्चक्खाण करके नदीयां उतरते हैं, गोचरी करके लेआते हैं, आहार, निहार, विहारादि अनेक कार्य करते हैं जिनमें प्रायः षट्काया की हिंसा होतीहै तो वे तुमारे साधु साध्वी षट् काया के रक्षक हैं कि भक्षक हैं ? सो विचारके देखो ! जेठमलके लिखने मूजिब और शास्त्रोक्त रीति अनुसार विचार करने से तुमारे साधु साध्वी जिनाज्ञा के उत्थापक होनेसे षट् कायाके रक्षक तो नहीं हैं परंतु भक्षक ही हैं ऐसे मालूम होता है और उससे वे संसारमें रुलनेवाले हैं ऐसा भी निश्चय होता है॥

प्रश्नके अंतमें मूर्ख शिरोमणि जेठमल ने ओघनिर्युक्ति की टीकाका पाठ लिखा है सो बिलकुल झूठा है, क्योंकि जेठमल के लिखे पाठ में से एक भी वाक्य ओघनिर्युक्ति की टीका में नहीं, है जेठमलका यह लिखना ऐसा है कि जैसे कोई स्वेच्छा से लिखदेवे कि "जेठमल ढूंढक किसा नीच कुल में पैदा हुआ था इसवास्ते जिन प्रतिमा का निंदकथा ऐसा प्राचीन ढूंढक निर्युक्ति में लिखा है"

॥ इति ॥

(२०) सूर्याभने तथा विजयपोलीए ने जिनप्रतिमा पूजी है

वीशमें प्रश्नोत्तर में जेठमलने सूर्याभ देवता और विजय

---

* स्वरूपसे जिनमें हिंसा, और अनुबंध से दया, ऐसे अनेक कार्य करनेको साधु साध्वीयोंको शास्त्रो में आज्ञा दी है, देखो श्री आचारांग, ठाणांग, उत्तराध्ययन, दशवैकालिक प्रमुख जैनशास्त्र तथा आठ प्रकारकी दयाकास्वरूप भाषा में देखना होवे तो देखो श्री जैन तत्त्वादर्शका सप्तम परिच्छेद।

शोलीएकी करी जिन प्रतिमाकी पूजाका निषेधकरने वास्ते अनेक कु-युक्तियां करी हैं तिन सर्वका प्रत्युत्तर अनुक्रम से लिखते हैं॥

(१) आदिमें सूर्याभ देवताने श्रीमहावीर स्वामी को आमल कल्पा नगरी के बाहिर अंबसाल वन में देखा तब सन्मुख जाके नमुथ्थुणं कहा तिसमें सूत्रकारने "ठाणंसंपत्ताणं" तक पाठ लिखा है इसवास्ते जेठमल पिछले पद कल्पित ठहराता है, परंतुयहजेठमल का लिखना मिथ्याहै, क्योंकि वेद कल्पित नहीं है किंतु शास्त्रोक्त है इस बाबत ११ में प्रश्नोत्तर में खुलासा लिख आए हैं॥

(२) पीछे सूर्याभने कहा कि प्रभुको वंदना नमस्कार करनेका महाफल है, इस प्रसंगमें जेठमलने जो सूत्रपाठ लिखा है सो संपूर्ण नहीं है, क्योंकि तिस सूत्रपाठ के पिछले पदों में देवता संबंधी चैत्यकी तरह भगवंतकी पर्युपासना करूंगा ऐसे सुर्याभने कहा है, सत्यासत्य के निर्णय वास्ते वो सूत्रपाठ श्रीरायपसेणी सूत्र से अर्थ सहित लिखते हैं,- यतः श्रीराजप्रश्नीयसूत्रे-॥

तं महाफलं खलु तहारूवाणं अरहंताणं भग-वंताणं नामगोयस्सवि सवणयाए किमंग पुण अभिगमणवंदणनमंसणपडिपुच्छणपज्जुवा-सणयाए एगस्सवि आयरियस्स धम्मियस्स सुवयणस्स सवणयाए किमंग पुण विउलस्स अट्ठस्सगहणयाए तं गच्छामिणं समणं भगवं महावीरं वंदामि नमंसामि सक्कारेमि सम्मा-णेमि कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवा-

सामि एयं मे पेच्चा हियाए सुहाए खमाए निस्सेसाए अणुगामियत्ताए भविस्सइ ॥

अर्थ--निश्चय तिसका महाफल है, किसका सो कहते हैं, तथारूप अरिहंत भगवंत के नाम गोत्रके भी सुनने का परंतु तिसका तो क्याही कहना ? जो सन्मुख जाना वंदना करनी नमस्कार करना, प्रतिपृच्छा करनी, पर्युपासना सेवा करनी, एकभी आर्य (श्रेष्ठ) धार्मिक वचन का सुनना इसका तो महाफल होवेही और विपुल अर्थका ग्रहण करना तिसके फलका तो क्याही कहना ! इस वास्ते मैं जाऊं, श्रमण भगवंत महावीरको वंदना करूं नमस्कार करूं, सत्कार करूं, सन्मानकरूं, कल्याणकारी मंगलकारी देवसंबंधि चैत्य (जिन प्रतिमा) तिसकी तरह सेवाकरूं, यह मुझको परभवमें हितकारी, सुखके वास्ते, क्षेमके वास्ते, निः श्रेयस् जो मोक्ष तिसके वास्ते, और अनुगमन करनेवाला अर्थात् परंपरासे शुभानुबंधि-भव भव में साथ जाने वाला होगा ॥

पूर्वोक्त पाठ में देवके चैत्यकी तरह सेवा करूं ऐसे कहा इस से 'स्थापना जिन और भावजिन' इन दोनों की पूजा प्रमुख का समान फल सूत्रकारने बतलाया है ॥

जेठमल कहता है कि " वंदना वगैरह का मोटा लाभ कहा परंतु नाटक का मोटा (बड़ा) लाभ सुर्याभने चिंतवन नहीं किया, इस वास्ते नाटक भगवंतकी आज्ञाका कर्त्तव्य मालुम नहीं होता है "

उत्तर-जेठमलका यह लिखना असत्य है, क्योंकि नाटक करना अरिहंत भगवंत की भावपूजामें है और तिसका तो शास्त्रकारों ने अनंत फल कहा है, इसवास्ते सो जिनाज्ञाका ही कर्त्तव्य है,

श्रीनंदिसूत्रमें भी ऐसे ही कहा है, और सुर्याभने भी बड़ा लाभ-चिंतवन करके ही प्रभुके पास नाटक किया है॥

(३) "पेच्चा" शब्दका अर्थ परभव है ऐसा जेठमलने सिद्ध किया है सो ठीक है इस वास्ते इसमें कोई विवाद नहीं है।

(४) सुर्याभने अपने सेवक देवता को कहा यह बात जेठमल ने, अधूरी लिखी है, इसवास्ते श्रीरायपसेणी सूत्रानुसार यहां विस्तार से लिखते हैं॥

सुर्याभ देवताने अपने सेवक देवता को बुला कर कहा कि हे देवानु प्रिय! तुम आमलकल्पा नगरीमें अंबसाल वनमें जहां श्री महावीर भगवंत समवसरे हैं तहां जाओ जाके भगवंत को वंदना नमस्कार करो, तुमारा नाम गोत्र कह के सुनाओ, पीछे भगवंत के समीप एक योजन प्रमाण जगह पवन करके तृण, पत्र, काष्ठ, कंडे, कांकरे (रोड़े) और अशुचि वगैरह से रहित (साफ) करो, करके गंधोदक की वृष्टि करो, जिस से सर्व रज शांत होजावे अर्थात् बैठ जावे, उडे नहीं; पीछे जल थल के पैदा भये फूलों की वृष्टि, दंडी नीचे और पांखडी ऊपर रहे तैसे जानु (गोड़े) प्रमाण करो करके अनेक प्रकारकी सुगंधी वस्तुओं से धूप करो यावत् देवताओंके अभिगमन करने योग्य (आने लायक) करो॥

सुर्याभ देवताका ऐसा आदेश अंगीकार करके आभियोगिक देवता वैक्रियसमुद्घात करे, करके भगवंतके समीप आवे, आयके वंदना नमस्कार करके कहे कि हम सुर्याभ के सेवक हैं और तिसके आदेशसे देवके चैत्यकी तरह आपकी पर्युपासना करेंगे ऐसे वचन सुनके भगवंत ने कहा यतः श्रीराजप्रश्नीयसूत्रे-

पोराणमेयं देवा जीयमेयं देवा कियमेयं देवा

करणिज्जमेयं देवा आचीन्नमेयं देवा अब्भणुन्नायमेयं देवा ॥

अर्थ–चिरंतन देवतायोंने यह कार्य किया है हे देवताओं के प्यारे! तुमारा यह आचार है तुमारा यह कर्त्तव्य है, तुमारी यह करणी है, तुम को यह आचारने योग्य है और मैंने तथा सर्व तीर्थकरोंने भी आज्ञा दी है। इस मूजिब भगवंत के कहे पीछेवे आभियोगिक देवते प्रभुको वंदना नमस्कार करके पूर्वोक्त सर्व कार्य करते भये,इस पाठमें जेठमल कहताहै कि "सुर्याभने देवता के अभिगमन करनेयोग्य करो ऐसे कहा परंतु ऐसे नहीं कहाकि भगवंतके रहने योग्य करो" तिसका उत्तर–देवताके आने योग्य करो ऐसे कहा तिसका कारण यह है कि देवताके अभिगमन करनेकी जगह अति सुंदर होती है मनुष्यलोक में तैसी भूमि नहीं होती है इसवास्ते सुर्याभ का वचनतो भूमि का विशेषण रूप है और तिस में भगवंतका ही बहुमान और भक्ति है ऐसे समझना *॥

(५) " जलय थलय ". इन दोनों शब्दो का अर्थ जलके पैदा भये और थलके पैदा भये ऐसा है तिसको फिरानेके वास्ते जेठमल कहता है कि " सुर्याभके सेवकने पुष्पकी वृष्टि करी वहां (पुप्फवद्दलं विउव्वइ) अर्थात् फूलका बादल विकुर्वे ऐसे कहा है इसवास्ते वे फूल वैक्रिय ठहरते हैं और उससे अचित्तभी हैं " यह कहना जेठमलका मिथ्या है; क्योंकि फूलोंकी वृष्टि योग्य वादल विकुर्वन

---

* यहां तो देवताके योग्य कहा, परंतु चौतीस अतिशयमें जो सुगंध जलवृष्टि,पुष्पवृष्टि आदिक लिखी है सो किस के वास्ते लिखी है ? जरा हृदय नेत्र खोलके समवायांग सूत्रके चौतीसमें समवायमें चौतीस अतिशयों का वर्णन देखो॥

करा है परंतु फूल विकुर्वे नहीं हैं, इसवास्ते वे फूल सचित्त ही हैं तथा जेठमल लिखताहै कि "देवकृत वैक्रिय फूल होवे तो वे सचित्त नहीं" सोभी झूठ है क्योंकि देवकृत वैक्रिय वस्तु देवता के आत्म प्रदेश संयुक्त होतीहै इसवास्ते सचितही है,अचित्त नहीं,तथा चौतीस अतिशयमें पुष्पवृष्टि का अतिशयहै सो जेठमल "देवकृत नहीं प्रभु के पुण्यके प्रभावसेहैं" ऐसे कहताहै सो झूठहै,क्योंकि (३४) अतिशय में(४)जन्मसे (११)घातिकर्म के क्षयसे और (१९)देवकृतहै तिस में पुष्पवृष्टि का अतिशय देवकृतमें कहा है इसमूजिब अतिशयकी बात श्रीसमवायांग सूत्रमें प्रसिद्धहै कितनेक ढूंढीये इसजगह 'जलयथलय, इनदोनों शब्दोंका अर्थ 'जल थलके जैसे फूल' कहतेहैं परंतु इन दोनों शब्दोंका अर्थ सर्वशास्त्रोंके तथा व्याकरण की व्युत्पत्ति के अनुसार जल और थलमें पैदा हुए हुए ऐसा ही होताहै जैसे 'पंकय' पंक नाम कीचड तिसमें जो उत्पन्न हुआ होवे सो पंकय (पंकज)अर्थात् कमल और 'तनय' तन नाम शरीर तिससें उत्पन्न हुआ होवे सो तनय अर्थात् पुत्र ऐसे अर्थ होतेहैं ; ऐसे (तनुज, आत्मज, अंडय, पोयय, जराउय इत्यादि) बहुत शब्द भाषामें (और शास्त्रों में) आतेहैं तथा 'ज' शब्दका अर्थभी उत्पन्नहोना यही है, तो भी अज्ञान ढूंढीये अपना कुमत स्थापन करने वास्ते मन घड़त अर्थ करते हैं परंतु वे सर्व मिथ्या हैं ॥

(६) जेठमल कहता है कि "भगवंतके समवसरण में यदि सचित्त फूल होवेतो सेठ, शाहुकार, राजा, सेनापति प्रमुखको पांच अभिगम कहे हैं तिनमें सचिन्त बाहिर रखना और अचित्त अंदर लेजाना कहाहै सो कैसे मिलेगा?" तिसका उत्तर–सचित्त वस्त बाहिर रखनीकहाहै सोअपने उपभागकी समझनी,परंतु पूजा

आमंत्रण करनेको जावे और आमंत्रण करे तब वो धनी ना न कहे अर्थात् मौन रहे तो सो आमंत्रण मंजूर किया गिना जाता है, तैसेही प्रभुने नाटक करनेका निषेध नहीं किया मौनरहे, तो सो भी आज्ञा ही है तथा नाटक करना सो प्रभुकी सेवा भक्तिहै, यतः श्रीरायपसेणी सूत्रे-

अहण्णंभंते देवाणुप्पियाणं भत्तिपुव्वयंगोय माइणं समणाणं निग्गंथाणं बत्तिसइबद्धं नट्ट विहिं उवदंसेमि ॥

अर्थ-सुर्याभ ने कहा कि हे भगवन्! मैं आपकी भक्ति पूर्वक गौतमादिक श्रमण निर्ग्रंथोंको बत्तीस प्रकारका नाटक दिखाऊं? इस मूजब श्रीरायपसेणी सूत्रके मूलपाठ में कहा है, इसवास्ते मालूम होता है कि सुर्याभको भक्ति प्रधान है और भक्तिका फल श्रीउत्तराध्ययन सूत्रके २९, में अध्ययन में यावत् मोक्षपद प्राप्ति कहा है, तथा नाटक को जिनराजकी भक्ति जब चौथे गुणठाणेवाले सुर्याभ ने मानी है तो जेठमल की कल्पना से क्या होसक्ता है? क्योंकि चौथे गुणठाणसे लेके चउदमें गुणठाणे वाले तककी एकही श्रद्धा है जब सर्व सम्यक्त्व धारियोंकी नाटकमें भक्तिकी श्रद्धाहै तब तो सिद्ध होता है कि नाटक में भक्ति नहीं मानने वाले ढूंढक जैनमत से बाहिर हैं, तथा इस ठिकाने सूत्रपाठ में प्रभुकी भक्ति पूर्वक ऐसेकहा हुआ है तोभी जेठमलने तिसपाठको लोपदिया है इससे जेठमलका कपट जाहिर होता है।

(१३) जेठमल लिखता है कि " नाटक करने में प्रभुने ना न कही तिसका कारण यह है कि सुर्याभ के साथ बहुतसे देवता हैं, तिनके निज निज स्थान में नाटक जुदे जुदे होते हैं इसवास्ते

सुर्याभके नाटक को यदि भगवंत निषेध करें तो सर्व ठिकाने जुदे जुदे नाटक होवें और तिससे हिंसा वध जावे" तिसका उत्तर–जेठमल की यह कल्पना बिलकुल झूठी है, जब सुर्याभ प्रभुके पास आया तब क्या देवलोक में शून्यकार था ? और समवसरण में बारमें देवलोक तकके देवता और इंद्रथे क्या उन्होंने सुर्याभ जैसा नाटक नहीं देखा था ? जो वो देखने वास्ते बैठे रहे, इसवास्ते यहां इतनाही समझनेका है कि इंद्रादिक देवते बैठते हैं सो फकत भगवंतकी भक्ति समझ के ही बैठते हैं, तथा सुर्याभ देवलोक में नाटयारंभ बंद करके आया है ऐसे भी नहीं कहा है इसवास्ते जेठमलका पूर्वोक्त लिखना व्यर्थ है, और इस पर प्रश्न भी उत्पन्न होता है कि जब ढूंढिक रिख–साधु–व्याख्यान वांचते हैं तब विना समझे 'हाजीहा' 'तहत वचन' करने वाले ढूंढिये तिनके आगे आबैठते हैं; जबतक वो व्याख्यान वांचते रहेंगे तबतक तो वे सारे बैठे रहेंगे परंतु जब वो व्याख्यान बंदकरेंगे तब स्त्रियें जाके चुल्हेमें आग पावेंगी, रसोईपकाने लगेंगी, पानी भरने लगजावेंगी, और आदमी जाके अनेक प्रकार के छलकपट करेंगे, झूठबोलेंगे, हरी सबजी लेनेको चले जावेंगे, षट्काय का आरंभ करेंगे, इत्यादि अनेक प्रकारके पाप कर्म करेंगे, तो वो सर्व पाप व्याख्यान बंद करने वाले रिखों (साधुओं) के शिर ठहरें या अन्यके ? जेठमलजी के कथन मूजिब तो व्याख्यान बंद करने वाले रिखियों केही शिर ठहरता है !

(१४) जेठमल लिखता है कि "आनंद कामदेव प्रमुख श्रावकों ने भगवंतके आगे नाटक क्यों नहीं किया?" उत्तर–तिनमें सुर्याभ जैसी नाटक करने की अद्भुत शक्ति नहीं थी ॥

(१५) जेठमल लिखता है कि "रावणने अष्टापदपर्वत ऊपर

जिनप्रतिमाके सन्मुख नाटक करके तीर्थंकरगोत्र बांधा कहतेहो परंतु श्रीज्ञातासूत्र में वीस स्थानक आराधने से ही जीव तीर्थंकरगोत्र बांधता है ऐसे कहा है तिस में नाटक करनेसे तीर्थंकरगोत्र बांधनेका तो नहीं कथन है" उत्तर–इसलेखसे मालूम होता है कि जेठे निन्हव को जैनधर्म की शैलि की और सूत्रार्थ की बिलकुल खबर नहीं थी, क्योंकि वीस स्थानक में प्रथम अरिहंत पद है और रावणने नाटक किया सो अरिहंत की प्रतिमा के आगे ही किया है, इसवास्ते रावणने अरिहंत पद आराधके तीर्थंकरगोत्र उपार्जन किया है॥

(१६) जेठमल लिखता है कि "सुर्याभ के विमानमें बारह बोलके देवता उत्पन्न होते हैं ऐसे सुर्याभने प्रभुको किये ६ प्रश्नों से ठहरताहै इसवास्ते जितने सुर्याभ विमानमें देवतेहुए तिन सर्वने जिन प्रतिमाकी पूजाकरी है" उत्तर–जेठमल का यह लेख स्वमति कल्पना का है, क्योंकि वो करणीसम्यग्दृष्टि देवता की हैं मिथ्यात्वीकी नहीं श्रीरायपसेणीसूत्र में सुर्याभ के सामानिक देवता ने सुर्याभ को पूर्व और पश्चात् हितकारी वस्तु कही है वहां कहा है यतः–

अन्नेसिंचबहुणं वेमाणियाणं देवाणय देवीणय अच्चणिज्जाओ।

अर्थात् अन्य दूसरे बहुत देवता और देवियोंके पूजा करने लायक है, इससे सिद्ध होता है कि सम्यग्दृष्टिकी यह करणी है; यदि ऐसे न होवे तो "सव्वेसिं वेमाणियाण" ऐसे पाठ होता इसवास्ते विचारके देखो॥

(१७) जेठमल कहता है कि "अनंते विजय देवता हुए तिन में सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि दोनों ही प्रकारके थे और तिन सर्व ने सिद्धायतन में जिनपूजा करी है, परतु प्रतिमा पूजने से भव्य

भव्य सर्व जीव सम्यग्दृष्टि हुए नहीं और सिद्धि भी नहीं पाये।"

उत्तर-अपना मतसत्य ठहराने वालेने सूत्रमें किसीभी मिथ्या दृष्टि देवताने सिद्धायतनमें जिनप्रतिमाकी पूजा करी ऐसा अधिकार होवे तो सो लिखके अपना पक्ष दृढ़ करना चाहिये । जेठमल ने ऐसा कोई भी सूत्रपाठ नहीं लिखा है किंतु मनः कल्पित बातें लिख के पोथी भरी है, इसवास्ते तिसका लिखना बिलकुल असत्य है, क्योंकि किसी भी सूत्र में इस मतलबका सूत्रपाठ नहीं है।

और जेठमलने लिखा है कि " प्रतिमा पूजने से कोई अभव्य सम्यग्दृष्टि न हुआ इसवास्ते जिनप्रतिमा पूजनेसे फायदा नहीं है" उत्तर-अभव्य के जीव शुद्ध श्रद्धायुक्त अंतःकरण विना अनंतीवार गौतमस्वामी सदृश चारित्र पालते हैं और नवमें ग्रैवेयक तक जाते हैं,, परंतु सम्यग्दृष्टि नहीं होते हैं; ऐसे सूत्रकारोंका कथन है, इस वास्ते जेठमलके लिखे मूजिब तो चारित्र पालने से भी किसी ढूंढक को कुछ भी फायदा नहीं होगा ॥

(१८) पृष्ठ (१०२) में जेठमलने सिद्धायतन में प्रतिमा की पूजा सर्व देवते करते हैं ऐसे सिद्ध करनेके वास्ते कितनीक कुयुक्तियां लिखी हैं सो सर्व तिसके प्रथमके लेखके साथ मिलती हैं तो भी भोले लोगोंको फंसाने वास्ते वारंवार एककी एक ही बात लिख के निकम्मे पत्रे काले करे हैं ॥

(१९) जेठमल लिखता है कि "सर्व जीव अनंतीवार विजय पोलीए पणे उपजे हैं तिन्होंने प्रतिमाकी पूजाकरी तथापि अनंतभव क्यों करने पड़े ? क्योंकि सम्यक्त्ववान् को अनंते भव होवे नहीं ऐसा सूत्रका प्रमाण है" उत्तर-सम्यक्त्ववान् को अनंते भव होवे नहीं ऐसे जेठमल मूढ़मति लिखता है सो बिलकुल जैन शैलिसे

विपरीत और असत्य है, और "ऐसा सूत्रका प्रमाण है" ऐसे जो लिखा है सो भी जैसे मच्छीमारके पास मछलियां फसाने वास्ते जाल होताहै तैसे भोले लोगों को कुमार्गमें डालने का यह जाल है क्योंकि सूत्रों में तो चारज्ञानी, चौदपूर्वी, यथाख्यातचारित्री, एकादशमगुणठाणेवाले को भी अनते भव होवे ऐसे लिखा है तो सम्यग् दृष्टिको होवे इसमें क्या आश्चर्य है? तथा सम्यक्त्व प्राप्तिके पीछे उत्कृष्ट अर्द्धपुद्गल परावर्त्त संसार रहता है और सो अनंताकाल होने से तिसमें अनंते भव हो सकते हैं * ॥

(२०) जेठमल लिखता है कि "एक वक्त राज्याभिषेक के समय प्रतिमा पूजते हैं परंतु पीछे भव पर्यंत प्रतिमा नहीं पूजते हैं" उत्तर–सुर्याभने पूर्व और पीछे हितकारी क्या है? ऐसे पूछा तथा पूर्व और पीछे करने योग्य क्या है? ऐसे भी पूछा, जिसके जवाबमें तिस के सामानिक देवताने जिनप्रतिमाकी पूजा पूर्व और पीछे हितकारी और करने योग्य कही जो पाठ श्रीरायपसेणी सूत्रमें प्रसिद्ध है† इसवास्ते सुर्याभ देवताने जिनप्रतिमा की पूजा नित्यकरणी तथा सदा हितकारी जानके हमेशां करी ऐसे सिद्ध होता है ॥

---

* श्रीजीवाभिगम सूत्र में लिखा है यत —

सम्मदिट्ठिस्स अंतरं सातियस्स अपज्जवसियस्स णत्थि अंतरं सातियस्स सपज्जवसियस्स जहण्णेणं अंतो मुहुत्तं उक्कोसेणं अणंतं कालं जाव अवड्ढपोग्गलपरियट्टं देसूणं ॥

† श्री राय पसेणी सूत्रका पाठ यह है:—

"तएणं तस्स सूरियाभस्स पंचविहाए पज्जत्तिए पज्जत्तिभावं गयस्ससमाणस्सइमेयारूवेअप्भत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था किं मे पुव्विं करणिज्जं किं मे पच्छा करणिज्जं किं मे

(२१) जेठा लिखता है कि "सुर्याभने धर्म्म शास्त्र वांचे ऐसे सूत्रोंमें कहा है सो कुल धर्म्मके शास्त्र समझने क्योंकि जो धर्मशास्त्र होवे तो मिथ्यात्वी और अभव्य क्यों वांचे ? कैसे सद्दहे ? और जिनवचन सच्चे कैसे जाने ? " उत्तर–सुर्याभने वांचे सो पुस्तक धर्मशास्त्र के ही हैं ऐसे सूत्रकारके कथन से निर्णय होता है 'कुल' शब्द जेठेने अपने घरका पाया है सूत्र में नहीं है और लौकिक में भी कुलाचार के पुस्तकों को धर्मशास्त्र नहीं कहते हैं, धर्म्मशास्त्र वांचने का अधिकार सम्यग्दृष्टि का ही है, क्योंकि सर्व देवता

पुव्विं सेयं किंमे पच्छा सेयं किंमे पुव्विं पच्छावि हियाए सुहाए खमाए णिस्सेसाए अणुगामित्ताए भविस्सइ तएणं तस्स सूरियाभस्स देवस्स सामाणियपरिसोववण्णगा देवा सूरियाभस्स देवस्स इमेयारूव मप्भत्थियं जाव समुप्पण्णं समभि जाणित्ता जेणेव सूरियाभे देवेतेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता सूरियाभं देवं करयल परिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थएअंजलिं कट्ट जएणं विजएणं बद्धावेंति २त्ता एवं वयासी एवंखलु देवाणुप्पियाणं सूरियाभे विमाणे सिद्धाययणे अट्ठसयंजिणपडिमाणं जिणुस्सेह पमाणमेत्ताणं सण्णिखित्तं चिट्ठंति सभाएणं सुहम्माए माणवए चेइए खंभे वइरामए गोलवट्ट समुग्गएबहूओ जिण सकहाओ सण्णिखित्ताओ चिट्ठंति ताओणं देवाणुप्पियाणं अण्णेसिंच बहूणं वेमाणियाणं देवाणय देवीणय अच्चणिज्जाओ जाव वंदणिज्जाओ णमंसणिज्जाओ पूयणिज्जाओ सम्माणणिज्जाओ कल्लाणं मंगलं देव यंचेइयं पज्जुवासणिज्जाओ तं एयणं देवाणुप्पियाणं पुव्विं करणिज्जं एयणं देवाणुप्पियाणं पच्छा करणिज्जं एयणं देवाणुप्पियाणं पुव्विं सेयं एयणं देवणुप्पियाणं पच्छा सेयं एयणं देवाणुप्पियाणं पुव्विं पच्छावि हियाए सुहाए खमाए णिस्सेसाए अणुगामित्ताए भविस्सइ"

इसमें जेठमलने " साधुको पांच प्रकारके रजोहरण रखने शास्त्रमें कहे हैं तिनमें मोरपीछी का रजोहरण नहीं कहा है" ऐसे लिखा है, परंतु तिसका इसके साथ कोई भी संबंध नहीं है। क्योंकि मोरपीछी प्रभुका कोई उपगरण नहीं है, सोतो जिनप्रतिमा के ऊपरसे बारीक जीवोंकी रक्षाके निमित्त तथा रज प्रमुख प्रमार्जने के वास्ते भक्ति कारक श्रावकों को रखने की है ॥

(५) सुर्याभने प्रतिमाको वस्त्र पहिराये इस बाबत जेठमल लिखता है कि "भगवंत तो अचेल हैं इसवास्ते तिन को वस्त्र होने नहीं चाहियें" यह लिखना बिलकुल मिथ्या है क्योंकि सूत्र में बावीस तीर्थंकरों को यावत् निर्वाण प्राप्तहुए तहां तक सचेल कहा है और वस्त्र पहिरानेका खुलासा द्रौपदीके अधिकारमें लिखा गया है ॥

(६) प्रभुको गेहने न होवे इस बाबत "आभरण पहिराये सो जुदे और चढ़ाये सो जुदे" ऐसे जेठमल कहता है, परंतु सो असत्य है ; क्योंकि सूत्र में " आभरणारोहणं " ऐसा एक ही पाठ है, और आभरण पहिराने तो प्रभुकी भक्ति निमित्त ही है ॥

(७) स्त्रीके संघट्टे बाबतका प्रत्युत्तर द्रौपदीके अधिकार में लिख आए हैं।

(८) " सिद्धायतन में जिनप्रतिमाके आगे धूप धुखाया और साक्षात् भगवंतके आगे न धुखाया " ऐसे जेठमल लिखता है परंतु सो झूठ है; क्योंकि प्रभुके सन्मुख भी सुर्याभ की आज्ञा से तिस के आभियोगिक देवताओं ने अनेक सुगंधी द्रव्यों करी संयुक्त धूप धुखाया है ऐसे श्रीरायपसेणी सूत्र में कहा है।

(२५) जेठमल कहता है कि " सर्व भोगमें स्त्री प्रधान है, इसवास्ते स्त्री क्यों प्रभुको नहीं चढ़ाते हो ? " मंदमति जेठमल

को यह लिखना महा अविवेक का है, क्योंकि जिनप्रतिमाकीभक्ति जैसे उचित होवे तैसे होती है, अनुचित नहीं होती है; परंतु सर्व भोगमें स्त्री प्रधान है ऐसा जो ढूंढिये मानते हैं तो तिनके बेअकल श्रावक अशन,पान,खादिम, स्वादिम प्रमुख पदार्थों से अपने गुरुओं की भक्ति करते हैं परंतु तिनमें से कितनेक ढूंढियों ने अपनी कन्या अपने रिख-साधुओं के आगे धरी हैं और विहराई हैं तो दिखाना चाहिये ! जेठमलके लिखे मूजिबतो ऐसे जरूर होना चाहिये ! ! ! तथा मूर्ख शिरोमणि जेठे के पूर्वोक्त लेखसे ऐसे भी निश्चय होता है कि तिस जेठेके हृदयसे स्त्री की लालसा मिटी नहीं थी इसीवास्ते उसने सर्व भोगमें स्त्री को प्रधान माना है इसबात का सबूत ढूंढक पट्टावलिमें लिखागया है ॥

(२६) जेठमल लिखता है कि "चैत्य, देवता के परिग्रह में गिना है तो परिग्रहको पूजे क्या लाभहोवे ?" उत्तर-सूत्रकारने साधुके शरीर कोभी परिग्रह में गिना है तो गणधर महाराजको तथा मुनियोंको वंदना नमस्कार करनेसे तथा तिनकी सेवा भक्ति करने से जेठमलके कहने मूजिबतो कुछ भी लाभ न होना चाहिये और सूत्र में तो वड़ाभारी लाभ बताया है, इसवास्ते तिसका लिखना मिथ्या है,क्योंकि जिसको अपेक्षा का ज्ञान न होवे तिसको जैनशास्त्र समझने बहुत मुशकिल हैं, और इसीवास्ते चैत्यको देवता के परिग्रह में गिना है तिसकी अपेक्षा जेठमलके समझने में नहीं आई है इस तरह अपेक्षा समझे विना सूत्रपाठके विपरीत अर्थ करके भोले लोगों को फंसाते हैं इसीवास्ते तिनको शास्त्रकार निन्हव कहते हैं ॥

(२७) नमुथ्थुणं की बाबत जेठमलने जो कुयुक्ति लिखीह और तीन भेद दिखाये हैं सो बिलकुल खोटहैं,क्योंकि इस प्रकारके तीन

भेद किसी जगह नहीं कहे हैं, तथा किसी भी मिथ्यादृष्टिने किसी भी अन्य देवके आगे नमुथ्थुणं पढ़ा ऐसेभी सूत्रमें नहीं कहा है, क्योंकि नमुथ्थुणं में कहे गुण सिवाय तीर्थंकर महाराज के अन्य किसी में नहीं हैं, इसवास्ते नमुथ्थुणं कहना सो सम्यग्‌दृष्टिकी ही करणी है ऐसे मालूम होता है ॥

(२८) जेठमल कहता है कि "किसी देवताने साक्षात् केवली भगवंतको नमुथ्थुणं नहीं कहा है" सो असत्य है, सुर्याभ देवताने वीर प्रभुको नमुथ्थुणं कहा है ऐसे श्रीरायपसेणी सूत्रमें प्रकट पाठ है।

(२९) जेठमल जीत आचार ठहराके देवता की करणी निकाल देता है परंतु अरे ढूंढिये! क्या देवता की करणी से पुण्य पापका बंध नहीं होता है? जो कहोगे होता है तो सुर्याभने पूर्वोक्त रीतिसे श्रीवीर प्रभुकी भक्ति करी उससे तिसको पुण्यका बंध हुआ या पाप का? जो कहोगे कि पुण्य या पाप किसी का भी बंध नहीं होता है तो जीव समयमात्र यावत् सातकर्म बांधे विना नहीं रहे ऐसे सूत्रमें कहा है सो कैसे मिलाओगे? परंतु समझनेका तो इतनाही है, कि सुर्याभ तथा अन्यदेवते जो पूर्वोक्त प्रकार जिनेश्वर भगवंत कीभक्ति करते हैं सो महापुण्य राशि संपादन करते हैं, क्योंकि तीर्थंकर भगवंतकी इस कार्य में आज्ञा है ॥

(३०) जेठमल "पुव्विं पच्छा" का अर्थ इस लोक संबंधी ठहराता है और "पेच्चा" शब्दका अर्थ परलोक ठहराता है सो जेठमल की मूढ़ता है; क्योंकि 'पुव्विं पच्छा' का अर्थ 'पूर्व जन्म' और 'अगला जन्म' ऐसा होता है; 'पेच्चा' और 'पच्छा' पर्यायी शब्द है, इन दोनोंका एकही अर्थ है जेठे ने खोटा अर्थ लिखा है इससे निश्चय होता है कि जेठमलको शब्दार्थ की समझ ही नहीं थी, श्री आचा-

रांग सूत्र में कहा है कि " जस्स नत्थि पुव्विं पच्छा मज्झे तस्स कउसिया " अर्थात् जिसको पूर्व भव और पश्चात् अर्थात् अगले भवमें कुछ नहीं है तिसको मध्यमें भी कहांसे होवे? तात्पर्य जिस को पूर्व तथा पश्चात् है तिसको मध्यमें भी अवश्य है, इसवास्ते सुर्याभ की करी जिनपूजा तिसको त्रिकाल हितकारिणी है, ऐसे श्रीरायपसेणी सूत्रके पाठका अर्थ होता है।

और श्री उत्तराध्ययन सूत्र में मृगापुत्रके संबंध में कहा है कि:-

अम्मत्ताय मए भोगा भुत्ता विसफलोवमा ॥
पच्छा कडुअविवागा अणुबंध दुहावहा ॥ १ ॥

अर्थ-हे माता पिता ? मैंने विष फल की उपमा वाले भोग भोगे हैं, जो भोग कैसे हैं ? 'पच्छा' अर्थात् अगले जन्म में कडुवा है फल जिनका और परंपरासे दुःख के देनेवाले ऐसे हैं। इस सूत्र पाठमें भी 'पच्छा' शब्द का अर्थ परभव ही होता है। किं बहुना ॥

(३१) जेठमल सुर्याभके पाठमें बताये जिन पूजाके फल की बाबत "निस्सेसाए" अर्थात् मोक्षके वास्ते ऐसा शब्द है तिस शब्द का अर्थ फिराने वास्ते भगवतीसूत्रमें से जलते घरसे धन निकालने का तथा बरमी फोड़के द्रव्य निकालनेका अधिकार दिखाता है, और कहता है कि "इस संबंधमें भी" (निस्सेसाए) ऐसा पद है इसवास्ते जो इसपदका अर्थ 'मोक्षार्थे' ऐसा होवे तो धन निकालने से मोक्ष कैसे होवे ? तिसका उत्तर-धनसे सुपात्रमें दानदेवे, जिन मंदिर, जिनप्रतिमा बनवावे, सातों क्षेत्रों में, तीर्थयात्रा में, दयामें तथा दानमें धन खरचे तो उससे यावत् मोक्षप्राप्त होवे इसवास्ते सूत्रमें जहां जहां "निस्सेसाए " शब्द है तहां तहां तिस शब्दका

अर्थ मोक्ष के वास्ते ऐसा ही होता है और सो शब्द जिन प्रतिमा के पूजने के फलमें भी है तो फकत एक मूढ़मति जेठमलके कहने से महाबुद्धिमान् पूर्वाचार्य कृत शास्त्रार्थ कदापि फिर नहीं सकता है*

(३२) जेठमल निन्हवने ओघनिर्युक्ति की टीका का पाठ लिखा है सो भी असत्य है, क्योंकि ऐसा पाठ ओघनिर्युक्तिमें तथा तिसकी टीकामें किसी जगह भी नहीं है। यह लिखना जेठमलका ऐसा है कि जैसे कोई स्वेच्छासे लिख देवे कि "मुंह बंधों का पंथ किसी चमार का चलाया हुआहै क्योंकि इनका कितनाक आचार व्यवहार चमारोंसे भी बुरा है ऐसा कथन प्राचीन ढूंढकनिर्युक्तिमें है"

(३३) इस प्रश्नोत्तर में आदि से अंत तक जेठमल ने सुर्याभ जैसे सम्यग्दृष्टि देवताकी और तिस की शुभ क्रिया की निंदा करी है, परंतु श्रीठाणांग सूत्रके पांचमें ठाणे में कहा है कि पांच प्रकार से जीव दुर्लभ बोधि होवे अर्थात् पांच काम करने से जीवों को जन्मांतर में धर्मकी प्राप्ति दुर्लभ होवे यतः-

पंचहिं ठाणेहिं जीवा दुल्लहबोहियत्ताए कम्मं पकरेंति। तंजहा। अरिहंताणं अवण्णं वय-

---

*जो ढूंढिये "निस्सेसाए" शब्द का अर्थ मोक्षके वास्ते ऐसा नहीं मानते हैं तो श्रीरायपसेणीसूत्रमे अरिहंत भगवंतको वंदना नमस्कार करनेका फल सुर्याभने चिंतन किया वहां भी "निस्सेसाए" शब्द है जो पाठ इसी प्रश्नोत्तर की आदिमें लिखा हुआ है, और अन्य शास्त्रोंमें भी है तो ढूढियोंके माने मूजिब तो अरिहंत भगवंतको वंदना नमस्कारका फलभी मोक्ष न होगा। क्योंकि वहा भी 'निस्सेसाए' फल लिखा है। इस वास्ते सिद्ध होता है कि जिनप्रतिमाके साथ ही ढूढियो का द्वेषहै और इसीसे अर्थ का अनर्थ करते हैं, परंतु यह इनका उद्यम अपने हाथोंसे अपना मुंह काला करने सरीखा है।

माणे १ अरिहंतपण्णत्तस्स धम्मस्स अवण्णं वयमाणे २ आयरिय उवज्झायाणं अवण्णं वयमाणे ३ चाउवण्णस्स संघस्स अवण्णं वयमाणे ४ विविक्कतवबंभचेराणं देवाणं अवण्णं वयमाणे ५ ॥

ऊपरके सूत्रपाठ के पांच में बोलमें सम्यग्दृष्टि देवताके अवर्णवाद बोलने से दुर्लभ बोधि होवे ऐसे कहा है इसवास्ते अरे ढूंढियो ! याद रखना कि सम्यग्दृष्टि देवता के अवर्णवाद बोलने से महा नीचगति के पात्र होवोगे और जन्मांतर में धर्म प्राप्ति दुर्लभ होगी ॥ इति ॥

(२१) देवता जिनेश्वर की दाढा पूजते हैं ।

एकवीसमें प्रश्नोत्तर में सुर्याभ देवता तथा विजय पोलिया प्रमुखों ने जिनदाढा पूजी हैं तिसका निषेध करने वास्ते जेठमल ने कितनीक कुयुक्तियां लिखी हैं, परंतु तिनमें से बहुत कुयुक्तियों के प्रत्युत्तर वीसमें प्रश्नोत्तर में लिखे गये हैं, बाकी शेष कुयुक्तियों के उत्तर लिखते हैं । श्रीभगवती सूत्रके दशमें शतक के पांचमें उद्देशे में कहा है कि :-

पभूणं भंते चमरे असुरिंदे असुरकुमारराया चमरचंचाए रायहाणिए सभाए सुहम्माए चमरंसि सिंहासणंसि तुडियणं सद्धिं दिव्वाइं भोग

"चार इंद्र चार दाढ़ा लेवे, पीछे कितनेक देवते अंगोपांगके अस्थि प्रमुख लेते हैं, तिनमें कितनेक जिनभक्ति जानके लेते हैं, और कितनेक धर्म जानके लेते हैं" इसवास्ते जेठमलका लिखना मिथ्या है, श्रीजंबूद्वीप पन्नत्ती का पाठ यह है :-

केई जिणभत्तिए केई जीयमेयंतिकट्टु केई धम्मोत्तिकट्टु गिण्हंति ॥

जेठमल लिखता है, कि "दाढ़ा लेनेका अधिकार तो चार इंद्रोंका है और दाढ़ाकी पूजातो बहुत देवते करते हैं ऐसे कहा है, इसवास्ते शाश्वते पुद्गल दाढ़ा के आकार परिणमते हैं" तिसका उत्तर-एक पल्योपम कालमें असंख्याते तीर्थंकरों का निर्वाण होता है इसवास्ते सर्व सुधर्मा सभाओं में जिन दाढ़ा होसक्ती हैं, और महा विदेह के तीर्थंकरों की दाढ़ा सर्व इंद्र और विमान, भुवन, नगराधिपत्यादिक लेते हैं, परंतु भरतखंड की तरें चार ही इंद्र लेवें यह मर्यादा नहीं है तथा श्री जंबूद्वीपपन्नत्ति सूत्र की वृत्ति में श्री शांतिचंद्रोपाध्यायजी ने " जिनसक्काहा " शब्द करके " जिनास्थीनि " अर्थात् जिनेश्वर के अस्थि कहे हैं तथा तिसही सूत्र में चारइंद्रों के सिवाय अन्य बहुते देवता जिनेश्वर के दांत, हाड प्रमुख अस्थि लेते हैं ऐसा अधिकार है, इसवास्ते जेठमल की करी कुयुक्तियां खोटी हैं और जेठमल दाढ़ाकों शाश्वते पुद्गल ठहराता है परंतु सूत्रोंमें तो खुलासा जिनेश्वर की दाढा कही हैं, शाश्वती दाढ़ा तो किसी जगह भी नहीं कही हैं इसवास्ते जेठमलका लिखना मिथ्या है।

जेठमल लिखता है कि "जो धर्म जानके लेते होवें तो अन्य इंद्र लेवे और अच्युतेंद्र क्यों न लेवे ? "

उत्तर–वीरभगवान् दीक्षा पर्याय में विचरते थे उस अवसर में तिनको अनेक प्रकार के उपसर्ग हुए तब भगवंतकी भक्ति जानके धर्म निमित्त सौधर्मेंद्रने वारंवार आनके उपसर्ग निवारण किये तैसे अच्युतेंद्र ने क्यों नहीं किये ? क्या वो जिनेश्वर की भक्ति में धर्म नहीं समझते थे ? समझते तो थे तथापि पूर्वोक्त कार्य सौधर्मेंद्रने ही किया है तैसेही भरतादि क्षेत्रके तीर्थंकरों की दाढ़ा चार इंद्र लेते हैं, और महा विदेह के तीर्थंकरों की सर्व लेते हैं इसवास्ते इसमें कुछ भी बाधक नहीं है, जेठमल लिखता है कि "दाढा सदा काल नहीं रहसक्ती हैं इसवास्ते शाश्वते पुद्गल समझने" इसतरह असत्य लेख लिखने में तिस को कुछ भी विचार नहीं हुआ है सो तिसकी मूढता की निशानी है, क्योंकि दाढा सदाकाल रहती हैं ऐसे हम नहीं कहते हैं, परंतु वारंवार तीर्थंकरों के निर्वाण समय दाढ़ा तथा अन्य अस्थि देवता लेते हैं इसवास्ते तिनको दाढ़ाकी पूजा में बिलकुल विरह नहीं पड़ता है ॥

जेठमल कहता है कि "जमालि तथा मेघ कुमारकी माताने तिनके केश मोहनी कर्म के उदय से लिये हैं, तैसे दाढ़ा लेने में मोहनी कर्म्म का उदय है" उत्तर–

प्रभुकी दाढ़ा देवता लेते हैं सो धर्म बुद्धि से लेते हैं तिसमें तिनको कोई मोहनी कर्म का उदय नहीं है जमालि प्रमुखके केश लेने वाली तो तिनकी माता थीं तिसमें तिनको तो मोह भी होसक्ता है परंतु इंद्रादि देवते दाढ़ा प्रमुख लेते हैं वे कोई भगवंतके सके संबंधी नहीं थे जोकि जमालि प्रमुखकी माताकी तरह मोहनी कर्म के उदयसे दाढ़ा लेवे, वे तो प्रभुके सेवक हैं और धर्म बुद्धिसे ही प्रभुकी दाढ़ा प्रमुख लेते हैं ऐसे स्पष्ट मालूम होता है।

जेठमल लिखता है कि "देवता जो दाढ़ा प्रमुख धर्म बुद्धिसे लेते होवें तो श्रावक रक्षाभी क्यों नहीं लेवे ?" उत्तर-

जिसवक्त तीर्थंकरका निर्वाण होता है उसवक्त निर्वाण महोत्सव करनेवास्ते अगणिदेवता आते हैं और अग्निदाह किये पीछे वे दाढ़ा प्रमुख समग्र लेजाते हैं शेष कुछ भी नहीं रहता है तो इतने सारे देवताओंके बीच मनुष्य किस गिनती में हैं जो तिनके बीच जाके रक्षा प्रमुख कुछ भी ले सकें ?॥

जेठमल कहता है, कि "कुलधर्म जानके दाढ़ा पूजते हैं" सो भी असत्य है क्योंकि सूत्रों में किसी जगह भी कुलधर्म नहीं कहा है,जेठाइसको लौकिक जीतव्यवहार की करणी ठहराता है,परंतु यह करणी तो लोकोत्तर मार्गकी है "जिनदाढ़ा कीआशातना टालने वास्ते इंद्रादिक सुधर्मा सभामें भोग नहीं भोगते हैं तथा मैथुन संज्ञासे स्त्रीके शब्दका भी सेवन नहीं करते हैं" ऐसे पूर्वोक्त सूत्र पाठ में कहा है तथापि विना अकल के बेवकूफ आदमी की तरह जेठ मल ने कितनीक कुयुक्तियां लिखी हैं सो मिथ्या हैं, इस प्रसंग में जेठे ने कृष्णकी सभा की बात लिखी है कि "कृष्णकी भी सुधर्मा सभा है तो तिस में क्या भोग नहीं भोगते होंगे ?" उत्तर-सूत्रोंमें ऐसे नहीं कहा है कि कृष्णकी सभा में विषय सेवन नहीं होता है इस प्रकार लिखने से जेठे का यह अभिप्राय मालूम होता है कि ऐसी ऐसी कुयुक्तियां लिखके दाढ़ा की महत्त्वता घटा दे परंतु पूर्वोक्त पाठमें सिद्धांतकारने खुलासा कहाहै कि दाढ़ाकी आशातना टालने के निमित्तही इंद्रादिक देवते सुधर्मा सभा में भोग नहीं भोगते हैं,तामलि तापस ईशानेंद्र होके पहले प्रथम जिनप्रतिमा की पूजा करताहुआ सम्यक्त्व को प्राप्तहुआ है इस बाबतमें जेठा

कुमति तिसकी करी पूजा को मिथ्यादृष्टिपणे में ठहराता है सो मिथ्या है क्योंकि तिसने इंद्रपणे पैदा होके जिनप्रतिमा की पूजा करके तत्कालही भगवंत महावीर स्वामी के समीप जाके प्रश्न किया और भगवंतने आराधक कहा, पूर्व भवमें तो वो तापस था इसवास्ते इस भवमें उत्पन्न होके तत्काल करी जिनप्रतिमा की पूजा के कारणसे ही आराधक कहा है ऐसे समझना * ॥

अभव्यकुलक में कहा है कि अभव्यका जीव इंद्र न होवे इस बाबत जेठमल कहता है कि "इंद्रसे नवग्रैवेयक वाले अधिक ऋद्धि वाले हैं अहमिंद्र हैं और वहां तक तो अभव्य जाता है तो इंद्र न होवे तिसका क्या कारण?" उत्तर—यथा कोई शाहुकार बहुत धनाढ्य अर्थात् गामके राजासे भी अधिक धनवान् होवे राजासे नहीं मिलता है, तथैव अभव्यका जीव इंद्र न होवे और ग्रैवेयकमें देवता होवे तिसमें कोई बाधक नहीं, ऐसा स्पष्ट समझा जाता है, जैसे देवता चयके एकेंद्रिय होता है परंतु विकलेंद्रिय नहीं होता है (जोकि विकलेंद्रिय एकेंद्रिय से अधिक पुण्य वाले हैं) तथा एकेंद्रियसे निकलके एकावतारी होके मोक्ष जाते हैं परंतु विकलेंद्रिय कि जिसकी पुण्याई एकेंद्रियसे अधिक गिनी जाती है, तिस में से निकलके कोईभी जीव एकावतारी नहीं होता है, इसवास्ते जैसी जिसकी स्थिति बंधी हुई है तैसी तिसकी गति आगति होती है॥

"अभव्यकुलक में इंद्रका सामानिक देवता अभव्य न होवे ऐसे कहा है तो संगम अभव्य का जीव इंद्रका सामानिक क्यों हुआ?" ऐसे जेठमल लिखता है तिसका उत्तर—जैन शास्त्रकी रचना विचित्र

* "यह जिनपूजा थी आराधक ईशान इन्द्रकहायाजी" ऐसा पूर्व महात्माओं का वचन भी है॥

प्रकाशकी है, श्रीभगवती सूत्रके प्रथमशतकके दूसरे उद्देशे में विराधित संयमी उत्कृष्ट सुधर्म देवलोक में जावे ऐसे कहा है और ज्ञाता सूत्रके सोलमें अध्ययन में विराधित संयमी सुकुमालिका ईशान देवलोक में गई ऐसे कहाहै, तथा श्रीउववाइ सूत्रमें तापस उत्कृष्ट ज्योतिषि तक जाते हैं ऐसे कहा है और भगवती सूत्र में तामलि तापस ईशानेंद्र हुआ ऐसे कहा है, इत्यादिक बहुत चर्चा है परंतु ग्रंथ वध जानेके कारण यहां नहीं लिखी है, जब सूत्रोंमें इस तरह है तो ग्रंथों में होवे इसमें कुछ आश्चर्य नहीं है, सुर्याभने प्रभुको ६ वोल पूछे इससे बारह वोलवाले सुर्याभ विमान में जाते हैं ऐसे जेठ मलने ठहराया है परंतु सो झूठ है, क्योंकि छद्मस्थ जीव अज्ञानता अथवा शंकासे चाहो जैसा प्रश्न करे तो तिसमें कोई आश्चर्य नहीं है, तथा " देवता संबंधी बारह बोलकी पृच्छा सूत्र में है परंतु मनुष्य संबंधी नहीं है इसवास्ते बारह बोलके देवता होते हैं "ऐसे जेठेने सिद्ध किया है तो मनुष्य संबंधी बारह बोलकी पृच्छा न होने से जेठेके लिखे मूजिब क्या मनुष्य बारह बोलके नहीं होते हैं ? परतु जेठमलने फकत जिनप्रतिमाके उत्थापन करने वास्ते तथा मंदमति जीवों को अपने फंदेमें फंसानेके निमित्तही ऐसी मिथ्या कुयुक्तियां करी हैं ॥

और देवताकी करणीको जीत आचार ठहराके जेठमल तिस करणी को गिनतीमें से निकाल देता है अर्थात् तिसका कुछभी फल नहीं ऐसे ठहराता है, परंतु इसमें इतनी भी समझ नहीं, कि इंद्र प्रमुख सम्यग्दृष्टि देवताओं का आचार व्यवहार कैसा है ? वो प्रभुके पांचों कल्याणकों में महोत्सव करते हैं, जिनप्रतिमा और जिनदाढाकी पूजा करते हैं, अठमे नंदीश्वरद्वीपमें अट्ठाई महोत्सव

करते हैं मुनि महाराजा को वंदना करने वास्ते आते हैं, इत्यादि सम्यग्दृष्टिकी समग्र करणी करते हैं परंतु किसी जगह अन्य हरि-हरादिक देवों को तथा मिथ्यात्वियों को नमस्कार करने वास्ते गये, पूजने वास्ते गये, तिनके गुरुओं को वंदना करी, तिनका महोत्सव किया इत्यादि कुछ भी नहीं कहा है, इसवास्ते तिनकी करी सर्व करणी सम्यग्दृष्टि की है, और महापुण्य प्राप्तिका कारण है, और जीत आचार से पुण्यबंध नहीं होता है ऐसे कहां कहा है ? ॥

जेठमल केवलकल्याणक का महोत्सव जीत आचार में नहीं लिखता है, इससे मालूम होता है कि तिसमें तो जेठमल पुण्य बंध समझता है, परंत श्रीजंबूद्वीपपन्नत्ती सूत्र में तो पांचों ही कल्याणकों के महोत्सव करने वास्ते धर्म और जिनभक्ति जानके आते हैं ऐसे कहा है, इसवास्ते जेठेने जो अपने मन पसंद के लेख लिखे हैं सो सर्व मिथ्या है, श्रीजंबूद्वीपपन्नत्ती सूत्रके तीसरे अधिकार में कहा है कि:—

अप्पेगइया वंदणवत्तियं एवं पूयणवत्तियं सक्कार सम्माण दंसण कोउहल्ल अप्पे सक्कस्स वयणुयत्तमाणा अप्पे अण्ण मण्णमणुयत्तमाणा अप्पेजीयमेतं एवमादि ॥

अर्थ—कितनेक देवता वंदना करने वास्ते, कितनेक पूजा वास्ते, सत्कार वास्ते, सन्मान वास्ते, दर्शन वास्ते, कतुहल वास्ते, कितनेक शक्रेंद्रके कहने से, कोई कोई परस्पर एक दूसरे के कहने से और कितनेक हमारा यह उचित काम है ऐसा जानके आते हैं ॥

जेठमल लिखता है कि " श्रीअष्टापद जा ऊपर ऋषभ देव

चित्तभित्तिं ण णिज्झाए नारीं वा सुअलंकियं
भक्खरंपिव दट्ठुणं दिट्ठिंपडि समाहरे ॥ १ ॥

अर्थ–चित्रामकी भींत नहीं देखनी तिस पर स्त्री आदि होवे सो विकार पैदा करने का हेतु है इसवास्ते "जैसे सूर्य सन्मुख देखके दृष्टि पीछे मोड़ लेते हैं तैसे ही चित्राम देखके दृष्टि मोड़ लेनी, जिस तरह चित्रामकी मूर्त्ति देखने से विकार उत्पन्न होता है इसी तरह जिनप्रतिमा के दर्शनकरने से वैराग्य उत्पन्न होता है क्योंकि जिन बिंब निर्विकार का हेतु है, इस ऊपर जेठमल ढूंढक श्रीप्रश्नव्याकरण का पाठ लिखके तिसके अर्थ में लिखता है कि "जिन मूर्त्तिभी देखनी नहीं कही है" परंतु यह तिसका लिखना मिथ्या है, क्योंकि श्रीप्रश्नव्याकरण में जिनप्रतिमा देखने का निषेध नहीं है, किंतु जिस मूर्त्तिके देखने से विकार उत्पन्न होवे तिसके देखनेका निषेध है, पूर्वोक्त सूत्रार्थ में जेठमल चैत्य शब्दका अर्थ जिनप्रतिमा कहता है और प्रथम उसने लिखा है "चैत्य शब्दका अर्थ जिनप्रतिमा नहीं होता ही है परंतु साधु अथवा ज्ञान अर्थ होता है" अरे ढूंढियो ! विचार करो कि चैत्यशब्द का अर्थ जो साधु कहोगे तो तुम्हारे कहने मूजिब साधु के सन्मुख नहीं देखना, और ज्ञान कहोगे तो ज्ञान अर्थात् पुस्तक अथवा ज्ञानी के सन्मुख नहीं देखना ऐसे सिद्ध होवेगा ! और पूर्वोक्त पाठ में घर, तोरण, स्त्री प्रमुख के देखने की ना कही है तो ढूंढिये गोचरी करने को जाते हो वहां घर तोरण, स्त्री प्रमुख सर्व होते हैं तिनको न देखने वास्ते जैसे मुंहको पट्टी बांधते हो तैसे आखों को पट्टी क्यों नहीं बांधते हो ? जेठमल ने प्रत्येकबुद्धि प्रमुखकी हकीकत लिखी है तिस का प्रत्युत्तर १३में प्रश्नोत्तर में लिखा गया है, वहां से देखलेना ॥

जेठमल लिखता है कि "जिनप्रतिमा को देखके कोई प्रतिबोध नहीं पाया" उत्तर–श्री ऋषभदेव की प्रतिमाको देखके आर्द्र कुमार प्रतिबोध हुआ* और श्रीदशवैकालिक सूत्रके कर्त्ता श्रीशय्यंभवसूरि शांतिनाथजीकी प्रतिमाको देखके प्रतिबोध हुए। यतः–

सिज्जंभवं गणहरंजिणपडिमादंसणेणपडिबुद्धं

जेकर मूढ़मति ढूंढिये ऐसे कहें कि "यह पाठ तो निर्युक्ति का है और निर्युक्ति हम नहीं मानते हैं" तिनको कहना चाहिये कि श्री समवायांगसूत्र, श्रीविवाहप्रज्ञप्ती (भगवती) सूत्र, श्रीनंदिसूत्र तथा श्रीअनुयोगद्वार सूत्रके मूलपाठमें निर्युक्ति माननी कही है और तुम नहीं मानते हो तिसका क्या कारण ? जेकर जैनमतके शास्त्रों को नहीं मानते हो तो फेर नीच लोकों के पंथको मानों ! क्योंकि तुमारा कितनाक आचार व्यवहार उनके साथ मिलता आवेगा ॥ ॥ इति ॥

---

*यदुक्तं श्रीसूत्रकृतांगे द्वितीयश्रुतस्कंधे षष्ठाध्ययने।
पीतीय दोण्ह दूओ पुच्छणमभयस्स पच्छवेसोउ ॥
तेणावि सम्मदिट्ठित्ति होज्जपडिमारहंमिगया।
दट्ठुं संबुद्धो रक्खिओय ॥

व्याख्या–अन्यदार्द्रकपित्रा जनहस्तेन राजगृहे श्रेणिकराज्ञः प्राभृतं प्रेषितं आर्द्रककुमारेण श्रेणिकसुतायाभयकुमाराय स्नेह करणार्थ प्राभृतं तस्यैव हस्तेन प्रेषितं जनो राजगृहेगत्वा श्रेणिक राज्ञः प्राभृतानि निवेदितवान् संमानितश्च राज्ञा आर्द्रक प्रहितानि प्राभृतानि चाभयकुमाराय दत्तवान् कथितानि स्नेहोत्पादकानि वचनानि अभयेनाचिंति नूनमसौ भव्यःस्यादासन्नसिद्धिको यो मया

(२३)जिनमंदिर करानेसे तथा जिनप्रतिमाभराने से बारमें देवलोक जावे इस बाबत।

श्रीमहानिशीथ सूत्रमें कहा है कि जिनमंदिर बनवाने से सम्यगदृष्टि श्रावक यावत् बारमें देवलोक तक जावे—यतः

सार्द्ध प्रीति मिच्छतीति ततोऽभयेन प्रथम जिनप्रतिमा बहुप्राभृत युताऽऽर्द्रककुमाराय प्रहिता इदं प्राभृतमेकांते निरूपणीयमित्युक्तं जनस्य सोप्यार्द्रकपुरं गत्वा यथोक्तं कथयित्वा प्राभृतमार्पयत् प्रतिमां निरूपयतः कुमारस्य जातिस्मरणमुत्पन्नं धर्मे प्रतिबुद्धं मनः अभयं स्मरन् वैराग्यात्कामभोगेष्वनासक्तस्तिष्ठति पित्रा ज्ञातं मा कचिदसौ यायादिति पंचशत सुभटैर्नित्यं रक्ष्यते इत्यादि॥

भावार्थः—एक दिन आर्द्रकुमारके पिताने दूतके हाथ राजगृह नगरीमें श्रेणिक राजाको प्राभृत (नजर-तोसा) भेजा, आर्द्रकुमारने श्रेणिक राजा के पुत्र अभयकुमार के तांई स्नेह करने वास्ते उसी दूत के हाथ प्राभृत भेजा, दूतने राजगृह में जाकर श्रेणिक राजाको प्राभृत दिये, राजाने भी दूतका यथायोग्य सन्मान किया, और आर्द्र कुमारके भेजे प्राभृत अभयकुमारको दिये तथा स्नेह पैदा करन के वचन कहे, तब अभयकुमारने सोचा कि निश्चय यह भव्य है, निकट मोक्षगामी है, जो मेरे साथ प्रीति इच्छता है। तब अभयकुमार ने बहुत प्राभृत सहित प्रथमजिन श्रीऋषभदेव स्वामी की प्रतिमा आर्द्रकुमारके तांई भेजी और दूतको कहा कि यह प्राभृत आर्द्र कुमारको एकांतमें दिखाना, दूतने भी आर्द्रकपुर में जाके यथोक्त कथन करके प्राभृत दे दिया। प्रतिमाको देखते हुए आर्द्रकुमारको जातिस्मरणज्ञान उत्पन्न हुआ, धर्म में मन प्रतिबोध हुआ; अभयकुमारको याद करता हुआ वैराग्य से काम भोगों में आसक्त नहीं होता हुआ आर्द्रकुमार रहता है, पिताने जाना मत कभी यह कहीं चला जावे इसवास्ते पांच सौ सुभटों करके पिता हमेशा उसकी रक्षा करता है इत्यादि॥

यह कथन श्रीसूयगडांग सूत्रके दूसरे श्रुतस्कंध के छट्ठे अध्ययन में है। ढूंढिये इस ठिकाने कहते हैं कि अभयकुमारने आर्द्रकुमार को प्रतिमा नहीं भेजी है, मुंहपत्ती भेजी है तो हम पूछते हैं कि यह पाठ किस ढूंढक पुराण में है? क्योंकि जैनमत के किसी भी शास्त्र में ऐसा कथन नहीं है। जैनमतके शास्त्रों में तो पूर्वोक्त श्रीऋषभदेव स्वामी की प्रतिमा भेजने का ही अधिकार है॥

काउंपि जिणायरणेहिं मंडिअं सव्वमेयणीवट्टं दाणाइचउक्केणं सट्ढो गच्छेज्जअच्चुअंजाव

इसको असत्य ठहराने वास्ते जेठमलने लिखा है कि "जिन मंदिर जिनप्रतिमा करावे सो मंदबुद्धिया दक्षिण दिशाका नारकी होवे" उत्तर–यह लिखना महामिथ्या है। क्योंकि ऐसा पाठ जैनमत के किसी भी शास्त्रमें नहीं है, तथापि जेठमलने उत्सूत्र लिखते हुए जरा भी विचार नहीं करा है जेकर जेठमल ढूंढक वर्त्तमान समयमें होता तो पंडितों की सभामें चर्चा करके उसका मुंहकाला कराके उसके मुखमें जरूर शक्कर देते! क्योंकि झूठ लिखने वाले को यही दंड होना चाहिये॥

जेठमल लिखता है कि "श्रेणिक राजाको महावीर स्वामी ने कहा कि कालकसूरिया भैंसे न मारे, कपिलादासी दान देवे, पुनीया श्रावककी सामायिक मूल लेवे अथवा तू नवकारसीमात्र पच्चक्खाण करे तो तू नरकमें न जावे, यह चार बातें कहीं परंतु जिनपूजा करे तो नरकमें न जावे ऐसे नहीं कहा" उत्तर–ढूंढिये जितने शास्त्र मानते हैं तिनमें यह कथन बिलकुल नहीं है तो भी इस बातका संपूर्ण खलासा दशमें प्रश्नोत्तरमें हमने लिख दिया है॥

जेठमलने श्रीप्रश्नव्याकरण का पाठ लिखा है जिस से तो जितने ढूंढिये, ढूंढनियां, और उनके सेवक हैं वे सर्व नरकमें जावेंगे ऐसे सिद्ध होता है। क्योंकि श्रीप्रश्नव्याकरण के पूर्वोक्त पाठ में लिखा है कि जो घर, हाट, हवेली, चौंतरा, प्रमुख बनावे सो मंद बुद्धिया और मरके नरक में जावे। सो ढूंढिये ऐसे बहुत काम करते हैं। तथा ढूंढक साधु, साध्वी, धर्मके वास्ते विहार करते हैं,

रस्तेमें नदी उतरते हुए त्रस स्थावर की हिंसा करते हैं, पडिलहण में वायुकाय हणते हैं, नाक के तथा गुदा के पवनसे वायु काय मारते हैं,सदा मुंह बांधने से असंख्याते सन्मूर्छिम जीव मारते हैं, मेघ वरसते में सचित्त पानीमें लघु नीति तथा बड़ी नीति परठवते हैं, तिससे असंख्याते अप्कायको मारते हैं,*इत्यादि सैंकड़ों प्रकार से हिंसा करते हैं, इसवास्ते सो मंदबुद्धि यही हैं, और जेठे के लिखे मूजिब मरके नरक में ही जाने वाले हैं, इस अपेक्षा तो क्या जाने जेठे का यह लिखना सत्य भी हो जावे ! क्योंकि ढूंढकमत दुर्गति का कारण तो प्रत्यक्ष ही दखाई देता है ॥

और जेठमल ने "दक्षिण दिशा का नारकी होवे" ऐसे लिखा है, परंतु सूत्रपाठ में दक्षिण दिशा का नाम भी नहीं है, तो उसने यह कहां से लिखा ? मालूम होता है कि कदापि अपने ही उत्सूत्र भाषण रूप दोष से अपनी वैसी गति होनेका संभव उसको मालूम हुआ होगा और इसीवास्ते ऐसा लिखा होगा ! ! और शुद्ध मार्ग गवेषक आत्मार्थी जीवों को तो इस बात में इतना ही समझने का है कि श्रीप्रश्नव्याकरण सूत्र का पूर्वोक्त पाठ मिथ्यादृष्टि अनार्यों की अपेक्षा है, क्योंकि इस पाठ के साथही इस कार्य के अधिकारी माछी, धीवर, कोली, भील,तस्कर,प्रमुखही कहे हैं,और विचार करोकि जो ऐसे न होवे तो कोई भी जीव नरकविना अन्य गति में न जावे, क्योंकि प्रायः गृहस्थी सर्व जीवों को घर, दुकान वगैरह करना पड़ता है, श्री उपासकदशांग सूत्रमें आनंद प्रमुख श्रावकोंके घर,हाट,खेत,गड्डे, जहाज, गोकुल,भट्ठियांप्रमुख आरंभ

---

* कितनेक जूं लीख प्रमुख को कपड़े की टांकी मे बांध के संथारा पचखाते हैं अर्थात् मारते हैं,तथा कितनेक गूंहकी ईंटों से पीसते हैं, तिसमें चूरणीये मारते हैं ।

का अधिकार वर्णन किया है,तथापि वो काल करके देवलोक में गये हैं, इसवास्ते अरे मूर्ख ढूंढियो! जिन मंदिर कराने से नरक में जावे ऐसे कहते हो सो तुमारी दुष्टबुद्धिका प्रभाव है और इसीवास्ते सूत्रकारका गंभीर आशय तुम बेगुरेनहीं समझ सक्ते हो॥

जेठमलने लिखा है कि "जैनधर्मी आरंभसें धर्म मानते हैं"। उत्तर–जैनधर्मी आरंभ को धर्म नहीं मानते हैं, परंतु जिनाज्ञा तथा जिनभक्ति में धर्म और उस से महापुण्य प्राप्ति यावत् मोक्ष फल श्रीरायपसेणीसूत्र के कथनानुसार मानते हैं।

जेठमल जिनमंदिर और जिनप्रतिमा कराने बाबत इस प्रश्नोत्तर में लिखता है,परंतु तिसका प्रत्युत्तर प्रथम दो तीनवारलिखचुके हैं॥

जेठमलने "देवकुल" शब्द का अर्थ सिद्धायत करा है, परंतु देवकुल शब्द अन्य तीर्थिदेवके मंदिरमें बोला जाता है, जिनमंदिर के बदले देवकुल शब्द लौकिक में नहीं बोला जाता है । और सूत्रकारने किसी स्थल में भी नहीं कहा है, सूत्रकारने तो सूत्रों में जिनमंदिर के बदले सिद्धायतन, जिनघर,अथवा चैत्य कहा है, तोभी जेठेने खोटी खोटी कुयुक्तियां लिखके स्वमति कल्पनासे जो मनमें आया सो लिख मारा है सो उसके मिथ्यात्वके उदयका प्रभाव है,सिद्धायतन शब्द सिद्ध प्रतिमाके घर आश्री है, और जिन घर शब्द अरिहंतके मंदिर आश्री द्रौपदीके आलावे में कहा है, इस वास्ते इन दोनों शब्दोंमें कुछभी प्रतिकूलभाव नहीं है,भावार्थ में तो दोनों एकही अर्थ को प्रकाशते हैं॥ इति॥

(२४) साधुजिनप्रतिमा की वेयावच्च करे।

श्रीप्रश्न व्याकरण सूत्रके तीसरे संवर द्वारमें साधु पंदरां बोल

की वैयावच्च करे ऐसा कथन है तिनमें पंदरमा बोल जिनप्रतिमा का है तथापि जेठे निन्हवने चउदां बोल ठहराके पंदरमें बोलका अर्थ विपरीत कियाहै इसवास्ते सो सूत्रपाठ अर्थ सहित लिखते हैं॥यतः-

अह केरिसए पुण आराहए वयमिणं जेसे उवही भत्तपाणे संगहदाण कुसले अच्चंत बाल,१,दुब्बल,२, गिलाण,३,वुड्ढ, ४,खवगे, ५,पवत्त,६,आयरिय,७, उवज्झाए, ८, सेहे, ९,साहम्मिए,१०,तवस्सी,११, कुल, १२, गण, १३, संघ,१४, चेइयट्ठे,१५,निज्जरट्ठी वेयावच्चे अणिस्सियं दसविहं बहुविहं पकरेइ ॥

अर्थ-शिष्य पूछता है "हे भगवन् ! कैसा साधु तीसरा व्रत आराधे ?" गुरु कहते हैं "जो साधु वस्त्र तथा भातपाणी यथोक्त विधिसे लेना और यथोक्त विधिसे आचार्यादिकको देना तिनमें कुशल होवे सो साधु तीसरा व्रत आराधे। अत्यंत बाल (१) शक्ति हीन (२) रोगी (३) वृद्ध (४) मास क्षपणादि करने वाला(५)प्रवर्त्तक (६) आचार्य (७) उपाध्याय (८) नव दीक्षित शिष्य (९) साधर्मिक (१०) तपस्वी(११)कुलचांद्रादिक (१२)गण कुलका समुदाय कौटिकादिक (१३) संघ कुलगणका समुदाय चतुर्विध संघ (१४) और चैत्य जिनप्रतिमा इनका जो अर्थ तिनमें निर्जराका अर्थी साधु कर्म क्षय वांछता हुआ यश मानादिककी अपेक्षा विना दश प्रकारसे तथा बहु विधसे वेयावच्च करे सो साधु तीसरा व्रत आराधे। इस

वाबत जेठमल भातपाणी तथा उपधि देनी तिसको ही वेयावच्च कहता है सो मिथ्या है। क्योंकि वाल, दुर्बल, वृद्ध, तपस्वी प्रमुख में तो भातपाणी का वेयावच्च संभव हो सक्ता है परंतु कुल, गण, और साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविकारूप चतुर्विध संघ, तथा चैत्य जो अरिहंत की प्रतिमा इनको भातपाणी देनेसे ही वेयावच्च नहीं; किंतु वेयावच्च के अन्य बहु प्रकार हैं। जैसे कुल, गण, संघ तथा अरिहंत की प्रतिमा इनका कोई अवर्णवाद बोले, इनकी हीलना तथा विराधना करे तिसको उपदेशादिक देके कुल गण प्रमुख की विराधना टाले और इनके (कुल गण प्रमुख के) प्रत्यनीकका अनेक प्रकारसे निवारण करे सो भी वेयावच्चमें ही शामिल है तैसे अन्य भी वेयावच्चके बहुत प्रकार हैं* ॥

श्रीउत्तराध्ययनसूत्रमें हरिकेशी मुनिके अध्ययनमें लिखा है कि " जक्खाहु वेयावडियं करेति " मतलब श्रीहरिकेशीमुनि की वेयावच्च करने वाले यक्ष देवताने मुनिको उपसर्ग करने वाले ब्राह्मणोंके पुत्रों को जब मारा और ब्राह्मण हरिकेशी मुनि के समीप आकर क्षमा मांगने लगा तब श्रीहरिकेशी मुनिने कहा कि "मैंने कुछ नहीं किया है परंतु यक्ष मेरी वेयावच्च करता है उससे तुमारे पुत्र मारे गये हैं। " देखो कि यक्ष ने हरिकेशी मुनिकी वेयावच्च किस रीतिसे करी है ? ढूंढियो ! जो अन्न पाणी से ही वेयावच्च होती है ऐसे कहोगे तो देवपिंड तो सर्वथा साधुको अकल्पनिक है और इस ठिकाने तो प्रत्यक्ष रीति से हरि-

*मूलसूत्रकारने भी "दसविहं बहुविहं पकरेइ" दश प्रकारसे तथा बहु विधसे वेयावच्च करे, ऐसे फरमाया है। इसवास्ते वेयावच्च कुछ अन्नपाणी वस्त्र पात्रादिके देने का ही नाम नहीं है, प्रत्यनीक का निवारणा भी वेयावच्च ही है।

केशीमुनिके प्रत्यनीक ब्राह्मणके पुत्रों को यक्षने मारा तिस बाबत हरिकेशीमुनिने कहा कि मेरी वेयावच्च करने वाले यक्षने किया है तो यक्षने तो ब्राह्मणके पुत्रों की हिंसा करी और मुनिने तो वेयावच्च कही; और मुनिका वचन असत्य होवे नहीं। तथा शास्त्रकार भी असत्य न लिखे। इसवास्ते अन्नपाणी उपधि प्रमुख देना ही वेयावच्च ऐसे एकांत कहते हो सो मिथ्या है। पूर्वोक्त पाठ में खुलासा पंदरां बोल हैं और पंदरां ही बोलों के साथ जोड़ने का 'अर्थे' शब्द पंदरमें बोल के अंत में है, तथापि जेठमलने चौदह बोल ठहराए हैं और "चेइयट्ठे" अर्थात् ज्ञानके अर्थे वेयावच्च करे ऐसे लिखा है सो दोनों ही मिथ्या हैं, क्योंकि ज्ञानका नाम चैत्य किसीभी शास्त्रमें या किसीभी कोष में नहीं है। तथा सूत्रों में जहां जहां ज्ञानका अधिकार है वहां वहां सर्वत्र "नाण" शब्द लिखा है परंतु "चेइय" शब्द नहीं लिखा है इसवास्ते जेठमल का किया अर्थ खोटा है, और धर्मशी नामा ढूंढकने प्रश्नव्याकरणके टब्बेमें इसी चैत्य शब्दका अर्थ साधु लिखाहै, इससे मालूम होता है कि इन मूढ़मति ढूंढकों का आपसमें भी मेल नहीं है परंतु इस में कुछ आश्चर्य नहीं, मिथ्यादृष्टियों का यही लक्षण है। और "चेइयट्ठे" तथा "निज्जरट्ठी" इन दोनों शब्दों का एक सरीखा अर्थात् ज्ञानके अर्थे और निर्जरा के अर्थे ऐसा अर्थ जेठेने लिखा है, परंतुसूत्राक्षर देखनेसें मालूम होगा कि पाठके अक्षर और लगमात्र अलग अलग और तरह के हैं, एकके अंतमें "अठ्ठे" अर्थात् 'अर्थे' है सो चतुर्थी विभक्तिके अर्थ में निपात है, तिसका अत्यंत बालके अर्थे, दुर्बल के अर्थे, ग्लानके अर्थे, यावत् जिन प्रतिमा के अर्थे ऐसा अर्थ होता है; दूसरे पदके अंतमें "अठ्ठी" अर्थात् 'अर्थी'

है सो प्रथमा विभक्ति है तिसका अर्थ "निर्जराका अर्थी" जो साधु सो वेयावच्च करे ऐसा होता है, परंतु जेठेने सत्य अर्थ छोड़के दोनों शब्दों का एक सरीखा अर्थ लिखा है इसलिये मालूम होता है कि जेठेको व्याकरणका ज्ञान बिलकुल नहीं था, तथा जैसा सूत्रपाठ है वैसा उसको नहीं दिखा है, इससे यह भी मालूम होता है कि उसके नेत्रोंके भी कुछक आवरण था ॥

श्रीठाणांगसूत्र तथा व्यवहारसूत्र प्रमुख सूत्रोंमें दश प्रकारकी वेयावच्चकही है, जिसका समावेश पूर्वोक्तपंदरह बोलोंमें हो गया है, इसवास्ते तिन दश भेदोंकी बाबत जेठेकी लिखी कुयुक्ति खोटी है ॥

प्रश्नके अंतमें जेठे निन्हवने लिखाहै कि "उपधि और अन्न पाणीसे ही वेयावच्च करनी" यह समझ जेठे ढूंढककी अकल विना की है, क्योंकि जो इन तीन भेदसे ही वेयावच्च करनी होवे तो चतुर्विध संघकी वेयावच्च करनेका भी पूर्वोक्त पाठमें कहा है, और संघमें तो श्रावक श्राविका भी शामिल हैं तो तिनकी वेयावच्च साधु किस तरह करे ? जो आहार तथा उपधिसे करे ऐसे ढूंढक कहते हैं तो क्या आप भिक्षा लाकर श्रावक श्राविकाको देवेंगे ? नहीं, क्योंकि ऐसे करना तिनका आचार नहीं है। तथा श्रावक श्राविकातो देने वाले हैं, लेना उनका आचारही नहीं है; इस-वास्ते अरे ढूंढको ! जवाब दो कि तीसरे व्रतकोआराधने के उत्साह वाले साधुने चतुर्विध संघकी वेयावच्च किस रीतिसे करनी? आखीर लिखने का यह है कि वेयावच्चके अनेक प्रकार हैं जिसकी जैसी संभवहोतैसीतिसकी वेयावच्च जाननी। इसलिये साधु जिनप्रतिमा की वेयावच्च करे सो बात संपूर्ण रीतिसे सिद्ध होतीहै। ढूंढिये इस

मूजिब नहीं मानतेहैं इससे तिनको निविड मिथ्यात्वका उदय मालूम होता है ॥ ॥ इति ॥

(२५) श्रीनंदिसूत्रमें सर्व सूत्रोंकी नोध है॥

बारह अंगके नाम।

(१) आचारांग, (२) सूयगडांग, (३) ठाणांग, (४) समवायांग, (५) भगवती, (६) ज्ञाता, (७) उपासकदशांग, (८) अंतगड, (९) अनुत्तरोववाइ, (१०) प्रश्नव्याकरण, (११) विपाक, (१२) दृष्टिवाद

(१) आवश्यकसूत्र।

(२९) उत्कालिक सूत्रके नाम।

(१) दशवैकालिक, (२) कप्पियाकप्पिय, (३) चुल्लकल्प (४) महाकल्प, (५) उववाइ, (६) रायपसेणी, (७) जीवाभिगम, (८) पन्नवणा, (९) महापन्नवणा, (१०) पमायप्पमाय, (११) नंदि, (१२) अनुयोगद्वार, (१३) देवेंद्रस्तव, (१४) तंदुलवेयालिय, (१५) चंद्रविजय (१६) सूर्यप्रज्ञप्ति, (१७) पोरुषी मंडल, (१८) मंडल प्रवेश, (१९) विद्याचारण विनिश्चय, (२०) गणिविद्या, (२१) ध्यानविभक्ति, (२२) मरणविभक्ति, (२३) आयविसोही, (२४) वीतरागश्रुत, (२५) संलेखनाश्रुत, (२६) विहारकल्प, (२७) चरणविधि, (२८) आउपच्चक्खाण, (२९) महापच्चक्खाण ॥

एवमाइ शब्दसे श्रीचउसरणसूत्र तथा श्रीभक्तपरिज्ञासूत्र प्रमुख चउदां हजारमें से कितनेक उत्कालिकसूत्र समझने ॥

(३१) कालिक सूत्रके नाम

(१) उत्तराध्ययन, (२) दशाश्रुतस्कंध, (३) कल्पसूत्र, (४) व्यवहारसूत्र (५) निशीथ, (६) महानिशीथ, (७) ऋषिभाषित, (८) जंबू-

द्वीपपन्नत्ति, (९) द्वीपसागरपन्नत्ति, (१०) चंदपन्नत्ति, (११) खुड्डियाविमाणपविभत्ति, (१२) महल्लियाविमाणपविभत्ति, (१३) अंगचूलिया, (१४) वग्गचूलिया, (१५) विवाहचूलिया,(१६)अरुणोववाइ, (१७) वरुणोववाइ, (१८) गरुडोववाइ,(१९) धरणोववाइ,(२०) वेसमणोववाइ, (२१) वेलंधरववाइ, (२२) देविंदोववाइ, (२३) उत्थान श्रुत, (२४) समुत्थानश्रुत, (२५) नागपरियावलिया, (२६) निर्यावलिया, (२७) कप्पिया, (२८) कप्पवडंसिया, (२९) पुप्फिया, (३०) पुप्फचूलिया, (३१) वन्हीदशा ॥

एवमाइ शब्दसे ज्योतिष्करंडसूत्र प्रमुख चौदहहजार में से कितनेक कालिकसूत्र समझने।

कुल ७३ के नाम लिखके एवमाइ शब्दसे आदि लेके १४००० प्रकीर्णकसूत्र कहे हैं,तिनमें से जो व्यवच्छेद होगये हैं सो तो भरत खंडमें नहीं हैं। और शेष जो हैं सो सर्व आगम नामसे कहे जाते हैं। तिनमेंसे कितनेक पाटण,खंभायत (Cambay) जेसलमेर प्रमुख नगरोंके प्राचीन भंडारोंमें ताडपत्रों ऊपर लिखे हुए विद्यमान हैं॥

जेठमल लिखता है कि "बत्तीस उपरांत सर्व सूत्र व्यवच्छेद हो गए और हालमें जो हैं सो नये बनाये हैं" उत्तर–जेठमलका यह लिखना झूठ है। यदि यह नये बनाये गये होंगे तो बत्तीससूत्र भी नये बनाये सिद्ध होंगे,क्योंकि बत्तीससूत्र वोही रहे और दूसरे नये बनाये गये इसमें कोई प्रमाण नहीं है,और जेठेने इस बाबत कोई भी प्रमाण नहीं दिया है इसवास्ते उसका लिखना मिथ्या है ॥

बत्तीस उपरांत (४५) सूत्रांतर्गत (१३) सूत्रोंमें से आठसूत्रोंके नाम पूर्वोक्त नंदिसूत्रके पाठमें हैं तथापि जेठा तिनको आचार्यके बनाये कहता है सो मिथ्या है ॥

तथा श्रीमहानिशीथसूत्र आठ आचार्योंने मिलके रचा कहता है,सो भी मिथ्या है,क्योंकि आचार्योंने एकत्र होकर यहसूत्र लिखा है परंतु नया रचा नहीं है। ४५ बिचले पांचसूत्रोंके नाम पूर्वोक्त पाठमें नहीं हैं परंतु सो आदि शब्दसे जाननेके हैं इसवास्ते इसमें कुछ भी बाधक नहीं है॥

और कितनेक सूत्र, जिनमेंसे कितनेक ढूंढिये नहीं मानते हैं और कितनेक मानते हैं तिनमें भी आचार्योंके नाम हैं, सो "सूत्र कर्त्ताके नाम हैं" ऐसे जेठमल ठहराता है, परंतु सो मिथ्या है, क्योंकि वो नाम बनाने वालेका नहीं है;जेकर किसीमें नाम होगा तो वो वीरभद्रवत् श्रीमहावीरस्वामीके शिष्यका होगा जैसे लघु निशीथमें विशाखगणिका नाम है और श्रीपन्नवणासूत्रमें श्यामाचार्यका नाम है॥

जेठमल लिखता है कि "नंदिसूत्र चौथे आरेका बना हुआ है" सो मिथ्या है,क्योंकि श्रीनंदिसूत्र तो श्रीदेवर्द्धिगणिक्षमाश्रमण का बनाया हुआ है और तिसके मूलपाठमें वज्रस्वामी, स्थूलभद्र चाणाक्यादिक पांचमें आरेमें हुए पुरुषोंके नाम हैं॥

श्रीआवश्यक तथा नंदिसूत्रमें कहा है, कि द्वादशांगी गणधर महाराजाने रची सो रचना अति कठिन मालूम होनेसे भव्य जीवों के बोध प्राप्तिके निमित्त श्रीआर्यरक्षितसूरि तथा स्कंदिलाचार्यने हाल प्रवर्त्तन हैं, इसमूजिब सुगम रचना युक्त गुंथन किया इसवास्ते कुल सूत्र द्वादशांगी के आधारसे आचार्योंने गुंथन किये हैं ऐसे समझना॥

मूढमति ढूंढिये मिथ्यात्वके उदयसे बत्तीससूत्र ही मानकर अन्य सूत्र गणधर कृत नहीं है ऐसे ठहराके तिनका निषेध करते हैं,परंतु

इसमूजिब निषेध करनेका तिनका असली सबब यह है कि अन्य सूत्रोंमें जिनप्रतिमा संबंधी ऐसे ऐसे खुलासा पाठहैं कि जिससे ढूंढक मतका जड़मूलसे निकंदन होजाता है जिसकी सिद्धिमें दृष्टांत तरीके श्रीमहाकल्पसूत्रका पाठ लिखते हैं–यतः–

से भयवं तहारूवं समणं वा माहणं वा चेइय घरे गच्छेज्जा ? हंता गोयमा ! दिणे दिणे गच्छेज्जा। से भयवं जत्थ दिणे ण ग-च्छेज्जा तओ किं पायच्छित्तं हवेज्जा ? गो-यमा! पमायं पडुच्च तहारूवं समणं वा माहणं वा जो जिणघरे न गच्छेज्जा तओ छठं अहवा दुवालसमं पायच्छित्तं हवेज्जा। से भयवं समणो वासगस्स पोसहसालाए पोसहिए पोसह बंभयारी किं जिणहरं गच्छेज्जा? हंता गोयमा ! गच्छेज्जा। से भयवं केणठेणं गच्छे-ज्जा? गोयमा! णाण दंसण चरणठयाए गच्छे-ज्जा। जे केइ पोसहसालाए पोसह बंभयारी जओ जिणहरे न गच्छेज्जा तओ पायच्छित्तं हवेज्जा? गोयमा! जहा साहू तहा भाणियव्वं छठं अहवा दुवालसमं पायच्छित्तं हवेज्जा।

अर्थ-"अथ हे भगवन् ! तथारूप श्रमण अथवा माहण तपस्वी चैत्यघर यानि जिनमंदिर जावे?" भगवंत कहते हैं "हे गौतम! रोज रोज अर्थात् हमेशां जावे" गौतमस्वामी पूछते हैं "हे भगवन् ! जिस दिन न जावे तो उस दिन क्या प्रायश्चित्त होवे ?" भगवंत कहते हैं "हे गौतम प्रमादके वशसे तथारूप साधु अथवा तपस्वी जो जिनगृहे न जावे तो छठ अर्थात् बेला दो उपवास, अथवा दुवालस अर्थात् पांच उपवास (व्रत)का प्रायश्चित्त होवे" गौतमस्वामी पूछते हैं "हे भगवन् ! श्रमणोपासक श्रावक पोषधशालामें पोषधमें रहा हुआ पोषधब्रह्मचारी क्या जिनमंदिरमें जावे ?" भगवंत कहते हैं "हां हे गौतम ! जावे" गौतमस्वामी पूछते हैं "हे भगवन् किसवास्ते जावे?" भगवंत कहते हैं "हे गौतम! ज्ञानदर्शनचारित्रार्थे जावे ?" गौतमस्वामी पूछते हैं "जोकोई पोषधशाला में रहा हुआ पोषध ब्रह्मचारी श्रावक जिनमंदिरमें न जावे तो क्या प्रायश्चित्त होवे ?" भगवंत कहते हैं "हे गौतम ! जैसे साधुको प्रायश्चित्त तैसे श्रावकको प्रायश्चित्त जानना, छट्ठ अथवा दुवालसका प्रायश्चित्त होवे" पूर्वोक्त पाठ श्रीमहाकल्पसूत्रमें है,* और महा कल्पसूत्रका नाम पूर्वोक्त नंदिसूत्रके पाठमें है। जेठे निन्हवने यह पाठ जीतकल्पसूत्रका है ऐसे लिखा है परंतु जेठेका यह लिखना मिथ्या है, क्योंकि जीतकल्पसूत्रमें ऐसा पाठ नहीं है ॥

---

* तथा तुंगीया, सावत्थी, आलंभिका प्रमुख नगरियोंके जो शंखजी, शतकजी, पुष्कलीजी, आनंद और कामदेवादिक जैनी श्रावक थे वे सर्व प्रतिदिन तीन_वक्त श्री जिनप्रतिमाकी पूजा करते थे। तथा जो जिनपूजा करे सो सम्यक्त्वी और जो न करे सो मिथ्यात्वी जानना। इत्यादि कथनभी इसी सूत्रमें है—तथाच तत्पाठः—

"तेणं कालेणं तेणं समएणं जाव तुंगीया नयरीए बहवे सम-

जेठमल लिखता है कि "श्रावक प्रमादके वशसें भगवंतको और साधुको वंदना न कर सके तो तिसका पश्चात्ताप करे परंतु श्रावकको प्रायश्चित्त न होवे" उत्तर–पोसहवाले श्रावककी क्रिया प्रायः साधु सदृश है इसवास्ते जैसे साधुको प्रायश्चित्त होवे–तैसे श्रावकको भी होवे ॥

जेठमल लिखता है कि "बृहत्कल्प, व्यवहार, निशीथ, तथा आचारांगमें प्रायश्चित्तके अधिकारमें मंदिर न जानेका प्रायश्चित्त नहीं कहा है" उत्तर–कोई अधिकार एकसूत्रमें होता है, और कोई अधिकार अन्य सूत्रमें होताहै, सर्व अधिकार एकही सूत्रमेंनहीं होते हैं। जैसे निशीथ, महानिशीथ, बृहत्कल्प, व्यवहार, जीतकल्प प्रमुख सूत्रोंमें प्रायश्चित्तका अधिकार है, तैसे श्रीमहाकल्पसूत्रमें भी प्रायश्चित्तका अधिकार है। सर्वसूत्रों में जुदा जुदा अधिकार

णोवासगा परिवसंति संखे सयए सियप्पवाले रिसीदत्ते दमगे पुक्खली निवद्धे सुप्पइट्ठे भाणुदत्ते सोमिले नरवम्मे आणंद कामदेवाइणो अन्नत्थगामे परिवसति अड्ढा दित्ता विच्छिन्न विपुल वाहणा जाव लद्धट्ठा गहियट्ठा चाउद्दसट्ठमुदिट्ठ पुण्णमासिणीसु पडिपुण्णं पोसह पालेमाणा निग्गंथाण निग्गंथिणय फासु एसणिज्जेणं असणादि ४ पडिलाभे माणा चेइयालएसु तिसंझं चंदणपुप्फधूववत्थाइहिं अच्चणं कुणमाणा जाव जिणहरे विहरंति से तेणट्ठेणं गोयमा जो जिण पडिमं पूएइ सो नरो सम्मदिट्ठि जाणियव्वो जो जिणपडिमं न पूएइ सो मिच्छादिट्ठि जाणियव्वो मिच्छादिट्ठिस्स नाणं न हवइ चरणं न हवइ मुक्खं न हवइ सम्मदिट्ठिस्स नाणं चरणं मुक्खं च हवइ से तेणट्ठेणं गोयमा सम्मदिट्ठि सड्ढेहिं जिणपडिमाणं सुगंध पुप्फचंदण विलेवणेहिं पया कायव्वा" ॥ इति

है, इसवास्ते मंदिर न जानेके प्रायश्चित्तका अधिकार श्रीमहा कल्पसूत्रमें है और अन्यमें नहीं है इतनेमात्रसे जेठेकी करी कुयुक्ति कुछ सच्ची नहीं हो सक्ती है । श्रीहरिभद्रसूरि जोकि जिनशासन को दीपानेवाले महाधुरंधर पंडित १४४४ ग्रंथके कर्त्ता थे तिनकी जेठमलने व्यर्थ निंद्याकरी है सो जेठमलकी मूर्खताकी निशानी है॥

अभव्यकुलकमें अभव्यजीव जिस जिस ठिकाने पैदा नहीं होसक्ता है सो दिखाया है इसबाबत जेठमल लिखता है कि "भव्य अभव्य सर्व जीव कुल ठिकाने पैदा होचुके ऐसे सूत्रमें कहा है इस वास्ते अभव्यकुलक सूत्रोंसे विरुद्ध है" जेठे ढूंढकका यह लिखना महामिथ्यादृष्टि पणेका सूचकहै यद्यपि शास्त्रोंमें ऐसाथकनहै कि-

न सा जाइ न सा जोणी नतं ठाणं नतं कुलं।
न जाया न मुया जत्थ सव्वे जीवा अणंतसो १

परंतु यह सामान्य वचन है । विचार करोकि मरुदेवीमाताने कितने दंडक भोगे हैं? सो तो निगोदमेंसे निकलके प्रत्येकमें आकर मनुष्य जन्म पाकर मोक्षमें चली गई हैं, और शास्त्रकारतो सर्व जीव सर्व ठिकाणे सर्व जातिपणे अनंतीवार उत्पन्न हुए कहते हैं। जेकर जेठ मल ढूंढक इस पाठको एकांत मानता है तो कोई भी जीव सर्वार्थ सिद्ध विमान तक सर्वजाति सर्वकुल भोगे विना मोक्ष में नहीं जाना चाहिये और सूत्रोंमें तो ऐसे बहुत जीवोंका अधिकार है जो कि अनुत्तरविमानमें गये विना सिद्धपदको प्राप्त हुए है मतलब यह किढूंढक सरीखे अज्ञानी जीव विना गुरुगमके सूत्रकारकी शैलिको कैसे जानें ? सूत्रकी शैलि और अपेक्षा समझनी सो तो गुरुगममें ही रही हुई है,इसवास्ते अभव्यकुलक सूत्रके साथ मुकाबला करने

में कुछभी विरोध नहीं है और इसीवास्ते यह मान्य करने योग्य है॥* जो जो ग्रंथ अद्यापि पर्यन्त पूर्व शास्त्रानुसार बने हुए हैं सो सत्य हैं, क्योंकि जैनमतके प्रमाणिक आचार्य्योंने कोई भी ग्रंथ पूर्व ग्रंथों की छाया विना नहीं बनाया है, इसवास्ते जिनको पूर्वाचार्योंके वचन में शंका होवे उन्होंने वर्त्तमान समयके जैनमुनियों को पूछ लेना वोह तिसका यथामति निराकरण करदेवेंगे, क्योंकि जो पंडित और गुरुगमके जानकार हैं वोह ही सूत्रकी शैलिको और अपेक्षाको ठीक ठीक समझते हैं ॥

जेठमल लिखता है कि "जो किसी वक्त भी उपयोग न चूका होवे तिसके किये शास्त्र प्रमाण हैं" जेठेके इस कथन मूजिब तो गणधर महाराजाके वचन भी सत्य नहीं ठहरे ! क्योंकि जब श्रीगौतमस्वामी आनंद श्रावक के आगे उपयोग चूके तो सुधर्मा स्वामी क्यों नहीं चूके होवेंगे ?

---

* यदि ढूंढिये अभव्यकुलकका अनादर करके "नसाजाइ" इत्यादि पाठको ही मंजूर करते हैं तो उनके प्रति हम पूछते हैं कि आप बताइए कि-पांच अनुत्तरविमानमें देवता तीर्थंकर, चक्रवर्त्ती, वासुदेव, प्रतिवासुदेव बलदेव, नारद, केवलज्ञानी और गणधर के हाथसे दीक्षा तीर्थंकर का वार्षिक दान, लोकान्तिक देवता, इत्यादि अवस्थाओं की प्राप्ति अभव्य के जीवको होती है ? क्योंकि तुम तो भव्य अभव्य सर्व को स्थान जाति कुल योनि में उत्पन्न हुए मानते हो तो तुम्हारे माने मूजिब तो पूर्वोक्त सर्व अवस्था अभव्यजीव को होनी चाहिये परन्तु होती कभी भी नहीं हैं, और यही वर्णन अभव्य कुलकमें है, तथा अभव्यकुलक की वर्णन करी कई बातें ढूंढिये लोक मानते भी हैं तो भी अभव्यकुलक का अनादर करते हैं जिसका असली मतलब यह है कि अभव्यकुलक में लिखा है कि तीर्थंकरकी प्रतिमा की पूजादि सामग्रीमें जो पृथिवी पाणी धूप चंदन पुष्पादि काममाते हैं उनमें भी अभव्य के जीव उत्पन्न नहीं होसक्ते हैं अर्थात् जिस चीजमें अभव्यका जीव होगा वो चीज जिनप्रतिमाके निमित्त या जिनप्रतिमा की पूजाके निमित्त काम में न आवेगी, सो यही पाठ इनको दुःखदाई होरहा है उल्लू को सूर्यवत् ।

तथा जेठमलके लिखेमूजिब जब देवर्द्धिगणिक्षमाश्रमणके लिखे शास्त्रोंकी प्रतीति नहीं करनी चाहिये ऐसे सिद्ध होता है तो फिर जेठे निन्हव सरीखे मूर्ख निरक्षर मुहबंधेके कहे की प्रतीति कैसे करनी चाहिये? इसवास्ते जेठमल का लिखना बेअकल, निर्विवेकी, तो मंजूर करलेवेंगे, परंतु बुद्धिमान विवेकी और सुज्ञ पुरुषतो कदापि मंजूर नहीं करेंगे ॥

जेठमल लिखता है कि "पूर्वधर धर्मघोषमुनि, अवधिज्ञानी सुमंगल साधु, चारज्ञानी केशीकुमार तथा गौतमस्वामी प्रमुख श्रुत केवली भी भूले हैं" उत्तर–जिन्होंने तीर्थंकर की आज्ञा से काम करा जेठा उनकी भी जब भूल बताता है तो तीर्थंकर केवली भी भूल गये होंगे ऐसा सिद्ध होगा ! क्योंकि मृगालोढीयेको देखने वास्ते गौतमस्वामीने भगवंतसे आज्ञा मांगी और भगवंतने आज्ञा दी उस मूजिब करनेमें जेठमल गौतमस्वामी की भूल हुई कहता है, तो सारे जगत् में मूढ़ और मिथ्यादृष्टि, जेठाही एक सत्यवादी बन गया मालूम होताहै; परंतु तिसका लेख देखने सेही सो महादुर्भवी बहुलसंसारी और असत्यवादी था ऐसे सिद्ध होताहै, क्योंकि अपने कुमत को स्थापन करने वास्ते उसने तीर्थंकर तथा गणधर महाराजाको भी भूलगए लिखाहै इसवास्ते ऐसे मिथ्यादृष्टि का एक भी वचन सत्य मानना सो नरकगति का कारण है ॥

श्रीदशवैकालिक सूत्रकी गाथा लिखके तिसका जो भावार्थ जेठमलने लिखा है सो मिथ्या है, क्योंकि उस गाथा में तो ऐसे कहा है कि जेकर दृष्टिवाद का पाठी भी कोई पाठ भूलजावे तो अन्य साधु तिसकी हांसी न करे, यह उपदेश वचन है, परंतु इससे उस गाथा का यह भावार्थ नहीं समझना कि दृष्टिवाद का पाठी

चूकजाता है, जेठमल को इसका सत्यार्थ भासन नहीं हुआ है, विना पाठके टीका है इस बाबत जेठमलने जो कुयुक्ति लिखीहै सो खोटी है, क्योंकि टीका में सूत्रपाठ की सूचनाका ही अधिकार है अरिहंतने प्रथम अर्थ प्ररूप्या उस ऊपर से गणधरने सूत्र रचे,तिनमें गुप्तपणे रहे आशयको जाननेवाले पूर्वाचार्य्य जो महाबुद्धिमान् थे उन्होंने उसमें से कितनाक आशय भव्यजीवोंके उपकारके वास्ते पंचांगी करके प्रकट कर दिखलाया है; परंतु कुंभकार जवाहर की कीमत क्या जाने,जवाहर की कीमत तो जौहरी ही जाने, मूलपाठ के अक्षरार्थ से पाठकी सूचना का अर्थ अनंत गुण है और टीका कारोंने जो अर्थ करा है सो निर्युक्ति, चूर्णि, भाष्य और गुरुमहाराजा के बतलाए अर्थानुसार लिखा है और प्राचीन टीका के अनुसारही है इसवास्ते सर्व सत्य है, और चूर्णि, भाष्य तथा निर्युक्ति चौदह पूर्वी और दशपूर्वीयोंकी करी हुई हैं, इसवास्ते सर्व मानने योग्य है; इसबाबत प्रथम प्रश्नोत्तरमें दृष्टांत पूर्वक सविस्तर लिखा गयाहै।

जेठमल निर्युक्ति, भाष्य,चूर्णि,टीका,ग्रंथ तथा प्रकरणादिको सूत्र विरुद्ध ठहराता है सो उसकी मूढताकी निशानी है इस बाबत उसने ८५ पचासी प्रश्न लिखे हैं तिनके उत्तर क्रमसे लिखते हैं॥

(१) "श्रीठाणांग सूत्रमें सनतकुमार चक्री अंतक्रिया करके मोक्ष गया ऐसे लिखाहै,और तिसकी टीकामें तीसरेदेवलोकगया, ऐसे लिखा है" उत्तर–श्रीठाणांग सूत्रमें सनतकुमार मोक्ष गया नहींकहाहै परंतु उसमें उसका दृष्टांत दीया हैकि जीव भारी कर्मके उदयसे परिसह वेदना भोग के दीर्घायु पालके सिद्ध होवे,जैसे सनत कुमार,यहां कर्म परिसह वेदनाऔर आयुके दृष्टांतमें सनतकुमारका ग्रहण कियाहै,क्योंकि दृष्टांत एक देशी भी होता है,इसवास्ते सनत

कुमार तीसरे देवलोक गया, टीकाकारका कहना सत्य है ॥

(२) "भगवती सूत्रमें पांचसौ धनुष्यसे अधिक अवगाहना वाला सिद्ध न होवे ऐसा कहा है और आवश्यक निर्युक्ति में मरुदेवी ५२५ सवापांच सौ धनुष्य की अवगाहना वाली सिद्ध हुई ऐसे कहा है" उत्तर-यह जेठेका लिखना मिथ्या है, क्योंकि आवश्यक निर्युक्तमें मरुदेवीकी सवापांचसौ धनुष्यकी अवगाहना नहींकहीहै ॥

(३) "समवायांग सूत्रमें ऋषभदेवका तथा बाहुबलिका एक सरीखा आयुष्य कहा है, औरआवश्यक निर्युक्तिमें अष्टापद पर्वत ऊपर श्रीऋषभदेवकेसाथ एकही समयमें बाहुबलि भी सिद्ध हुआ ऐसेकहा है" उत्तर-बाहुबलिका आयुष्य ६ लाख पूर्व टूट गया। इस आयुका टूटना सो अच्छेरा है। पंचवस्तु शास्त्रमेंलिखाहै किदश अच्छेरे तो उपलक्षण मात्र हैं, परंतु अच्छेरे बहुतहैं *

*यदि ढूंढिये बाहुबलिका श्रीऋषभदेवके साथ एकही समयमें सिद्ध होनानहींमानते हैं तो उनको चाहिये कि अपने माने बत्तीस सूत्रोंमें से दिखा देवें कि श्रीबाहुबलिने अमुकसमयदीक्षा ली और अमुक वक्त केवलज्ञान हुआ औरअमुक वक्त सिद्धहुआ तथा श्रीठाणांग सूत्रकेदशमें ठाणेमें दश अच्छेरे लिखेहैं उनका स्वरूप, तथा किसकिसतीर्थंकर के तीर्थ में कौनसा२ अच्छेरा हुआ इसका वर्णन, विना निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि, टीकाऔर प्रकरणादि ग्रंथोंके अपने माने बतीस शास्त्रोंके मूल पाठमें दिखानाचाहिये, जबतकइनका पूरा २ स्वरूप नहीं दिखाओगे वहां तक तुमारी कोई भी कुयुक्ति काम न आवेगी दश अच्छेरों का पाठ यह है ॥

"दस अच्छेरगा पण्णत्ता तंजहा ॥ [1] उवसग्ग [2] गब्भहरणं इत्थी [3] तीत्थं [4] अभाविया परिसा। [5] कण्हस्स अवरकंका [6] उत्तरणं चंदसूराणं॥१॥
[7] हरिवंसकुलुप्पत्ति [8] चमरुप्पाओय [9] अट्ठसयसिद्धा । [10] अस्संजएसु पूया दसवि अणंतेण कालेणं ॥ २ ॥"

करके करनी जिससे बहुते फलकी प्राप्ति होवे जैसे श्रीठाणांगसूत्रके दशमें ठाणेमें कहा है कि दश नक्षत्रोंमें ज्ञान पढ़े तो वृद्धि होवे*

"दस णक्खत्ता णाणस्स वुड्ढीकरा पण्णत्ता"

यहांभी ऐसेही समझना। इसवास्ते जेठमलकी करी कुयुक्ति खोटी है। जिनवचन स्याद्वाद है एकांत नहीं जो एकांतमाने उनको शास्त्रकारने मिथ्यात्वी कहा है॥

(३२-३३) "श्रीजंबूद्वीप पन्नत्तिमें पांचमे आरे ६ संघयण और ६ संस्थान कहे और श्रीतंदुलवियालिय पयन्नेमें सांप्रतकाले सेवार्त्त संघयण और हुंडक संस्थान कहा है" उत्तर-श्रीजंबूद्वीप पन्नत्ति में पांचमें आरे मुक्ति कही है, तथापि सांप्रतकाले जैसे किसी को केवलज्ञान नहीं होता है, तैसे पांचमें आरेके प्रारंभमें ६ संघयण और ६ संस्थान थे परंतु हाल एक छेवट्ठा संघयण और हुंडक संस्थान है। जेकर ६ही संघयण और ६ही संस्थान हाल हैं ऐसे कहोगे तो जंबूद्वीपपन्नत्तिमें कहे मूजिब हाल मुक्तिभी प्राप्त होनी चाहिये, जेकर इसमें अपेक्षा मानोगे तो अन्यबातोंमें अपेक्षा नहीं मानते हो और मिथ्या प्ररूपणा करते हो तिसका क्या कारण ?॥

(३४) "श्रीभगवतीसूत्रमें आराधनाके अधिकारमें उत्कृष्टे पंदरह भव कहे और चंद्रविजयपयन्नेमें तीन भव कहे" उत्तर-चंद्रविजयपयन्नेमें जो आराधना लिखी है तिसके तो तीन ही भव हैं और जो पंदरे भव हैं सो अन्य आराधनाके हैं॥

(३५) "सूत्रमें जीव चक्रवर्त्तीपणा उत्कृष्टा दो वक्त पाता है,

* श्री समवायाग सूत्रमें भी यही कथन है॥

ऐसे कहा और श्रीमहापच्चक्खाण पयन्नेमें अनंतीवार चक्रवर्त्ती होवे ऐसे कहा" उत्तर–श्रीमहापच्चक्खाण पयन्नेमें तो ऐसे कहा है कि जीवने इंद्रपणा पाया, चक्रवर्त्तीपणा पाया, और उत्तम भोग अनंतवार पाये तोभी जीव तृप्त नहीं हुआ, परंतु तिस पाठमें चक्रवर्त्तीपणा अनंतवार पाया ऐसे नहीं कहा है; इससे मालूम होता है कि जेठमलको शास्त्रार्थका बोध ही नहीं था ॥

(३६) "श्रीभगवतीसूत्रमें कहा है कि केवलीको हंसना, रमना, सोना, नाचना इत्यादि मोहनीकर्मका उदय न होवे और प्रकरणमें कपिल केवलीने चोरोंके आगे नाटक किया ऐसे कहा" उत्तर–कपिल केवलीने ध्रुपद छंदप्रमुख कहके चोर प्रतिबोधे और तालसंयुक्त छंद कहे तिसका नाम नाटक है, परंतु कपिलकेवली नाचे नहीं हैं ॥

(३७) "श्रीदशवैकालिकासूत्रमें साधुको वेश्याके पाड़े (महल्ले) जाना निषेध किया और प्रकरणमें स्थूलभद्रने वेश्याके घरमें चौमासा करा ऐसे कहा" उत्तर–स्थूलभद्रके गुरु चौदहपूर्वी थे इसवास्ते स्थूलभद्र आगमव्यवहारी गुरुकी आज्ञा लेकर वेश्याके घरमें चौमासा रहे थे, और दशवैकालिकसूत्र तो सूत्रव्यवहारियोंके वास्ते है, इसवास्ते पूर्वोक्तबातमें कोई भी विरोध नहीं है* ॥

(३८) "श्रीआचारांगसूत्रमें महावीरस्वामी 'संहरिज्जमाणे जाणइ' ऐसे कहा और श्रीकल्पसूत्रमें 'न जाणइ' ऐसे कहा" उत्तर जेठामूढ़मति कल्पसूत्रका विरोध बताता है परंतु श्रीकल्पसूत्रतो श्री

---

*इससे यहभी मालूम होता है कि ढूंढिये स्थूलभद्र का अधिकार मानते नहीं होवेंगे ! वेशक इनके माने बत्तीस शास्त्रों में श्रीस्थूलभद्रका वर्णनही नहीं है तो फिर यह भोले लोकों स्थूलभद्रका वर्णन शीलके ऊपर सुनार कर क्यों धोखेमें डालते हैं ? तथा झूठा बकवाद करके अपना गला क्यों सूकाते हैं ?

दशाश्रुतस्कंधका आठमा अध्ययन है* इसवास्ते जकर दशाश्रुतस्कंधको ढूंढिये मानते हैं तो कल्पसूत्रभी उनको मानना चाहिये, तथापि कल्पसूत्रमें कहे वचनकी सत्यता वास्ते मालूम हो कि कल्पसूत्रमें प्रभु न जाने ऐसे कहा है सो हरिणगमेषी देवताकी चतुराई मालूम करने वास्ते और प्रभुको किसी प्रकारकी बाधा पीड़ा नहीं हुई इसवास्ते कहा है; जैसे किसी आदमीके पगमें कांटा लगा होवे उसको कोई निपुण पुरुष चतुराईसे निकाल देवे तब जिसको कांटा लगा था वो कहे कि भाई! तुमने मेरे पैरमें से ऐसे कांटा निकाला जोकि मुझको खबरभी न हुई। ऐसे टीकाकारोंने खुलासा किया है तोभी बेअकल ढूंढिये नहीं समझते हैं सो उनकी भूल है॥

(३९) "सूत्रमें मांसका आहार त्यागना कहा है और भगवती की टीकामें मांस अर्थ करते हो" उत्तर–श्रीभगतीसूत्रकी टीकामेंजो अर्थ करा है सो मांसका नहीं है, परंतु कदापि जेठा अभक्ष्य वस्तु खाता होवे और इसवास्ते ऐसे लिखा होवे तो बन सकता है, क्योंकि जैनमतके तो किसी भी शास्त्रमें मांस खानेकी आज्ञा नहीं है॥

(४०) "श्रीआचारांगसूत्रमें "मंसखलंवा और मच्छखलंवा" इस शब्दका 'मांस' अर्थ करते हो" उत्तर–जैनमतके साधु किसी भी जगह मांस भक्षण करनेका अर्थ नहीं करते हैं, तथापि जेठेने इसमूजिब लिखा है सो उसने अपनी मतिकल्पनासे लिखा है ऐसे मालूम होता है†

---

*श्रीठाणागसूत्रके दशमे ठाणेमें दशाश्रुतस्कंधके दश अध्ययन कहे हैं तिनमें पज्जोसवणाकप्पे अर्थात् कल्पसूत्रका नाम लिखा है तथापि ढूंढिये नहीं मानते हैं जिस का कारण यहीहै कि कल्पसूत्रमें पूजा वगैरहका वर्णन आता है॥

† ढूंढियो! तुम टीकाको मानते नहीं हो तो श्रीभगवती तथा आचारांगसूत्रके इन पाठोंका अर्थ कैसे करते हो? क्योंकि तुमतो मूल अक्षरमात्रको ही मानते हो॥

(४१) "सूत्रमें जैसे मांसका निषेध है तैसे मदिराकाभी निषेध है और श्रीज्ञातासूत्रमें शेलकराजऋषिने मद्यपान किया ऐसे कहते हो" उत्तर–जैनमतके मुनि पूर्वोक्त अर्थ करते हैं सो सत्यही है, क्योंकि शेलकराजर्षिके तीन वक्त मद्यपान करनेका अधिकार सूत्र पाठमें है तो तिस अर्थमेंकुछभी बाधक नहीं है क्योंकि सूत्रकारनेभी उसवक्तशेलकराजर्षिको पासथ्था,उसन्ना और संसक्त कहा है,इस वास्ते सच्चे अर्थको झूठा अर्थ कहना सो मिथ्यात्वीका लक्षण है ॥

(४२) "श्रीभगवतीसूत्रमें कहा कि मनुष्यका जन्म एकसाथ एकयोनिसेउत्कृष्टा पृथक्त्त्व जीवका होवे और प्रकरणमें सगर चक्रवर्त्तीके साठहजार पुत्र एकसाथ जन्मे कहे हैं" उत्तर–श्रीभगवतीसूत्रमें जो कथन है सो स्वभाविक है सगरचक्रवर्त्ती के पुत्र जो एकसाथ जन्मे हैं सो देवकारणसे जन्मे हैं ॥

(४३) "सूत्रमें कहा है कि शाश्वती पृथिवीका दल उतरे नहीं और प्रकरणमें कहा कि सगरचक्रवर्त्तीकेपुत्रोंने शाश्वतादल तोडा" उत्तर–सगरचक्रवर्त्तीके पुत्र श्रीअष्टापद पर्वतोपरि यात्रा निमित्ते गये थे, उन्होंने तीर्थरक्षा निमित्ते चारों तर्फ खाई खोदने वास्ते विचार करा, इससे तिनके पिता सगरचक्रवर्त्ती के दिये दंडरत्नसे खाई खोदी और शाश्वता दल तोडा; परंतु दंडरत्नके; अधिष्टायक एक हजार देवते हैं । और देवशक्ति अगाध है इसवास्ते प्रकरणमें कही बात सत्य है ॥

(४४) "सूत्रमें तीर्थंकरकी तेतीस आशातना टालनी कही और प्रकरणमें जिनप्रतिमाकी चौरासी आशातना कही ह" उत्तर–तीर्थंकरकी तेतीस आशातना जैनमतके किसीभी शास्त्रमें नहीं

कही हैं, जैनशास्त्रोंमें तो तीर्थंकरकी चौरासी आशातना कही है। और उसी मूजिब जिनप्रतिमा की चौरासी आशातना है ॥

(९५) "उपवास (व्रत) में पानी विना अन्य द्रव्यके खानेका निषेधहे और प्रकरणमें अणाहार वस्तु खानी कही है।" उत्तर-जेठमल आहार अणाहारके स्वरूपका जानकार मालूम नहीं होता है क्योंकि व्रतमें तो आहारका त्याग है, अणाहार का नहीं तथा क्या क्या वस्तु अणाहार है, किस रीति से और किस कारण से वर्तनी चाहिये, इसकीभी जेठमल को खबर नहीं थी ऐसे मालूम होता है ढूंढिये व्रतमें पानी विना अन्य द्रव्यके खानेकी मनाई समझते हैं तो कितनेक ढूंढिये साधु तपस्या नाम धरायके अधरिडका तथा गोहड़ी मठे सरीखी छास (लस्सी)प्रमुख अशनाहारका भक्षण करते हैं सो किसशास्त्रानुसार?

(९६) "सिद्धांतमें भगवंतको "सयंसंबुद्धाणं" कहा और कल्पसूत्रमें पाठशालमें पढ़ने वास्ते भेजे ऐसे कहाहै" उत्तर-भगवंत तो "सयंसंबुद्धाणं"अर्थात् स्वयंबुद्ध ही हैं,वो किसीके पास पढ़े नहीं हैं, परंतु प्रभुके माता पिताने मोह करके पाठाशालामें भेजे तो वहांभी उलटे पाठशालाके उस्तादके संशय मिटाके उसको पढ़ा आए हैं ऐसे शस्त्रोंमें खुलासा कथन है तथापि जेठमलने ऐसे खोटे विरोध लिखके अपनी मूर्खता जाहिर करीहै॥

(९७)"सूत्रमें हाडकी असझाई कहीहै और प्रकरणमें हाडके स्थापनाचार्य स्थापने कहे" उत्तर-असझाई पंचेंद्रीके हाडकी है अन्यकी नहीं,जैसे शंख हाडहै तोभी वाजिंत्रोंमें मुख्य गिना जाताहै, और सूत्रमें बहुत जगह यह बात है,तथा जेकर ढूंढिये सर्व हाडकी

असझाइ गिनते हैं तो उनकी श्राविका हाथमें चूड़ा पहिरके ढूंढ़िये साधुओंके पास कथा वार्त्ता सुननेको आती हैं सो वो चूड़ा भी हाथी दांत हाथीके हाड़का ही होता है इसवास्ते ढूंढक साधुको चाहिये कि अपने ढूंढक श्रावकोंकी औरतोंको हाथमें से चूड़ा उतारे बादही अपने पास आने देवें*!

(४८)"श्रीपन्नवणाजीमें आठसौ योजनकी पोलमें वाणव्यंतर रहते हैं ऐसे कहा और प्रकरणमें अस्सी(८०)योजनकी पोल अन्य कही" उत्तर-श्रीपन्नवणासूत्रमें समुच्चय व्यंतरका स्थान कहा है और ग्रंथोंमें विशेश खुलासा करा है॥

(४९) "जैनमार्गी जीव नरकमें जानेके नामसे भी डरता है, ऐसे सूत्रमें कहा है,और प्रकरणमें कोणिक राजाने सातमी नरकमें जाने वास्ते महापापके कार्य किये ऐसे कहा"उत्तर-जैनमार्गी जीव नरकमें जानेके नामसे भी डरता है सो बात सामान्य है एकांतनहीं और कोणिकके प्रश्न करनेसे भगवंतने तिसको छट्ठी नरकमें जावेगा ऐसे कहा तब छट्ठी नरकमें तो चक्रवर्त्तीका स्त्रीरत्न जाता है ऐसे समझके छट्ठी से सातमीमें जाना अपने मनमें अच्छा मानके तिस

---

* यह हास्यरस संयुक्त लेख गुजरात काठीयावाड़ मारवाडादि देशोंके ढूंढियों वास्ते है, क्योंकि उस देशमें रंडी विधवा के सिवाय कोई भी औरत कबीभी हाथ चूडे से खाली नहीं रखती है, कितनाही सोग होवे परंतु सोहागका चूडा तो जरूर ही हाथमें रहता है, औरतों के हाथसे चूडा तो पतिके परलोकगमें सधाये बादही उतरता है तो ढूंढिये साधुको सोहागन औरतोंको अपने व्याख्यानादिमें कबीभी नहीं आने देना चाहिये! और पजाबदेशकी औरतोंके भी नाक कान वगैरहके कितनेही गहने हाड़के होते हैं, ढूंढिय श्रावक श्राविकायोंके कोट कमीज फतुइया वगैरह को गुंदा भी प्रायः हाडके ही लगे हुए होते हैं, इसवास्ते उनको भी पास नहीं बैठने देना चाहिये! वाहरे भाई ढूंढ़ियो!! सत्य है। विनागुरुगमके यथार्थ बोध कहां से होवे?

ने बहुत आरंभके कार्य करे हैं। तथा ढूंढिये भी जैनमार्गी नाम धराके अरिहंतके कहे वचनों को उत्थापते हैं, जिन प्रतिमाको निंदते हैं, सूत्रविराधते हैं; भगवंतने तो एक वचनके भी उत्थापक को अनंत संसारी कहा है, यह बात ढूढिये जानते हैं तथापि पूर्वोक्त कार्य करते हैं और नरकमें जानेसे नहीं डरते हैं,निगोदमें जाने से भी नहीं डरते हैं,क्योंकि शास्त्रानुसार देखनेसे मालूम होता है कि इनकी प्रायः नरक निगोदके सिवाय अन्यगति नहीं है ॥

(५०) "कूर्मापुत्र केवलज्ञान पाने पीछे ६ महीने घरमें रहे कहा है" उत्तर–जो गृहस्थावासमें किसी जीवको केवलज्ञान होवे तो उसको देवता साधुका भेष देते हैं और उसके पीछे वो विचरते तथा उपदेश देते हैं। परंतु कुर्मापुत्रको ६ महीने तक देवताने साधुका भेष नहीं दिया और केवलज्ञानी जैसे ज्ञानमें देखे तैसे करे परंतु इस बातसे जेठमलके पेटमें क्यों शूल हुआ ? सो कुछ समझमें नहीं आता है ॥

(५१) "सूत्रमें सर्वदानमें साधुको दान देना उत्तम कहा है और प्रकरणमें विजयसेठ तथा विजयासेठानी को जीमावने से ८४००० साधुको दान दिये जितना फल कहा" उत्तर–विजयसेठ और विजयासेठानी गृहस्थावासमें थे, उनकी युवा अवस्था थी, तत्कालका विवाह हुआ हुआ था, और काम भोग तो उन्होंने दृष्टि से भी देखे नहीं थे ऐसे दंपतीने मन वचन काया त्रिकरण शुद्धिसे एक शय्यामें शयन करके फेरभी अखंड धारासे शील (ब्रह्मचर्य) व्रत पालन किया है,इसवास्ते शीलकी महिमा निमित्त पूर्वोक्त प्रकार कथन करा है। और उनकी तरह शील पालना सो अति दुष्कर कृत्य है ॥

(५२) "भरतेश्वरने ऋषभदेव और ९९ भाइयोंके मिलाकर सौ स्थूभ कराये ऐसे प्रकरणमें कहा है और सूत्रमें यह बात नहीं है" उत्तर–भरतेश्वरके स्थूभ करानेका अधिकार श्री आवश्यक सूत्रमें है यतः–

थूभसय भाउयाणं चउव्विसं चेव जिणघरे कासी। सव्वजिणाणं पढिमा वण्णपमाणेहिं नियएहिं ॥ ८९ ॥

और इसी मूजिब श्रीशत्रुंजयमहात्म्यमें भी कथन है *

(५३) "पांडवोंने श्रीशत्रुंजय ऊपर संथारा करा ऐसे सूत्रमें कहा है परंतु पांडवोंने उद्धार कराया यह बात सूत्रमें नहीं है" उत्तर–सूत्रमें पांडवोंने संथारा करा यह अधिकार है और उद्धार कराया यह नहीं है इससे यह समझना कि इतनी बात सूत्रकारने कमती वर्णन करी है परंतु उन्होंने उद्धार नहीं कराया ऐसे सूत्रकारने नहीं कहा है इसवास्ते उन्होंने उद्धार कराया यह वर्णन श्रीशत्रुंजयमहात्म्यादि ग्रंथोंमें कथन करा है सो सत्य ही है॥

(५४) "पंचमी छोड़के चौथको संवत्सरी करते हो" उत्तर–हम जो चौथकी संवत्सरी करते हैं सो पूर्वाचार्योंकी तथा युगप्रधान की परंपरायसे करते हैं, श्रीनिशीथचूर्णिमें चौथकी संवत्सरी करनी कहीहै। और पंचमीकी संवत्सरी करनेका कथन सूत्रमेंकिसी जगह

---

* जेकर ढूंढिये कहें कि यह निर्युक्ति आदिका पाठ है, हम नहीं मंजूर करते हैं तो उन देवानांप्रियोंको हम यह पूछते हैं कि तुमारे माने सूत्रोंमें तो भरतेश्वरका संपूर्ण वर्णन भी नहीं है तो तुम कैसे कह सकते हो कि भरतेश्वरके स्थूभ करायेका अधिकार सूत्रमें नहीं है?

भी नहीं है;सूत्रमें तो आषाढ चौमासेके आरंभसे एक महीना और वीस दिन संवत्सरी करनी, और एकमहीना वीसदिनके अंदर संवत्सरी पडिक्कमनी कल्पती है परंतु उपरांत नहीं कल्पती है,अंदर पडिक्कमनेवाले आराधक हैं, उपरांत पडिक्कमनेवाले विराधक हैं;ऐसे कहा है तो विचार करो कि जैनपंचांग व्यवच्छेद हुए हैं जिससे पंचमीके सायंकालको संवत्सरी प्रतिक्रमण करने समय पंचमी है कि छठ होगई है तिसकी यथास्थित खबर नहीं पडती है,और जो छठमें प्रतिक्रमण करीये तो पूर्वोक्त जिनाज्ञाका लोप होता है इस-वास्ते उस कार्यमें बाधकका संभव है। परंतु चोथकी सायं को प्रति क्रमणके समय पंचमी हो जावे तो किसी प्रकारका भी बाधक नहीं है। इसवास्ते पूर्वाचार्योंने पूर्वोक्त चोथकी संवत्सरी करनेकी शुद्ध रीति प्रवर्त्तन करी है सो सत्य ही है। परंतु ढूंढिये जो चोथके दिन संध्याको पंचमी लगती होवे तो उसी दिन अर्थात् चौथको संवत्सरी करते हैं सो न तो किसी सूत्रके पाठसे करते हैं और न युगप्रधान की आज्ञासे करते हैं किंतु केवल स्वमतिकल्पनासे करते हैं ॥

(५५) "सूत्रमें चौवीसही तीर्थंकर वंदनीक कहे हैं और विवेक विलासमें कहा है कि घर देहरेमें २१ इकीस तीर्थंकरकी प्रतिमा स्थापनी" उत्तर–जैनधर्मीको तो चौवीसही तीर्थंकर एक सरीखे हैं, और चौवीसही तीर्थंकरोंको वंदन पूजन करनेसे यावत् मोक्षफलकी प्राप्ति होती है। परंतु घर देहरेमें २१ तीर्थंकरकी प्रतिमा स्थापनी ऐसे जो विवेकविलासग्रंथमें कहा है सो अपेक्षा वचन है,जैसे सर्व शास्त्र एक सरीखे हैं तोभी कितनेक प्रथम पहरमें ही पढे जाते हैं, दूसरे पहरमें नहीं। तैसे यह भी समझना। तथा घरदेहरा और बड़ा मंदिर कैसा करना, कितने प्रमाणके ऊंचे जिनबिंब स्थापन करने,

कैसे वर्णके स्थापने, किस रीतिसे प्रतिष्ठा करनी, किस किस तीर्थंकरकी प्रतिमा स्थापन करनी इत्यादि जो अधिकार है सो जो जिनाज्ञामें वर्त्तते हैं तथा जिनप्रतिमाके गुणग्राहक हैं उनके समझने का है, परंतु ढूंढको सरीखे मिथ्यादृष्टि, जिनाज्ञासे पराङ्मुख और श्रीजिनप्रतिमाके निंदकोंके समझनेका नहीं है।

(५६) "श्रीआचारांगसूत्रके मूलपाठमें पांच महाव्रतकी २५ भावना कही हैं और टीकामें पांचभावना सम्यक्त्वकी अधिक कही" उत्तर-श्रीआचारांगसूत्रके मूलपाठमें चारित्रकी २५ भावना कही हैं और निर्युक्तिमें पांच भावना सम्यक्त्वकी अधिक कही हैं सो सत्य है, और निर्युक्ति माननी नंदिसूत्रके मूलपाठमें कही है, और सम्यक्त्व सर्व व्रतोंका मूल है। जैसे मूल विना वृक्ष नहीं रह सकता है तैसे सम्यक्त्व विना व्रत नहीं रह सकते हैं। ढूंढिये व्रत की पच्चीस भावना मान्य करते हैं और सम्यक्त्वकी पांच भावना मान्य नहीं करते हैं इससे निर्णय होता है कि उनको सम्यक्त्वकी प्राप्ति ही नहीं है॥

(५७) "कर्मग्रंथमें नवमें गुणठाणे तक मोहनी कर्मका जो उदय लिखा है सो सूत्रके साथ नहीं मिलता है" उत्तर-कर्मग्रन्थमें कही बात सत्य है। जेठमलने यह बात सूत्रके साथ नहीं मिलती है ऐसे लिखा है, परंतु बत्तीससूत्रोंमें किसीभी ठिकाने चौदह गुणठाणे ऊपर किसीभी कर्म प्रकृतिका बंध, उदय, उदीरणा, सत्ता प्रमुख गुणठाणेका नाम लेकर कहा ही नहीं है, इसवास्ते जेठमलका लिखना मिथ्या है॥

(५८) "श्रीआचारांगकी चूर्णिमें-कणेरकी कांबी(छटी)फिराइ-

ऐसे लिखा है" उत्तर-जेठमलका यह लिखना मिथ्या है। क्योंकि आचारांगकी चूर्णिमें ऐसा लेख नहीं है ॥

(५९ से ७९ पर्यंत) इक्कीस बोल जेठमलने निशीथचूर्णिका नाम लेकर लिखे हैं वो सर्व बोल मिथ्या हैं, क्योंकि जेठमलके लिखे मूजिब निशीथचूर्णिमें नहीं हैं ॥

(८०) श्रीआवश्यकसूत्रके भाष्यमें श्रीमहावीरस्वामीके २७ भव कहे तिनमें मनुष्यसे कालकरके चक्रवर्त्ती हुए ऐसे कहा है" उत्तर-मनुष्य कालकरके चक्रवर्त्ती न होवे ऐसा शास्त्रका कथन है तथापि प्रभु हुए इससे ऐसे समझना कि जिनवाणी अनेकांत है, इसवास्ते जिनमार्गमें एकांत खींचना सो मिथ्यादृष्टिका काम है। और ढूंढियोंके माने बत्तीससूत्रोंमें तो वीरभगवंतके २७ भवोंका वर्णन ही नहीं है तो फेर जेठमलको इसबातके लिखनेका क्या प्रयोजन था ?

(८१) सिद्धांतमें अरिष्टनेमिके अठारां गणधर कहे और भाष्य में ग्यारह कहे सो मतांतर है ॥

(८२) सूत्रमें पार्श्वनाथके (२८) गणधर कहे और निर्युक्तिमें (१०) कहे ऐसे जेठमलने लिखा है, परंतु किसीभी सूत्र या निर्युक्ति प्रमुखमें श्रीपार्श्वनाथके (२८) गणधर नहीं कहे हैं, इसवास्ते जेठमलने कोरी गप्प ठोकी है ॥

(८३) "गृहस्थपणेमें रहे तीर्थंकरको साधु वंदना करे सो सूत्र विरुद्ध है" उत्तर-जबतक तीर्थंकर गृहस्थपणेमें होवे तबतक साधुका उनके साथ मिलाप होताही नहीं है ऐसी अनादि स्थिति है। परंतु साधु द्रव्य तीर्थंकरको वंदना करे यह तो सत्य है। जैसे श्रीऋषभ देवके साधु चउविसथ्था (लोगस्स) कहते हुए श्रीमहावीर पर्यंतको

द्रव्यनिक्षेपे वंदना करते थे । तथा हालमें भी लोगस्स कहते हुए उसी तरह द्रव्य जिनको वंदना होती है ॥ *

(८४-८५) "श्रीसंथारापयन्नामें तथा चंद्रविजयपयन्नामें एवंती सुकुमालका नाम है और एवंती सुकुमाल तो पांचमें आरेमें हुआ है इसवास्ते वो पयन्ने चौथे आरेके नहीं" उत्तर-श्रीठाणांग सूत्र तथा नंदिसूत्रमें भी पांचमें आरेके जीवोंका कथन है तो यह सूत्रभी चौथे आरेके बने नहीं मानने चाहिये ॥

ऊपर मूजिब जेठमल ढूंढकके लिखे(८५)प्रश्नोंके उत्तर हमने शास्त्रानुसार यथास्थित लिखे हैं, और इससे सर्व सूत्र, पंचांगी ग्रंथ,प्रकरण प्रमुख मान्य करने योग्य हैं ऐसे सिद्ध होता है। क्योंकि समदृष्टिकरके देखनेसे इनमें परस्पर कुछ भी विरोध मालूम नहीं होता है,परंतु जेकर जेठमल प्रमुख ढूंढिये शास्त्रोंमें परस्पर अपेक्षा पूर्वक विरोध होनेसे मानने लायक नहीं गिनते हैं तो तिनके माने बत्तीससूत्र जोकि गणधर महाराजाने आप गूंथे हैं ऐसे वो कहते हैं, उनमें भी परस्पर कितनाक विरोध है । जिसमें से कितनेक प्रश्नों के तौरपर लिखते हैं ॥

(१) श्रीसमवायांगसूत्रमें श्रीमल्लिनाथजीके (५९००) अवधि ज्ञानी कहे हैं, और श्रीज्ञातासूत्रमें (२०००) कहे हैं यह किस तरह?

(२) श्रीज्ञातासूत्रके पांचमें अध्ययनमें कृष्णकी (३२०००) स्त्रियां कही हैं,और अंतगडदशांगके प्रथमाध्ययनमें (१६०००) कही हैं यह कैसे ?

---

*पगामसज्झाय (साधुप्रतिक्रमण) में भी द्रव्यजिनको वंदना होती है ।

"नमो चउवीसाए तित्थयराणं उसभाइ महावीर पज्जवसाणाण"

इतिवचनात् ॥

(३) श्रीरायपसेणीसूत्रमें श्रीकेशीकुमारको चार ज्ञान कहे हैं, और श्रीउत्तराध्ययनसूत्रमें अवधिज्ञानी कहा सो कैसे ?

(४) श्रीभगवतीसूत्रमें श्रावक होवे सो त्रिविध त्रिविध कमादानका पच्चक्खाण करे ऐसे कहा, और श्रीउपासकदशांगसूत्रमें आनंदश्रावकने हल चलाने खुले रखे यह क्या ?

(५) तथा कुम्हार श्रावकने आवे चढाने खुले रखे ॥

(६) श्रीपन्नवणासूत्रमें वेदनीकर्मकी जघन्य स्थिति बारह मुहूर्त्तकी कही, और उत्तराध्ययनमें अंतमुहूर्त्तकी कही ॥

(७) श्रीउत्तराध्ययनमें 'लसन' अनंतकाय कहा, और श्रीपन्नवणाजीमें प्रत्येक कहा ॥

(८) श्रीपन्नवणासूत्रमें चारों भाषा बोलने वालेको आराधक कहा, और श्रीदशवैकालिकसूत्रमें दो ही भाषा बोलनी कहीं ॥

(९) श्रीउत्तराध्ययनमें रोगके होये साधु दवाई न करे ऐसे कहा, और श्रीभगवतीसूत्रमें प्रभुने बीजोरापाक दवाई के निमित्त लिया ऐसे कहा ॥

(१०) श्रीपन्नवणाजीमें अठारवें कायस्थिति पदमें स्त्रीवेदकी कायस्थिति पांच प्रकारे कही तो सर्वज्ञके मतमें पांच बातें क्या ?

(११) श्रीठाणांगसूत्रमें साधुको राजपिंड न कल्पे ऐसे कहा, और अंतगडसूत्रमें श्रीगौतमस्वामीने श्रीदेवीके घरमें आहार लिया ऐसे कहा ॥

(१२) श्रीठाणांगसूत्रमें पांच महानदी उतरनी ना कही, और दूसरे लगते ही सूत्रमें हां कही यह क्या ?

(१३) श्रीदशवैकालिक तथा आचारांगसूत्रमें साधु त्रिविध

त्रिविध प्राणातिपातका पच्चक्खाण करे ऐसे कहा,और समवायांग तथा दशाश्रुतस्कंधमें नदी उतरनी कही यह क्या ?

(१४) श्रीदशवैकालिकमें साधुको लूण प्रमुख अनाचीर्ण कहा, और आचारांगसूत्रके द्वितीय श्रुतस्कंधके पहिले अध्ययनके दशमें उद्देसेमें साधुको लूण किसीने विहराया होवे तो वो लूण साधु आप खालेवे, अथवा सांभोगिकको बांटके देवें ऐसे कहा, यह क्या ?

(१५) श्रीभगवतीसूत्रमें नींब तीखा कहा, और उत्तराध्ययन सूत्रमें कौडा कहा यह क्या ?

(१६) श्रीज्ञातासूत्रमें श्रीमल्लिनाथजीने(६०८)के साथ दीक्षा ली ऐसे कहा, और श्रीठाणांगसूत्रमें ६ पुरुष साथ दीक्षा ली ऐसे कहा यह क्या ? ॥

(१७) श्रीठाणांगसूत्रमें श्रीमल्लिनाथजीके साथ ६ मित्रोंने दीक्षा ली ऐसे कहा,और श्रीज्ञातासूत्रमें श्रीमल्लिनाथजी को केवल ज्ञान होए बाद ६ मित्रोंने दीक्षा ली ऐसे कहा यह क्या ?

(१८) श्रीसूयगडांगसूत्रमें कहा है कि साधु आधाकर्मि आहार लेता हुआ कर्मों से लिपायमान होवे भी, और नहीं भी होवे, इस तरह एकही गाथामें एक दूसरेका प्रतिपक्षी ऐसे दो प्रकारका कथन है, यह क्या ?

ऊपर मूजिब सूत्रोंमें भी बहुत विरोध हैं परंतु ग्रंथ अधिक हो जाने के भयसे नहीं लिखे हैं तोभी जिनको विशेष देखने की इच्छा होवे उन्होंने श्रीमद्यशोविजयोपाध्यायकृत वीरस्तुति रूप हुंडीके स्तवनका पंडित श्रीपद्मविजयजी का करा बालावबोध देख लेना ॥

जेकर ढूंढिये बत्तीससूत्रोंको परस्पर अविरोधी जानके मान्य

करते हैं, और अन्य सूत्र तथा ग्रंथोंको विरोधी मानके नहीं मान्य करतेहैं तो उपर लिखे विरोध जोकि बत्तीस सूत्रोंके मूल पाठमें ही हैं तिनका निर्युक्ति तथा टोका प्रमुखकी मददके विना निराकरण कर देना चाहिये, हमको तो निश्चय ही है कि ढूंढीये जोकि जिनाज्ञासे प्राङ्मुखहैं वे इनका निराकरण बिलकुल नहीं कर सकतेह,क्योंकि इनमें कोईतो पाठांतर, कोई अपेक्षा, कोई उत्सर्ग, कोई अपवाद, कोई नय, कोई विधिवाद, और कोई चरितानुवाद इत्यादि सूत्रोंके गंभीर आशय हैं,उनको तो समुद्र सरीखी बुद्धिके धनी टीकाकार प्रमुखही जानें और कुल विरोधोंका निराकरण करसकें, परंतु ढुंढीयोंने तो फकत जिनप्रतिमाके द्वेषसे सर्व शास्त्र उत्थापे हैं तो इनका निराकरण कैसे करसकें ? ॥इति ॥

(२६) सूत्रोंमें श्रावकोंने जिनपूजा करी कहीहै इस बाबत

२६ में प्रश्नोत्तरमें जेठमल लिखता है कि " सूत्रमें किसी श्रावकने पूजाकरी नहीं कहीहै " उत्तर-जेठमलने आंखें खोलके देखा होता तो दीख पड़ता कि सूत्रोंमें तो ठिकाने२ पूजाका और श्री जिनप्रतिमाका अधिकारहै जिनमेंसे कितनेक अधिकारोंकी शुचि (फैरिस्त) दृष्टांत तरीके भव्य जीवोंके उपकार निमित्त इहां लिखतेहैं॥

श्री आचारांगसूत्रमें सिद्धार्थ राजाको श्रीपार्श्वनाथका सतानीय श्रावक कहाहै,उन्होंने जिनपूजा के वास्ते लाख रूपैये दीये तथा अनेक जिनप्रतिमाकी पूजाकरी एसे कहाहै इस अधिकारमें सूत्रके अंदर "जायेअ" ऐसा शब्दहै जिसका अर्थ याग (यज्ञ) होताहै और याग शब्द देवपूजा वाचीहै "यज-देवपूजाया मिति वचनात्" तथा उनको

उनकी आराधना निमित्त साधु तथा श्रावक कायोत्सर्ग करे॥

(२७) श्रीव्यवहारसूत्रमें प्रथम उद्देशे जिनप्रतिमाके आगे आलोयणा करनी कही है॥

(२८) श्रीमहानिशीथसूत्रमें जिनमंदिर बनवावे तो श्रावक उत्कृष्टा बारमें देवलोक पर्यंत जावे ऐसे कहा है॥

(२९) श्रीमहाकल्पसूत्रमें जिनमंदिरमें साधु श्रावक वंदना करनेको न जावे तो प्रायश्चित्त लिखा है॥

(३०) श्रीजीतकल्पसूत्रमें भी प्रायश्चित्त लिखा है॥

(३१) श्रीप्रथमानुयोगमें अनेक श्रावक श्राविकायोंने जिनमंदिर बनवाए तथा पूजा करी ऐसा अधिकार है॥

इत्यादि सैंकड़ो ठिकाने जिनप्रतिमाकी पूजा करनेका तथा जिनमंदिर बनवाने वगैरह का खुलासा अधिकार है। और सर्व सूत्र देखके सामान्यपणे विचार करने से भी मालूम होता है कि चौथे आरेमें जितने जिनमंदिर थे उतने आजकल नहीं हैं, क्योंकि सूत्रों में जहां जहां श्रावकोंका अधिकार है वहां वहां "ण्हायाकयबलिकम्मा" अर्थात् स्नान करके देवपूजा करी ऐसा प्रत्यक्ष पाठ है। इससे सर्व श्रावकोंके घरमें जिनमंदिर थे और वे निरंतर पूजा करते थे ऐसे सिद्ध होता है। तथा दशपूर्वधारीके श्रावक संप्रतिराजाने सवालाख जिनमंदिर और सवाक्रोड जिनबिंब बनवाए हैं जिनमें से हजारों जिनमंदिर और जिनप्रतिमा अद्यापि पर्यंत विद्यमान हैं रतलाम,नाडोल आदि नगरोंमें तथा शत्रुंजय गिरनारादि तिर्थोंमें बहुत ठिकाने संप्रतिराजाके बनवाए जिनमंदिर दृष्टिगोचर होते हैं, और भी अनेक जिनमंदिर हजारों वर्षोंके बने हुए दीखलाइ देते हैं, तथा आबुजी ऊपर विमलचंद्र तथा वस्तुपालतेजपालके बनवाए

क्रोड़ों रुपैयेकी लागतके जिनमंदिर जिनकी शोभा अवर्णनीय है यद्यपि विद्यमानहैं। तोभी मंदमति जेठमल ढूंढकने लिखा है कि "किसी श्रावकने जिनप्रतिमा पूजी नहीं है" तो इससे यही मालूम होता है कि उसके हृदय चक्षुतो नहीं थे परंतु द्रव्यका भी अभाव ही था ! क्योंकि इसी कारण से उसने पूर्वोक्त सूत्रपाठ अपनी दृष्टि से देखे नहीं होवेंगे ॥ ॥ इति ॥

(२७) सावद्यकरणी बाबत ॥

सत्ताइसमें प्रश्नोत्तरमें जेठमल लिखता है कि "सावद्यकरणी में जिनाज्ञा नहीं है" यह लिखाण एकांत होनेसे जेठमलने अज्ञानताके कारण किया होवे ऐसे मालूम होता है, क्योंकि सावद्य निरवद्यकी उसको खबर ही नहीं थी ऐसे उसके इस प्रश्नोत्तरमें लिखे २४ बोलोंसे सिद्ध होता है। जेठमल जिस २ कार्यमें हिंसा होती होवे उन सर्व कार्यों को सावद्यकरणीमें गिनता है परंतु सो झूठ है। क्योंकि जिनपूजादि कितनेक कार्योंमें स्वरूपसे तो हिंसा है परंतु जिनाज्ञानुसार होनेसे अनुबंधे दया ही है परंतु अभव्य, जम लिमती औरढूंढिये प्रमुख जो दया पालते है,सो स्वरूपे दया है परंतु जिनाज्ञा बाहिर होनेसे अनुबंधे तो हिंसा ही है इसवास्ते कितनेक धर्म कार्यों में स्वरूपे हिंसा और अनुबंधे दया है और तिसका फलभी दयाका ही होता है तथा ऐसे कार्यमें जिनेश्वर भगवंतने आज्ञाभी दी है, जिनमेंसे कितनेक बोल दृष्टांत तरीके लिखते हैं ॥

(१) श्रीआचारांगसूत्रके दूसरे श्रुतस्कंधके ईर्या अध्ययनमें लिखा है कि साधु खाडेमें पड़जावेतो घांस वेलडी तथा वृक्षको पकड कर बाहिरनिकल आवे ॥

(२) इसी सूत्रमें लिखा है कि साधु खंड शर्कराके बदले लूण ले आया होवे तो वो खाजावे,अपने आप न खाया जावे तो सांभोगिक को बांट देवे ॥

(३) इसी सूत्रमें लिखा है कि मार्गमें नदी आवे तो साधु इस तरह उतरे ॥

(४) इसी सूत्रमें कहा है कि साधु मृगपृच्छामें झूठ बोले ॥

(५) श्रीसूयगडांगसूत्रके नवमें अध्ययनमें कहाहै कि मृगपृच्छा के विना साधु झूठ न बोले, अर्थात् मृगपृच्छामें बोले ॥

(६) श्रीठाणांगसूत्रके पांचमें ठाणेमें पांचकारणे साधु साध्वी को पकडलेवे ऐसे कहा है, तिनमें नदी में बहती साध्वी को साधु बाहिर निकाले ऐसे कहा है ॥

(७) श्रीभगवतीसूत्रमें कहा है कि श्रावक साधुको असुझता और सचित्त चार प्रकारका आहार देवे तो अल्प पाप और बहुत निर्जरा करे ॥

(८) श्रीउववाइसूत्रमें कहा है कि साधु शिष्यकी परीक्षावास्ते दोष लगावे ॥

(९) श्रीउत्तराध्ययनसूत्रमें कहा है कि साधु पडिलेहणा करे उसमें अवश्य वायुकायकी हिंसा होती है ॥

(१०) श्रीबृहत्कल्पसूत्रमें चरबीका लेप करना कहा है ॥

(११) इसी सूत्रमें कारणे साध्वीको पकडना कहा है ॥

इत्यादि कितनेही कार्य जिनको एकांत पक्षी होनेसे जेठमल ढूंढक सावद्य गिनता है परंतु इनमें भगवंतकी आज्ञा है, इस वास्ते कर्मका बंधन नहीं है । श्रीआचारांगसूत्रके चौथे अध्ययनके दूसरे उद्देशेमें कहा है कि देखनेमें आश्रवका कारण है परंतु शुद्ध

प्रणामसे निर्जरा होती है, और देखनेमें संवरका कारण है परंतु अशुद्ध प्रणामसे कर्मका बंधन होता है ॥

तथा सम्यग्दृष्टि श्रावकोंने पुण्य प्राप्तिके निमित्त कितनेक कार्य करे हैं, जिनमें स्वरूपे हिंसा है परंतु अनुबंधे दया है, और उनको फल भी दयाका ही प्राप्त हुआ है, ऐसे अधिकार सूत्रोंमें बहुत हैं जिनमें से कुछक अधिकार लिखते हैं ॥

(१) श्रीज्ञातासूत्रमें कहा है कि सुबुद्धि प्रधानने राजाके समझाने वास्ते गंदी खाइका पाणी शुद्ध करा ॥

(२) श्रीमल्लिनाथजीने ६ राजाके प्रतिबोधनेवास्ते मोहनघर कराया ॥

(३) उन्होंने ही ६ राजाओंका अपने ऊपरका मोह हटानेवास्ते अपने स्वरूप जैसी पूतलीमें प्रतिदिन आहारके ग्रास गेर जिससे उनमें हजारों त्रस जीवोंकी उत्पत्ति और विनाश हुआ ॥

(४) उववाइसूत्रमें कोणिक राजाने भगवान्की भक्ति वास्ते बहुत आडंबर करा ॥

(५) कोणिकराजाने रोज भगवंतकी खबर मंगवानेवास्ते आदमियोंकी डाक बांधी ॥

(६) प्रदेशी राजाने दानशाला मंडाइ जिसमें कई प्रकारका आरंभ था, परंतु केशीकुमारने उसका निषेध नहीं करा, किंतु कहा कि हे राजन्! पूर्व मनोज्ञ होके अब अमनोज्ञ नहीं होना ॥

(७) प्रदेशीराजाने केशीगणधरको कहा कि हे स्वामिन्! कलको मैं समग्र अपनी ऋद्धि और आडंबरके साथ आकर आपको वंदनाकरुंगा, और वैसेही करा, परंतु केशीगणधरने निषेध नहीं करा॥

(८) चित्रसारथी ने प्रदेशी राजाको प्रतिबोध कराने वास्ते श्री केशीगणधरके पास लेजाने वास्ते रथ घोडे, दौड़ाये ॥

(९) सूर्याभ देवताने जिनभक्ति के वास्ते भगवंतके समीप नाटक करा ॥

(१०) द्रौपदीने जिनप्रतिमाकी सतरे भेदी पूजा करी ॥

मंदमति जेठमलने इस प्रश्नोत्तरमें जो जो बोल लिखे हैं उन में 'अपनी इच्छा' ऐसा शब्द उन कार्योंको जिनाज्ञा विनाके सिद्ध करने वास्ते लिखा है; परंतु उनमें से बहुते कृत्य तो पुन्य प्राप्तिके निमित्त ही करे हैं जिनमेंसे कितनेक कारण सहित नीचे लिखे जाते हैं ॥

(१) कोणिकराजाने प्रभुकी वधाईमें नित्यप्रति साढे, बारह हजार रुपैये दीये सो जिनभक्तिके वास्ते ॥

(२) अनेक राजाओं ने तथा श्रावकोंने दीक्षा महोत्सव कीये सो जैनशासनकी प्रभावना वास्ते ॥

(३) श्रीकृश्नमहाराजाने दीक्षाकी दलाली वास्ते द्वारिकामें पडह फेरचा सो धर्मकी वृद्धिवास्ते ॥

(४) इंद्र तथा देवतादिकोंने जिनजन्ममहोत्सव करे सो धर्म प्राप्तिके वास्ते ऐसा श्री जंबूद्वीपपन्नत्तीसूत्रका कथन है ॥

(५) देवते नंदीश्वरद्वीपमें अठ्ठाई महोत्सव करते हैं सो धर्म प्राप्तिके वास्ते ॥

(६) जंघाचारण तथा विद्याचारण लब्धि फोरते हैं सो जिन प्रतिमाके वांदने वास्ते ॥

(७) शंख श्रावकने सधर्मीवात्सल्य किया सो सम्यक्त्वकी शुद्धिके वास्ते । इस मूजिब अद्यापि पर्यंत सधर्मीवात्सल्यका रिवाज

चलता है, बहुते पुण्यवंत श्रावक सधर्मीकी भक्ति अनेक प्रकारसे करते हैं। जेकर जेठमल इसका अर्थात् सधर्मीवात्सल्य करनेका निषेध करता है और लिखता है कि इस कार्यमें उसकी इच्छा है, जिनाज्ञा नहीं है तो ढूंढिये अपने सधर्मीको जीमाते हैं, संवत्सरीका पारणा कराते हैं, पूज्यकी तिथिमें पोसह करके अपने सधर्मीको जीमाते हैं इनमें जेठमल और ढूंढिये साधु पाप मानते होवेंगे, क्योंकि इन कार्योंमें हिंसा जरूर होती है। जब ऐसे कार्यमें पाप मानते हैं तो ढूंढिये तेरापंथी भीखमके भाई बनके यह कार्य किसवास्ते करते हैं? क्या नरकमें जानेवास्ते करते हैं?

(८) तेतली प्रधानको पोट्टीलदेवताने समझाया सो धर्मकेवास्ते॥

(९) तीर्थंकर भगवंतने वर्षीदान दीया सो पुण्यदान धर्म प्रकट करने वास्ते॥

(१०) देवता जिनप्रतिमा तथा जिनदाढा पूजते हैं सो मोक्ष फल वास्ते॥

(११) उदायनराजा वडे आडंबरसे भगवंतको वंदना करने वास्ते गया सो पुण्य प्राप्ति वास्ते॥

इत्यादिक अनेक कार्य सम्यग्दृष्टियोंने करे हैं जिनमें महा-पुण्य प्राप्ति और तीर्थंकरकी आज्ञाभी है। जेकर जेठमल एकांत दयासे ही धर्म मानता है तो श्रीभगवतीसूत्रके नवमें शतकमें कहा है कि जमालिने शुद्ध चारित्र पाला है, एक मक्खी की पांख भी नहीं दुखाई है, परंतु प्रभुका एकही वचन उत्थापनेसे उसको अहिंसा के फलकी प्राप्ति नहीं हुई किंतु हिंसाके फलकी प्राप्ति हुई। इसवास्ते यह समझना, कि जिनाज्ञाविनाकी दया तो स्वरूपे दया है, परंतु अनुबंधेतो हिंसा ही है, और इसीवास्ते जमालिकी दया साफल्यता

को प्राप्त नहीं हुई, तो अरे ढूंढियो! उस सरीखी दया तुम्हारे से पलती नहीं है मात्र दया दया मुख से पुकारते हो परंतु दया क्या है सो नहीं जानते हो, और भगवंतके वचन तो अनेक ही लोपते हो इसवास्ते तुमारा निस्तारा कैसे होवेगा सो विचार लेना?॥ इति ॥

(२८) द्रव्यनिक्षेपा वंदनीक है इसबाबत।

अट्ठाइसमें प्रश्नोत्तरमें "द्रव्यनिक्षेपा वंदनीक नहीं है" ऐसे सिद्ध करनेवास्ते जेठमल लिखता है कि "चौवीसथ्थेमें जो द्रव्य जिनको वंदना होती होवे तो वोह तो चारों गतियोंमें अविरती अपच्चक्खाणी हैं उनको वंदना कैसे होवे?" उत्तर—श्रीऋषभदेवके समयमें साधु चौवीसथ्था करते थे उसमें द्रव्यतीर्थंकर तेइस को तीर्थंकरकी भावावस्थाका आरोप करके वंदना करते थे, परंतु चारों गतिमें जिस अवस्थामें थे उस अवस्थाको वंदना नहीं करते थे ॥

जेठमल लिखता है कि "पहिले हो चुके तीर्थंकरोंके समयमें चौवीसथ्था कहने वक्त जितने तीर्थंकर होगये और जो विद्यमान थे उतने तीर्थंकरोंकी स्तुति वंदना करते थे" जेठमलका यह लिखना मिथ्या है। क्योंकि चौवीसथ्थेमें वर्त्तमान चौवीसीके चौवीस तीर्थंकरके बदले कम तीर्थंकरको वंदना करे ऐसा कथन किसीभी जैन शास्त्रमें नहीं है ॥

जेठमल लिखता है, कि श्रीअनुयोगद्वारसूत्रमें आवश्यकके ६ अध्ययन कहे हैं उनमें दूसरा अध्ययन उत्कीर्त्तना नामा है तो उत्कीर्त्तना नाम स्तुति वंदना करनेका है सो किसका उत्कीर्त्तन करना? इसके उत्तरमें चौवीसथ्था अर्थात् चौवीस तीर्थंकरका करना

ऐसे समझना, परंतु जेठे अज्ञानी के लिखे मूजिब चौवीसका मेल नहीं है ऐसे नहीं समझना; क्योंकि चौवीस न होवे तो चौवीसथ्था न कहा जावे ।

ऊपर लिखी बातमें दृष्टांत तरीके जेठमल लिखता है कि "श्रीमहाविदेहमें एक तीर्थंकरकी स्तुति करे चौवीसथ्था होता है" यह लिखना जेठमलका बिलकुल ही अकल विनाका है, क्योंकि इस मूजिब किसी भी जैनसिद्धांतमें नहीं कहा है। और महाविदेह में चौवीसथ्था भी नहीं है। क्योंकि वहां तो जब साधुको दोष लगे तब पडिक्कमते हैं। इससे जेठमलका लेख स्वमतिकल्पना का है परंतु शास्त्रोक्त नहीं ऐसे सिद्ध होता है। इस बाबत बारमें प्रश्नोत्तरमें खुलासा लिखके द्रव्यनिक्षेपा वंदनीक सिद्ध करा है ॥

॥ इति ॥

(२९) स्थापना निक्षेपा वंदनीक है इस बाबत।

२९ में प्रश्नोत्तरमें जेठमलने स्थापना निक्षेपा वंदनीक नहीं, ऐसे सिद्ध करनेवास्ते कितनीक मिथ्या कुयुक्तियां लिखी हैं।

आद्यमें श्रीदशवैकालिकसूत्रकी गाथा लिखी है परंतु उस गाथासे तो स्थापना निक्षेपा अच्छी तरह सिद्ध होता है यतः—

संघट्टइत्ता काएणं अहवा उवहिणामवि।
खमेह अवराहं मे वएज्ज न पुणोत्तिय।१८॥

अर्थ—कायाकरके संघट्टा होवे, तथा उपधिका संघट्टा होवे तो शिष्य कहे—मेरा अपराध क्षमो और दूसरीवार संघट्टादि अपराध नहीं करूंगा ऐसे कहे ॥

इस गाथाके अर्थसे प्रकट सिद्ध होता है कि गुरुके वस्त्रादि तथा पाटादिकके संघट्ट करनेसे पाप है। यहां यद्यपि पाटादिक अजीव है तोभी यह आचार्यके हैं इसवास्ते इनकी आशातना टालनी इससे स्थापना निक्षेपा सिद्ध होता है, इसवास्ते जेठमल की करी कल्पना मिथ्या है। क्योंकि जिनप्रतिमा जिनवर अर्थात् तीर्थंकरकी कहाती है, और वस्त्रादि उपाधि गुरु महाराजकी कही जाती है, इसवास्ते इन दोनोंकी जो भक्ति करनी सो देवगुरुकी ही भक्ति है, और इनकी जो आशातना करनी सो देवगुरुकी आशातना है। इससे स्थापना माननी तथा पूजनी सत्य सिद्ध होती है।

जेठमल लिखता है कि "उपकरण प्रयोग परिणम्या द्रव्य है" सो महामिथ्या है। उपकरणका प्रयोग परिणम्या पुद्गल किसीभी जैनशास्त्रमें नहीं कहा है, परंतु उसको तो मीसा पुद्गल कहा है। इसवास्ते मालूम होता है कि जेठमलको जैनशास्त्रकी कुछभी खबर नहीं थी। और जेठमल लिखता है कि "जिस पृथ्वी शिलापट्ट ऊपर बैठके भगवंतने उपदेश करा है उसी शिलापट्ट ऊपर बैठ के गौतम सुधर्मास्वामी प्रमुखने उपदेश करा है" उत्तर-ऐसा कथन किसीभी जैनसिद्धांतमें नहीं है, इसवास्ते जेठमल ढूंढक महामृषा वादी सिद्ध होता है ॥

जेठमल गुरुके चरण बाबत कुयुक्ति लिखके अपना मत सिद्ध करना चाहता है, परंतु सो मिथ्या है। क्योंकि गुरुके चरणकी रजभी पूजने योग्य है तो धरती ऊपर पडे, गुरुके चरणोंका तो क्या ही कहना? कितनेक ढूंढिये अपने गुरुके चरणोंकी रज मस्तकों पर चढाते हैं, और जेठातो उनके साथभी नहीं मिलता है तो इस से यही सिद्ध होता है कि यह कोई महादुर्भवी था ॥

इस प्रश्नोत्तरके अंतमें कितनेक अनुचित वचन लिखके जेठे ने गुरुमहाराजकी आशातना करी है, सो उसने संसार समुद्रमें रुलनेका एक अधिक साधन पैदा करा है बारमें प्रश्नोत्तरमें इस बावत विशेष खुलासा करके स्थापना निक्षेपा वंदनीक सिद्ध करा है इसवास्ते यहां अधिक नहीं लिखते हैं ॥ इति ॥

(३०) शासनके प्रत्यनीकको शिक्षा देनी इसबाबत ।

तीसमें प्रश्नोत्तरमें जेठमलने लिखा है कि "धर्म अपराधीको मारनेसे लाभ है ऐसा जैनधर्मी कहते हैं" जेठेका यह लेख मिथ्या है । क्योंकि जैनमतके किसीभी शास्त्रमें ऐसे नहीं लिखा है कि धर्म अपराधीको मारनेसे लाभ है । परंतु जैनशास्त्रमें ऐसेतो लिखा है कि जो दुष्टपुरुष जिनशासनका उच्छेद करनेवास्ते, जिनप्रतिमा तथा जिनमंदिरके खंडन करने वास्ते मुनिमहाराजके घात करने वास्ते तथा साध्वीके शील भंग करनेवास्ते उद्यत होवे, उस अनुचित काम करने वालेको प्रथम तो साधु उपदेश देकर शांत करे जेकर वो पुरुष लोभी होवे तो उसको श्रावकजन धन देकर हटावे, जब किसी तरहभी न माने तो जिस तरह उसका निवारण होवे उसी तरह करे । जो कहा है श्रीवीरजिनहस्तदीक्षित धर्मदासगणिकृत ग्रंथमें—तथाहि—

साहूण चेइयाणय पडिणीय तह अवणवायं च
जिण पवयणस्स अहियं सव्वथ्थामेण वारेइ २४१

और गुर्वादिके अपराधिका निवारण करना सो वेयावच्च है, सोई श्रीउत्तराध्ययनसूत्रमें श्रीहरिकेशी मुनिने कहा है—तथाहि—

पुव्विं च इण्हिं च अणागयं च मणप्पदोसो न मे अत्थि कोइ। जक्खा हु वेयावडियं करेंति तम्हा हु एए निहया कुमारा॥ ३१॥

इस काव्यके तीसरे तथा चौथे पादमें हरिकेशीमुनिने कहा है कि यक्ष मेरी वेयावच्च करता है, उसने मेरी वेयावच्च के वास्ते कुमारों को हणा है॥

इस बाबत जेठमल लिखता है कि "हरिकेशीमुनि छद्मस्थ चारभाषाका बोलने वालाथा उसका वचन प्रमाण नहीं" ऐसे वचन पुण्यहीन मिथ्यादृष्टिके विना अन्य कौन लिखे या बोले? बड़ा आश्चर्य है कि सूत्रकार जिसकी महिमा और गुण वर्णन करते हैं, जिसको पांच समिति और तीन गुप्ति सहित लिखते हैं, ऐसे महामुनिका वचन प्रमाण नहीं ऐसे जेठा लिखताहै! परंतु ऐसे लेखसे जेठमलकुमतिका वचन किसी भी मार्गानुसारीको मान्य करने योग्य नहींहै ऐसे सिद्ध होता है॥

जेठमल लिखताहै कि "गुरुको बाधाकारी जूं, लीख, मांगणु आदि बहुत सूक्ष्म जीवभी होतेहैं तो उनका भी निराकरण करना चाहिये" उत्तर—बेअकल जेठे का यह लिखना मिथ्याहै, क्योंकि वो जीव कुछ द्वेषबुद्धिसे साधुको असाता पैदा नहीं करते हैं, परंतु उनका जाति स्वभावही ऐसा है, और इससे गुरु महाराजको कुछ विशेष असाता होनेका भी संभव नहींहै। इसवास्ते इनके निवारण

की भी कुछ जरूरत नहींहै। परंतु पूर्वोक्त दुष्ट पुरुषोंके निवारणकी तो अवश्य जरूरतहै ॥

जेठमल सरीखे बेअकल रिखोंके ऐसे लेख तथा उपदेशसे यह तो निश्चय होताहै कि उनकी आर्या अर्थात् ढूंढिनी साध्वी का कोई शील खंडन करे अथवा ढूंढिये साधुओं को कोई प्रहार करे यावत् मरणांतकष्ट देवे तो भी अकलके दुश्मन ढूंढिये श्रावक उस कार्य करने वाले को अपराधी न गिनें, शिक्षा न करें, और उसका किसी प्रकार निवारणभी न करें, इससे ढूंढिये तेरापंथी भीखमके भाई हैं ऐसा जेठमलही सिद्ध कर देता है क्योंकि उसकी श्रद्धा उन जैसी ही है। यहां सत्यके खातर मालूम करना चाहते हैं कि कितनेक ढूंढियों की श्रद्धा पूर्वोक्त जेठे सदृश नहीं है, क्योंकि वो तो धर्मके प्रत्यनीकका निवारण करना चाहिये ऐसे समझते हैं। इसवास्ते जेठेकी श्रद्धा समस्त जैनशास्त्रोंसे विपरीतहै इतना ही नहीं बलकि ढूंढियोंसे भी विपरीत है ॥

इस बाबत जेठेने लिखा है "जो ऐसी भक्ति करनेका जिन शासनमें कहा होवे तो दो साधुओंको जालने वाला गोशाला जीता क्यों जावे ?" उत्तर–यह मूढ इतनाभी नहीं समझता कि उस समय वीर भगवान् प्रत्यक्ष विराजते थे, और उन्होंने भावी भाव ऐसाही देखा था। इसवास्ते ऐसीऐसी कुतर्कें करना सो महा मिथ्यादृष्टि अनंत संसारी का काम है ॥

इस प्रश्नोत्तरके अंतमें जेठेने श्रीआचारांगसूत्रका पाठ लिखाहै जिसका भावार्थ यहहै कि साधुको कोई उपसर्ग करे तो साधु उस का घात न चिंते। सो यह बात तो हमभी मंजूर करते हैं। क्योंकि पूर्वोक्त पाठमें कहे मूजिब हरिकेशी मुनिने अपने मनमें ब्राह्मणों

के पुत्रकी थोड़ी भी घात चिंतवन नहीं करी थी। और साधुको अपने वास्ते परिसह सहने का तो धर्महीं है,परंतु जो कोई शासन को उपद्रवकरे तो साधु तथा श्रावक जिनाज्ञा पूर्वक यथाशक्ति उस के निवारण करने में ही उद्युक्त होवे ॥ इति ॥

(३१) बीस विहरमान के नाम बाबत।

ढूंढियों के माने बत्तीस सूत्रोंमें बीस विरहमानके नाम किसी ठिकानेभी नहीं हैं परंतु ढूंढिये मानते हैं सो किस शास्त्रानुसार ? इस प्रश्न के उत्तरमें जेठमल ढूंढक लिखता है कि" तुम कहते हो वोही बीस नाम हैं ऐसा निश्चय मालूम नहीं होता है, क्योंकि श्री विपाक सूत्रमें कहा है कि भद्रनंदी कुमारने पूर्वभवमें महाविदेह क्षेत्रमें पुण्डरगिणी नगरीमें जुगबाहुजिनको प्रतिलाभा, और तुमतो पुंडरगिणी नगरीमें श्रीसीमंधरस्वामी कहते हो सो कैसे मिलेगा ?" उत्तर-श्रीसीमंधरस्वामी पुष्कलावती विजयमें पुंडरगिणी नगरीमें जन्मे हैं सो सत्य है, परंतु जिस विजयमें जुगबाहु जिन विचरते हैं उस विजयमें क्या पुंडरगिणी नामा नगरी नहीं होवेगी ? एकनामकी बहुत नगरियां एक देशमें होती हैं जैसे काठियावाड़ सरीखे छोटेसे प्रांत(सूबा)मेंभी एक नामके बहुतशहर विद्यमान हैं तो वैसे देशमें जुदी२विजयमें एक नामकी कई नगरियां होवें तो इसमें कुछ आश्चर्य्य नहीं है,इसवास्ते जेठमलजी की करी कुयुक्ति झूठी है, और जैन शास्त्रानुसार बीस विहरमानके नाम कहलाते हैं सो सच्चे हैं, जेकर जेठा हालमें कहलाते बीस नाम सच्चे नहीं मानता है तो कौनसे बीस नाम सच्चे हैं ? और वो क्यों नहीं लिखे ? बिचारा कहां से लिखे ? फकत जिनप्रतिमा के

द्वेषसे ही सर्व शास्त्र उत्थापे उनमें विरहमानकी बातभी गई तो अब लिखे कहां से ? जब बोलनेका कोई ठिकाना न रहा तो सच्चे नाम को खोटे ठहराने के वास्ते धुयें की मुठियां भरी हैं, परंतु इस से उसके झूठे पंथकीकुछ सिद्धि नहीं हुईहै,और होनेकीभी नहीं है।

तथाढूंढिये बत्तीस सूत्रोंमें जो बात नहीं है सो तो मानतेहीनहीं हैं तो यह बातभी उनको माननी न चाहिये,मतलब यह कि वीस विरहमान भी नहीं मानने चाहियें;परंतु उलटे कितनेक ढूंढिये बीस विरहमानानकी स्तुति करते हैं, जोडकला बनाते हैं, परंतु किसके आधारसे बनाते हैं इसके जबावमें उनकेपास कुछभी साधन नहीं है॥

अंतमें जेठमलने लिखा है कि "इस बातमें हमारा कुछभी पक्षपात नहीं है" यह लेख उसने ऐसा लिखा है कि जब कोई हथियार हाथमें नहीं रहा दोनों हाथ नीचे पडगये तब शरण आने वास्ते जीजी करता है परंतु यह उसने मायाजालका फंद रचाहै॥

(३२) चैत्यशब्दका अर्थ साधु तथा ज्ञान नहीं इस बाबत।

बत्तीसमें प्रश्नोत्तरकी आदिमें चैत्यशब्दका अर्थ साधु ठहराने वास्ते जेठमलने चौवीसबोल लिखे हैं सो सर्व झूठे हैं। क्योंकि चैत्य शब्दका अर्थ सूत्रोंमें किसी ठिकाने भी साधु नहीं कहा है। चौवीस ही बोलोंमें जेठेने चैत्यशब्दका अर्थ "देवयं चेइयं" इसपाठके अर्थ में साधु और अरिहंत ऐसा करा है, परंतु यह दोनों ही अर्थ खोटे हैं। किसीभी सूत्रकी टीकामें अथवा टब्बेमें ऐसा अर्थ नहीं करा है। उसका अर्थतो इष्टदेवजो अरिहंत तिसकी प्रतिमाकी तरह "पज्जु

वासामि" अर्थात् सेवा करूं ऐसा करा है, परंतु कितनेक ढूंढियों ने हडतालसे मेटके नवीन कितनेक पुस्तकोंमें जो मन मानासो अर्थ लिख दिया है, इसवास्ते वो मानने योग्य नहीं है॥

किसी कोषमें भी चैत्यशब्दका अर्थ साधु नहीं करा है और तीर्थंकरभी नहीं करा है; कोषमें तो "चैत्यं जिनौकस्तद्बिंबं चैत्यो जिनसभातरुः" अर्थात् जिनमंदिर और जिनप्रतिमाको 'चैत्यं' कहा है और चौतरेवन्ध वृक्षका नाम 'चैत्य' कहा है इनके उपरांत और किसी वस्तुका नाम चैत्य नहीं कहा है। तथा तेइसमें और चौवीसमें बोलमें आनंद तथा अंबडका अधिकार फिराकर लिखा है, उस बाबत सोलवें तथा सतारवें प्रश्नमें हम लिख आए हैं। ढूंढिये चैत्यशब्दका अर्थ साधु कहते हैं परंतु सूत्रमें तो किसी ठिकाने भी साधुको चैत्य कहकर नहीं बुलाया है। "निग्गंथाणवा निग्गंथिणवा" ऐसे कहा है, "साहुवा साहुणीवा" ऐसे कहा है, और "भिक्खुवा भिक्खुणीवा" ऐसे भी कहा है, परंतु "चैत्यंवा चैत्यानिवा" ऐसे तो एक ठिकाने भी नहीं लिखा है। तथा जेकर चैत्यशब्दका अर्थ साधु होवे तो सो चैत्यशब्द स्त्रीलिंगमें तो बोलाही नहीं जाता है तो साध्वीको क्या कहना ?

तथा श्रीमहावीरस्वामीके चौदह हजार साधु सूत्रमें कहे हैं परंत चौदह हजार चैत्य नहीं कहे, श्रीऋषभदेवस्वामीके चौरासी हजार साधु कहे परंतु चौरासीहजार चैत्य नहीं कहे, केशीगणधरका पांचसौ साधुका परिवार कहा-परंतु चैत्यका परिवार नहीं कहा इसी तरह सूत्रोंमें अनेक ठिकाने आचार्यके साथ इतने साधु विचरते हैं ऐसेतो कहा है परंतु किसी ठिकाने इतने चैत्य विचरते हैं ऐसे नहीं

कहा है। फकत ढूंढिये स्वमतिकल्पनासे ही चैत्य शब्दका अर्थ साधु करते हैं परंतु सो झूठा है॥

और जेठेने जिस जिस बोलमें चैत्यशब्दका अर्थ साधु करा है सो अर्थ फकत शब्दके यथार्थ अर्थ जानने वाले पुरुष देखेंगे तो मालूम होजावेगा कि उसका करा अर्थ विभक्ति सहित वाक्य योजनामें किसी रीतिसे भी नहीं मिलता है। तथा जब सर्वत्र "देवयं चेइयं" का अर्थ साधु अथवा तीर्थंकर ठहराता है तो श्रीभगवती सूत्रमें दाढ़ाके अधिकारमें भगवंतने गौतमस्वामीको कहा कि जिन दाढ़ा देवताको पूजने योग्य हैं यावत् "देवयं चेइयं पज्जुवासामि" ऐसा पाठ है उस ठिकाने ढूंढिये "चेइयं" शब्दका क्या अर्थ करेंगे; यदि 'साधु' अर्थ करेंगे तो यह उपमा दाढ़ाके साथ अघटित है और यदि 'तीर्थंकर' ऐसा अर्थ करेंगे तो दाढ़ा तीर्थंकर समान सेवा करने योग्य होवेंगी। जो कि दाढ़ा तीर्थंकरकी होनेसे उनके समान सेवाके लायक है तथापि उस ठिकाने तो दाढ़ा जिन प्रतिमाके समान सेवा करने योग्य कही हैं इसवास्ते 'चेइयं' शब्द का अर्थ पूर्वोक्त हमारे कथन मूजिब सत्य है। क्योंकि पूर्वाचार्यों ने यही अर्थ करा है॥

२५से २९ तक पांचबोलोंमें चैत्यशब्दका अर्थ ज्ञान ठहराने वास्ते जेठमलने कुयुक्तियां करी हैं परंतु सो मिथ्या हैं, क्योंकि सूत्रमें ज्ञानको चैत्यनहीं कहा है। श्रीनंदिसूत्रादि जिसजिस सूत्रमें ज्ञानका अधिकार है वहां सर्वत्र ज्ञानार्थ वाचक "नाण" शब्द लिखा है जैसे "नाणं पंचविहं पण्णत्तं" ऐसे कहाहै परंतु "चेइयं पंचविहं पण्णत्तं" ऐसे नहीं कहा है। तथा सूत्रोंमें जहां जहां ज्ञानी मुनिमहाराजा का अधिकार है वहां वहां "मइनाणी, सुअनाणी,

ओहीनाणी; मणपज्जवणाणी,केवलनाणी" ऐसे कहा है परंतु एक ठिकाने भी "मइचैत्यी, सुअचैत्यी, ओहीचैत्यी, मणपज्जवचैत्यी, केवलचैत्यी" ऐसे नहीं कहा है ॥

तथा जहां जहां भगवंतको तथा साधुओंको अवधिज्ञान,मनपर्य्यवज्ञान, परमावधिज्ञान, तथा केवलज्ञान उत्पन्न होनेका अधिकार है, वहां वहां ज्ञान उत्पन्न हुआ ऐसे तो कहा है, परंतु अवधि चैत्य उत्पन्न हुआ, मनपर्यव चैत्य उत्पन्न हुआ, या केवल चैत्य उत्पन्न हुआ,इत्यादि किसी ठिकाने भी नहीं कहा है। और सम्यग् दृष्टि श्रावक प्रमुखको जातिस्मरणज्ञान तथा अवधिज्ञान उत्पन्न होनेका अधिकार सूत्रमें जहां जहां है वहां वहां भी अमुक ज्ञान उत्पन्न हुआ ऐसे तो कहा है, परंतु जातिस्मरण चैत्य पैदा भया,अवधिचैत्य पैदाभया ऐसे नहीं कहा है। इत्यादि अनेक प्रकार से यही सिद्ध होता है कि सूत्रोंमें किसी ठिकानेभी ज्ञानको चैत्य नहीं कहा है, इसवास्ते जेठेका कथन मिथ्या है। चैत्य शब्दका अर्थ ज्ञान ठहरानेवास्ते जो बोल लिखे हैंउनको पुनः विस्तार पूर्वक लिखने से मालूम होता है कि २६ में बोलमें जंघाचारण मुनिके अधिकारमें 'चेइयाइं वंदित्तए'ऐसा शब्द है उसका अर्थ जेठमलने वीतरागको वंदना करी ऐसा करा है सो खोटा है,वीतरागकी प्रतिमा को जंघाचारणने वंदना करी यह अर्थ सच्चा है इसबाबत पंदरवें प्रश्नोत्तरमें खुलासा लिखा गया है ॥

२७ में बोलमें जेठमलने चमरेंद्रके अलावेमें "अरिहंते वा अरिहंत चेइयाणिवा" और "अणगारेवा" ऐसा पाठ है ऐसे लिखा है इस पाठसे तो प्रत्यक्ष "चेइयं" शब्दका अर्थ 'प्रतिमा'सिद्धहोता है, क्योंकि इस पाठमें साधुभी जुदे कहे हैं, और अरिहंत भी जुदे

कहे हैं, तथा 'चेइयं' अर्थात् जिनप्रतिमाभी जुदी कही है,इसवास्ते इस अधिकारमें अन्य कोईभी अर्थ नहीं हो सक्ता है, तथापि जेठेने तीनों ही बोलोंका अर्थ अकेले अरिहंतही जानना ऐसा करा है, सो उसकी मूर्खताकी निशानी है, कोई सामान्य मनुष्य फकत शब्दार्थ के जानने वालाभी कह सक्ता है कि इन तीनों बोलोंका अर्थ अकेले अरिहंत ऐसाकरनेवाला कोईमूर्ख शिरोमणिहीहोवेगा। जेठमलजी लिखते हैं कि "पूर्वोक्तपाठमें चैत्य शब्दसे जिनप्रतिमा होवे और उसका शरण लेकर चमरेंद्र सुधर्मा देवलोक तक जा सक्ता होवे तो तीरछे लोकमें द्वीपसमुद्रमें शाश्वती प्रतिमा थीं; ऊर्ध्वलोकमें मेरु-पर्वत ऊपर तथा सुधर्मा विमानमें सिद्धायतनमें नजदीक शाश्वती प्रतिमा थीं तो जब शक्रेंद्रने तिसके (चमरेंद्रके) ऊपर वज्र छोडा तब वो जिनप्रतिमाके शरणे नहीं गया और महावीरस्वामीके शरणे क्यों आया ?" इसका उत्तर–जेठमलने भद्रिक जीवोंको फंसाने वास्ते यह प्रश्न जाल रूपगूंथा है,परंतु इसका जबाब तो प्रत्यक्षहैकि जिसका शरण लेकर गया होवे उसीकीशरण पीछा आवे। चमरेंद्र श्रीमहावीस्वामीका शरण लेकर गया था, इसवास्ते पीछा उनके शरण आया है। जेठमलके कथनका आशय ऐसा है कि "उसके आते हुए रस्तेमें बहुत शाश्वती प्रतिमा और सिद्धायतन थे तोभी चमरेंद्रउनकेशरण नहींगया इसवास्ते चैत्य शब्दकाअर्थजिनप्रतिमा नहींऔर उसका शरण भी नहीं"।वाहरे मूर्खशिरोमणि! रस्तेमें जिन प्रतिमा थीं उनके शरण चमरेंद्र नहीं गया परंतु रस्तेमें श्रीसीमंधर स्वामी तथा अन्य विरहमानजिन विचरते थे उनके शरणभी चम-रेंद्र नहीं गया, तब तो जेठेके और अन्य ढूंढियोंके कहे मूजिब विर-हमान तीर्थंकरभी उसको शरण करने योग्य नहीं होवेंगे ! समझने

की तो बात यह है कि अरिहंतका शरण लेकर गया होवे तो अरिहंतके समीप पीछा आजावे,अरिहंतकी प्रतिमाका शरण लेकर गया होवे तो अरिहंतकी प्रतिमाके समीप आजावे,और भावितात्मा अणगारका शरण लेकर गया होवे तो उसके समीप आजावे, इस-वास्ते सिद्ध होता है कि जेठेने जिनप्रतिमाके निषेध करने वास्ते झूठे अर्थ करने काही व्यापार चलाया है । तथा जेठेकी अकलका नमूना देखो कि इस अधिकारमें तो बहुत ठिकाने सिद्धायतन हैं, और उनमें शाश्वती जिनप्रतिमा हैं, ऐसे कबूल करता है; और पूर्वोक्त नवमें प्रश्नोत्तरमें तो सिद्धायतन ही नहीं हैं ऐसे कहता है । अफसोस !!

२८में बोलमें "वनको भी चैत्य कहा है' ऐसे जेठमल लिखता है,उत्तर–जिस वनमें यक्षादिकका मंदिर होता है,उसी वनको सूत्रों में चैत्य कहा है,अन्य वनको सूत्रोंमें किसी ठिकाने भी चैत्य नहीं कहा है । इससे भी चैत्यशब्दका ज्ञान अर्थ नहीं होता है ॥

२९में बोलमें जेठमल जी लिखते हैं कि "यक्षको भी चैत्य कहा है" उत्तर–यह लेख भी मिथ्या है,क्योंकि सूत्रमें किसी ठिकाने भी यक्षको चैत्य नहीं कहा है । जेकर कहा होवे तो अपने मतकी स्थापना करने की इच्छा वाले पुरुषको सूत्रपाठ लिखकर उस का स्थापन करना चाहिये,परंतु जेठमलजी ने सूत्रपाठ लिखे बिना जो मनमें आया सो लिख दिया है ॥

३० तथा ३१में बोलमें दुर्मति जेठा लिखता है,कि "आरंभ के ठिकाने तो चैत्य शब्दका अर्थ प्रतिमा भी होता है" उत्तर–आहा ! कैसी द्वेषबुद्धि !! कि जिस जिस ठिकाने जिनप्रतिमाकी भक्ति, वंदना तथा स्तुति वगैरहके अधिकार सूत्रोंमें प्रत्यक्ष हैं उस

उस ठिकाने तो चैत्य शब्दका अर्थ प्रतिमा नहीं ऐसे कहता है, और आरंभके स्थानमें चैत्य अर्थात् प्रतिमा ठहराता है, यह तो निःकेवल जिनप्रतिमा प्रति द्वेष दर्शाने वास्ते ही उसकी जबान ऊपर खर्ज (खुजली) हुई होवेगी ऐसे मालूम होता है। क्योंकि जिन तीन बातोंमें चैत्यशब्दका अर्थ प्रतिमा ठहराता है उन तीनों बातोंका प्रत्युत्तर प्रथम विस्तार से लिखा गया है॥

३२में बोलमें चैत्य शब्दका अर्थ प्रतिमा है ऐसे जेठमलने मंजूर करा है। सो इस बातमें भी उसने कपट करा है। इसलिये ऐसी बातोंमें लिखान करके निकम्मा ग्रंथ वधाना अयोग्य जान कर कुछ भी नहीं लिखते हैं। पूर्वोक्त सर्व हकीकत ध्यानमें लेकर निष्पक्षपाती होकर जो विचार करेगा उसको निश्चय होजावेगा कि ढूंढिये चैत्य शब्दका अर्थ साधु और ज्ञान ठहराते हैं सो मिथ्या है॥

॥ इति ॥

(३३) जिनप्रतिमा पूजनेके फल सूत्रोंमें कहे हैं इस बाबत।

३३में प्रश्नोत्तरमें जेठमल लिखता है कि "सूत्रोंमें दश सामाचारी, तप, संयम, वेयावच्च वगैरह धर्मकरणीके तो फल कहे हैं; परंतु जिनप्रतिमाको वंदन पूजन करने का फल सूत्रोंमें नहीं कहा है" उत्तर–जेठमलका यह लिखना बिलकुल असत्य है, सूत्रोंमें जिनप्रतिमाको वंदन पूजन करनेका फल बहुत ठिकाने कहा है। तीर्थंकर भगवंतको वंदन पूजन करनेसे जिस फलकी प्राप्ति होती है उसी फलकी प्राप्ति जिनप्रतिमा के वंदन पूजनसे होती है।

क्योंकि जिनप्रतिमा जिनवर तुल्य है, तथा प्रतिमाद्वारा तीर्थंकर भगवंतकी ही पूजा होतीहै। इस तरह जिनप्रतिमाकीभक्ति करने से फलप्राप्तिकेदृष्टांतसूत्रोंमें बहुतहैं, जिनमेंसे कितनेक यहां लिखतेह?

(१) श्रीजिनप्रतिमाकी भक्तिसे श्रीशांतिनाथ जी के जीवने तीर्थंकर गोत्र बांधा, यह कथन प्रथमानुयोगमें है॥

(२) श्रीजिनप्रतिमाकी पूजा करनेसे सम्यक्त्व शुद्धहोती है, यह कथन श्रीआचारांग की निर्युक्ति में है॥

(३) "थय थूइय मंगल" अर्थात् स्थापनाकी स्तुति करने से जीव सुलभबोधी होता है। यह कथन श्रीउत्तराध्ययनसूत्रमें है॥

(४) जिनभक्ति करनेसे जीव तीर्थंकरगोत्र बांधता है। यह कथन श्रीज्ञातासूत्रमें हैं। जिनप्रतिमाका जो पूजा है सो तीर्थंकरकी ही है, और इससे वीस स्थानकमें से प्रथमस्थानकी आराधना होती है॥

(५) तीर्थंकरके नाम गोत्रके सुनने का महाफल है ऐसे श्री भगवती सूत्रमें कहा है, और प्रतिमामें तो नाम और स्थापना दोनों हैं। इसवास्ते तिसके दर्शनसे तथा पूजासे अत्यंत फल है॥

(६) जिनप्रतिमाकी पूजासे संसारका क्षय होता है, ऐसे श्री आवश्यकसूत्रमें कहा है॥

(७) सर्व लोकमें जो अरिहंतकी प्रतिमाहैं तिनका कायोत्सर्ग बोधिबीजके लाभ वास्ते साधु तथा श्रावक करे, ऐसे श्रीआवश्यक सूत्रमें कहा है॥

(८) जिनप्रतिमाके पूजनेसे मोक्ष फलकी प्राप्ति होती है, ऐसे श्रीरायपसेणीसूत्रमें कहा है॥

(९) जिनमंदिर बनवाने वाला बारमें देवलोक तक जावे, ऐसे श्रीमहानिशीथ सूत्रमें कहा है॥

(१०) श्रेणिक राजाने जिनप्रतिमाके ध्यानसे तीर्थंकरगोत्र बांधा है; यह कथन श्रीयोगशास्त्र में है ॥

(१२) श्रीगुणवर्मा महाराजाके सतारां पुत्रोंने सतरां भेदमें से एक एक प्रकारसे जिनपूजाकरी है, और उससे उसी भवमें मोक्ष गये हैं। यह अधिकार श्रीसतरां भेदी पूजाके चरित्रोंमें है, और सतरां भेदी पूजा श्रीरायपसेणी सूत्रमें कही है ॥

इत्यादि अनेक ठिकाने जिनप्रतिमा पूजनेका महाफल कहा है, इसवास्ते जेठे की लिखी सर्व बातें स्वमतिकल्पनाकी हैं ॥

जेठेने द्रौपदी की करी जिनप्रतिमाकी पूजा बाबत यहां कितनीक कुयुक्तियां लिखी हैं,परंतु तिन सर्वका प्रत्युत्तर प्रथम(१२)वें प्रश्नोत्तरमें खुलासा लिख आये हैं ॥

जेठा लिखता है कि पानी, फल, फूल, धूप, दीप वगैरहके भगवंत भोगी नहीं हैं, जेठे के सदृश श्रद्धा वाले ढूंढियों को हम पूछते हैं कि तुम भगवंतको वंदना नमस्कार करते हो तो क्या प्रभु वंदना नमस्कार के भोगी हैं ? क्या प्रभु ऐसे कहते हैं कि मुझे वंदना नमस्कार करो? जैसे भगवंत वंदना नमस्कारके भोगी नहीं हैं और आप कहते भी नहीं हैं कि तुम मुझे वंदना नमस्कार करो; तैसे ही पानी, फल,फूल, धूप, दीप वगैरहके प्रभु भोगीनहीं हैं, आप कहते नहीं हैं कि मेरीपूजा करो, परंतु उस कार्यमें तो करने वालेकी भक्तिहै,महालाभका कारण है,सम्यक्त्व की प्राप्ति होतीहै, और उससे बहुत जीव भवसमुद्रसे पार होगए हैं, ऐसे शास्त्रोंमें कहा है। इसलिये इसमें जिनेश्वरकी आज्ञा भी है ॥

॥ इति ॥

(३४) महिया शब्द का अर्थ ।

श्रीलोगस्समें "कित्तिय वंदिय महिया" ऐसा पाठ श्रीआवश्यक सूत्रका है, इनमें प्रथमके दो शब्दोंका अर्थ "कीर्त्तिताः–कीर्त्तना करी और वंदिताः–वंदनाकरी" ऐसा है अर्थात् यह दोनों शब्द भावपूजा वाची हैं, और तीसरे शब्दका अर्थ–'महियाः पुष्पादिभिः'–पुष्पादिक से पूजा करी है, अर्थात् महिया शब्द द्रव्य पूजा वाची है, टीकाकारोंने तथा प्रथम टब्बा बनाने वालोंने भी ऐसाही अर्थ लिखा है परंतु कितनीक प्रतियोंमें ढूंढियोंने सच्चा अर्थ फिराकर मनः कल्पित अर्थ लिख दिया है, उस मूजिब जेठमल भी इस प्रश्नमें 'महिया' शब्द का अर्थ "भावपूजा" ठहराता है सो मिथ्या है ॥

जेठमल फूलोंसे श्रावक पूजा करते हैं उसमें हिंसा ठहराता है सो असत्य है, क्योंकि पुष्पपूजासे तो श्रावकोंने उन पुष्पों की दया पाली है, विचारो कि माली फूलोंकी चंगेर लेकर वेचनेको बैठा है, इतनेमें कोई श्रावक आनिकले और विचारे कि पुष्पोंको वेश्या ले जावेगी तो अपनी शय्यामें बिछाके उसपर शयन करेगी, और उसमें कितनीक कदर्थना भी होगी, कोई व्यसनी ले जावेगा तो फूल के गुच्छे गजरे बनाकर सूंघेगा, हार बनाकर गलेमें डालेगा, या उनका मर्दन करेगा, कोई धनी गृहस्थी लेजावेगा तो वोभी उनका यथेच्छभोग करेगा, और स्त्रियोंके शिरमें गूंथे जावेंगे, जो अतर के व्यापारी लेजावेंगे तो चुल्हेपर चढ़ाके उनका अतर निकालेंगे तेलके व्यापारी लेजावेंगे तो फुलेल वगैरह बनानेमें उनकी बहुत विटंबना करेंगे, इत्यादिअनेक विटंबनाका संभव होनेसे प्राप्त होने वाली विटंबनाके दूर करने वास्ते और अरिहंतकी भक्तिरूप शुद्ध

भावना निमित्त वोह पुष्प श्रावक खरीद करके जिनप्रतिमाको चढ़ावे तो उससे अरिहंतदेवकी भक्ति होती है, और फूलोंकी भी दया पलती है हिंसा क्या हुई ?

जेठमल लिखता है कि "गणधरदेव सावद्य करणीमें आज्ञा न देवें" उत्तर–सावद्यकरणी किसको कहना ? और निर्वद्यकरणी किसको कहना ? इसका जेठेको और अन्य ढूंढियों को ज्ञान होवे ऐसा मालूम नहीं होता है, जिन पूजादि करणीको वे सावद्य गिनते हैं, परंतु यह उनकी मूर्खता है, क्योंकि मुनियों को आहार, विहार निहारादिक क्रियामें और श्रावकोंको जिनपूजा साधर्मिवात्सल्य प्रमुख कितनीक धर्म करणीयोंमें तीर्थंकरदेवनेभी आज्ञा दी है, और जिसमें आज्ञा होवे सो करणी सावद्य नहीं कहलाती है । इसबाबत २७में प्रश्नोत्तरमें खुलासा लिखा गया है। तथा गणधरमहाराजाओं ने भी उपदेशमें सर्व साधु श्रावकोंको अपना अपना धर्म करनेकी आज्ञा दी है। ढूंढियोंके कहे मुजिब गणधरदेव ऐसी करणीमें आज्ञा न देते होवें तो साधुको नदी उतरनेकी आज्ञा क्यों देते? वरसते वरसादमें लघुनीति वड़ीनीति परिठवनेकी आज्ञा क्यों देते? साध्वी नदीमें रुडती जाती होवे तो उसको निकाल लेनेकी साधु को आज्ञा क्यों देते ? इसी तरह कितनी ही आज्ञा दी हैं; इस वास्ते यह समझना कि जिस जिस कार्यमें उन्होंने आज्ञा दी है, हिंसा जानकर नहीं दी हैं। इसवास्ते इसबाबत जेठे मूढ़मतिका लेख बिलकुल मिथ्या सिद्ध होता है ॥

सामायिकमें साधु तथा श्रावक पूर्वोक्त महिया शब्दसे पुष्पादिक द्रव्यपूजाकी अनुमोदना करते हैं। साधुको द्रव्यपूजा करनेका

(३६) जीवदयाके निमित्त साधुके वचन बाबत

३६में प्रश्नोत्तरमें जेठमलने श्रीआचारांग सूत्रका पाठ और अर्थ फिराकर खोटा लिखकर प्रत्यक्ष उत्सूत्रकी प्ररूपणा करी है, इसवास्ते वो सूत्रपाठ यथार्थ अर्थ सहित तथा पूर्ण हकीकत सहित लिखते हैं ॥

श्रीआचारांग सूत्रके दूसरे श्रुतस्कंधमें ऐसे कहा है कि साधु ग्रामानुग्राम विहार करता जाता है, रस्ते में साधुके आगे होकर मृगांकी डार निकल गई होवे, और पीछे से उन हिरणोंके पीछे वधक (अहेड़ी) आजावे, और वो साधुको पूछे कि हे साधो ! तैंने यहां से जाते हुए मृग देखे हैं ? तब साधु जो कहेसो पाठ यह है- "जाणं वा नो जाणं वदेज्जा"-अर्थ-साधु जाणता होवे तो भी कह देवे कि मैं नहीं जानता हूं,अर्थात् मैंने नहीं देखे हैं तथा श्रीसूयगडांग सूत्रके नवमें अध्ययन में कहा है कि-"सादियं न मुसं बूया एस धम्मे वुसिमओ"-अर्थ-मृग पृच्छादि विना मृषा न बोले,यह धर्म संयमवंतका है, तथा श्रीभगवतीसूत्रके आठमें शतकके पहिले उद्देशे में लिखा है कि-"मणसच्च जोग परिणया वयमोस जोग परिणया"-अर्थ-मृग पृच्छादिकमें मनमें तो सत्य है, और वचनमें मृषा है, इन तीनों पाठों का अर्थ हड़तालसे मिटाके ढूंढकोंने मनः कल्पित औरका और ही लिख छोड़ा है,इसवास्ते ढूंढिये महामिथ्या दृष्टि अनंतसंसारी हैं, तथा जेठमल ढूंढकने जो जो सूत्रपाठ मृषावाद बोलनेके निषेध वास्ते लिखे हैं, उन सर्वमें उत्सर्ग मार्गमें मृषा बोलने का निषेध करा है,परंतु अपवादमें नहीं, अपवादमें तो मृषा बोलनेकी आज्ञा भी है,सो पाठ ऊपर लिख आए हैं ॥

जेठा मूढ़मति लिखता है कि "पांचोंही आश्रवका फल सरीखा है" तब तो जेठा प्रमुख सर्व ढूंढक जैसे कारणसे नदी उतरते हैं, मेघ वर्षतेमें लघुनीति परिठवते हैं, और स्थंडिल जाते हैं, प्रतिलेखना प्रतिक्रमण करते वायुकायकी हिंसा करते हैं, ऐसेही कारण से मैथुन भी सेवते होंगे, परिग्रह भी रखते होंगे, मूली गाजरभी खालेते होंगे, तथा जैसा ढूंढकोंका श्रद्धान है, ऐसाही इनके श्रावकोंका भी होगा, तबतो तिनके श्रावक ढूंढिये भी जैसा पाप अपनी स्त्रीसे मैथुन सेवनेसे मानते होवेंगे, वैसाही पाप अपनी माता, बहिन, बेटीसे मैथुन सेवनेसे मानते होवेंगे ? "स्त्रीत्वाविशेषात्" स्त्री पणेमें विशेष न होने से, मूर्ख जेठेका "पांचों ही आश्रवका फल सरीखा है" यह लिखना अज्ञानताका और एकांत पक्षका है, क्योंकि वह जिनमार्गकी स्याद्वादशैलिको समझाही नहीं है

जेठा लिखता है, कि "तीर्थंकर भी झूठ बोलते हैं ऐसा जैन धर्मी कहते है" उत्तर–यह लिखना बिलकुल असत्य है, क्योंकि तीर्थंकर असत्य बोले ऐसा कोई भी जैनधर्मी नहीं कहता है, तीर्थंकर कभी भी असत्य न बोले ऐसा निश्चय है, तोभी इसतरह जेठा तीर्थंकर भगवंतके वास्ते भी कलंकित वचन लिखिता है तो इससे यही निश्चय होता है कि वह महामिथ्यादृष्टि था ॥

श्रीपन्नवणासूत्रमें ग्यारमें पदे–सत्य, असत्य, सत्यामृषा और असत्यामृषा यह चारों भाषा उपयोगयुक्त बोलतेको आराधक कहा है इस बाबत जेठा लिखता है कि "शासनका उड्डाह होता होवे, चौथा आश्रव सेव्या होवे तो झूठ बोले ऐसे जैनधर्मी कहते हैं" उत्तर–यह लेख असत्य है, क्योंकि शासनका उड्डाह होता होवे तब तो मुनि महाराजा भी असत्य बोले, ऐसा पन्नवणा सूत्र के

पूर्वोक्त पाठकी टीकामें खुलासा कहा है,परंतु 'चौथा आश्रव सेव्या होवे तो झूठ बोले' इस कथनरूप खोटा कलंक जेठा निन्हव जैन धर्मियों के सिर पर चढ़ाता है सो असत्य है, क्योंकि इसतरह हम नहीं कहते हैं। परंतु कदापि जेठेको ऐसा प्रसंग आबनाहोवे और उससे ऐसा लिखा गया होवे तो वो जाने और उसके कर्म ?

इस प्रश्नोत्तरके अंतमें जेठा लिखता है कि "सम्यग् दृष्टिको चार भाषा बोलनेकी भगवंतकी आज्ञा नहीं है"और वह आपही समकितसार(शल्य)के पृष्ठ१६५की तीसरी पंक्तिमें"सम्यग् दृष्टि चार भाषा बोलते आराधक हे ऐसा पन्नवणाजीके ग्यारमें पदमें कहा है" ऐसे लिखता है। इसतरह एक दूसरेसे विरुद्ध वचन जेठेने वारंवार लिखे हैं। इसलिये मालूम होता है कि जेठे ने नशे में ऐसे परस्पर विरोधी वचन लिखे हैं॥

श्रीपन्नवणाजीका पूर्वोक्त सूत्रपाठ साधु आश्री है, ऐसे टीका कारोंने कहा है, जब साधुको उपयोगयुक्त चार भाषा बोलते आराधक कहा, तब सम्यग्दृष्टि श्रावक उसी तरह चारभाषा बोलते आराधक होवें उसमें क्या आश्चर्य है ? इसवास्ते जेठेकी कल्पना मिथ्या है॥ इति॥

(३७)आज्ञा यह धर्म है इस बाबत।

सैंतीसमें प्रश्नोत्तरके प्रारंभ में ही जेठेने लिखाहै कि "आज्ञा यह धर्म, दया यह नहीं ऐसे कहते है" यह मिथ्या है, क्योंकि दया यह धर्म नहीं ऐसा कोई भी जैनधर्मी नहीं कहता है,

परंतु जिनाज्ञा युक्त जो दया है उसमें ही धर्म है, ऐसा शास्त्रकार लिखते हैं ॥

जेठा लिखता है कि "दयामें ही धर्म है, और भगवंतकी आज्ञा भी दयामें ही है, हिंसामें नहीं" उत्तर–जेकर एकांत दयाही में धर्म है तो कितनेक अभव्यजीव अनंतीवार तीनकरण तीनयोग से दया पालके इक्कीसमें देवलोक तक उत्पन्न हुए परंतु मिथ्या दृष्टि क्यों रहे? और जमालिने शुद्ध रीति दयापाला तोभी निन्हव क्यों कहाया ? और संसारमें पर्यटन क्यों किया ? इसवास्ते ढूंढियो ! समझो कि अभव्य तथा निन्हवोंने दया तो पूरी पाली परंतु भगवंतकी आज्ञा नहीं आराधी इससे उनकी अनंतसंसार रुलने की गति हुई इसवास्ते आज्ञाहीमें धर्म है ऐसे समझना ॥

(१) जेकर भगवंतकी आज्ञा दयाहीमें है तो श्रीआचारांग सूत्रके द्वितीय श्रुतस्कंधके ईर्याध्ययनमें लिखा है कि साधु ग्रामानुग्राम विहार करता रस्तेमें नदी आजावे तब एक पग जलमें और एक पग थल में करता हुआ उतरे सो पाठ यह है :–

"भिक्खु गामाणुगामं दूइज्जमाणे अंतरा से नई आगच्छेज्ज एगं पायं जले किच्चा एगं पायं थले किच्चा एवण्हं संतरइ"॥

यहां भगवंतने हिंसा करनेकी आज्ञा क्यों दीनी ?

(२) श्रीठाणांगसूत्रमें पांचमें ठाणेमें कहा है । यतः–

णिग्गंथे णिग्गंथिं सेयंसिवा पंकंसिवा पणगंसिवा उदगंसिवा उक्कस्समाणिं वा

उवुज्जमाणिं वा गिरहमाणी अवलंबमाणे णातिक्कमति ॥

अर्थ–काठा चीकड़, पतला चीकड़ पंचवरणी फूलन और पाणी इनमें साध्वी खूंच जावे, अथवा पाणीमें बही जाती होवे, उसको साधु काढ लेवे तो भगवंतकी आज्ञा न अतिक्रमें ॥

इस पाठमें भगवंतने हिंसाकी आज्ञा क्यों दी ?

(३) ढूंढिये भी धर्मानुष्ठानकी क्रिया करते हैं, मघ वर्षतेमें स्थंडिल जाते हैं, शिष्योंके केशोंका लोंच करते हैं, आहार विहार निहारादिक कार्य करते हैं, इन सर्व कार्योंमें जीव विराधना होतीहै, और इनसर्व कार्योंमें भगवंतने आज्ञा दी है। परंतु जेठा तथा अन्य ढूंढियों को आज्ञा, अनाज्ञा, दया, हिंसा, धर्म, अधर्मकी कुछ भी खबर नहीं है; फकत मुखसे दया दया पुकारनी जानते हैं, इस वास्ते हम पूछते हैं कि पूर्वोक्त कार्य जिनमें हिंसाहोने का संभव है ढूंढिये क्यों करते हैं ?

(४) धर्मरुचि अणगारने जिनाज्ञामें धर्म जानके और निरवद्य स्थंडिल का अभाव देखके कड़वे तूंबे का आहार किया है, इस बाबत जेठेने जो लिखा है सो मिथ्या है, धर्मरुचि अणगारने तो उस कार्यके करनेसे तीर्थंकर भगवंतकी तथा गुरुमहाराजकी आज्ञा आराधी है, और इससेही सर्वार्थसिद्ध विमानमें गयाहै ॥

(५) श्रीआचारांगसूत्रके पांचमें अध्ययनमें कहा है ॥ यतः–

अणाणाए एगे सोवट्ठाणे आणाए एगे निरुवट्ठाणे एवं ते मा होउ ॥

अर्थ-जिनाज्ञासे बाहिर उद्यम,और जिनाज्ञामें आलस,यह दोनों ही कर्मबंधके कारण हैं, हे शिष्य! यह दोनोंही तुझको न होवें। इस पाठसे जो मूढ़मति जिनाज्ञासे बाहिर धर्म मानते हैं,वो महामिथ्या दृष्टि हैं, ऐसे सिद्ध होता है॥

(६) जेठा लिखताहै कि "साधु नदी उतरते हैं सोतो अशक्य परिहार है" यह लिखना उसका स्वमतिकल्पनाका है, क्योंकि सूत्रकारने तो किसी ठिकाने भी अशक्य परिहार नहीं कहा है; नदी उतरनी सो तो विधिमार्ग है, इसवास्ते जेठे का लिखना स्वयमेव मिथ्या सिद्ध होता है॥

(७) जेठा लिखता है कि "साधु नदी न उतरे तो पश्चात्ताप नहीं करते हैं, और जैनधर्मी श्रावक तो जिनपूजा न होवे तो पश्चात्ताप करते हैं" उत्तर-जैसे किसी साधुको रोगादि कारणसे एक क्षेत्रमें ज्यादह दिन रहना पड़ता है तो उसके दिलमें मेरे से विहार नहीं हो सका, जुदे जुदे क्षेत्रोंमें विचरके भव्यजीवोंको उपदेश नहीं दिया गया, ऐसा पश्चात्ताप होता है;परंतु विहार करते हिंसा होती है सो न हुई उसका कुछ पश्चात्ताप नहीं होता है। तैसे ही श्रावकों को भी जिनभक्ति न होवे तो पश्चात्ताप होता है, परंतु स्नानादि न होनेका पश्चात्ताप नहीं होता है, इसवास्ते जेठेकी कुयुक्ति मिथ्या है॥ इति॥

(३८) पूजा सो दयाहै इस बाबत।

३८ में प्रश्नोत्तरमें पूजा शब्द दयावाची है, और जिनपूजा अनुबंधे दयारूपही है, इसका निषेध करने वास्ते जेठेने कितनीक कुयुक्तियां लिखी हैं सो मिथ्या हैं, क्योंकि जिनराजकी

सो जैनमुनि मानने, मंगल सो धर्म गिनना, ओच्छव सो धर्मके अठाई महोत्सवादि महोत्सव समझने; परंतु इस बाबत निकम्मी कुतर्के नहींकरनी, जेकर पूजामें हिंसा होवे और पूजा ऐसा हिंसाका नाम होवे तो उसी सूत्रमें हिंसाके नाम हैं, उनमें पूजा ऐसा शब्द क्यों नहीं है? सो आंख खोलकर देखना चाहिये ॥

श्रीमहानिशीथसूत्रका जो पाठ नवानगरके बेअकल ढूंढकों की तर्फसे आया हुआ था समकितसार (शल्य) के छपानेवाले बुद्धिहीन नेमचंद कोठारीने जैसा था वैसाही इस प्रश्नोत्तरके अंतमें पृष्ठ १६९ में लिखा है, परंतु उसमें इतनी विचार भी नहीं करी है कि यह पाठ शुद्ध है या अशुद्ध ? खरा है कि खोटा ? और भावार्थ इसका क्या है? प्रथम तो वोह पाठही महा अशुद्ध है, और जो अर्थ लिखा है सो भी खोटा लिखा है, तथा उसका भावार्थ तो साधुने द्रव्यपूजा नहीं करनी ऐसा है, परंतु सो तो उसकी समझ में बिलकुल आयाही नही है; इसीवास्ते उसने यह सूत्रपाठ श्रावकके संबंधमें लिख मारा है ॥ जब ढूंढिये श्रीमहानिशीथसूत्र को मानते नहीं हैं तो उसने पूर्वोक्त सूत्रपाठ क्यों लिखा है ? जेकर मानते हैं तो इसी सूत्रके तीसरे अध्ययनमें कहा है कि "जिनमंदिर बनवाने वाले श्रावक यावत् बारमें देवलोक जावें" यह पाठ क्यों नहीं लिखा है ? इसवास्ते निश्चय होता है कि ढूंढियोंने फकत भद्रिक जीवोंके फंसाने वास्ते समकितसार (शल्य) पोथीरूप जाल गूंथाहै, परंतु उस जालमें न फंसने वास्ते और फंसे हुएके उद्धार वास्ते हमने यह उद्यम कियाहै, सो वांचकर यदि ढूंढिकपक्षी, निष्पक्ष न्यायसे विचार करेंगे तो उनकोभी सत्यमार्गकी पिछान होजावेगी।

॥ इति ॥

(३९)प्रवचनके प्रत्यनीकको शिक्षा करने बाबत

"जैनधर्मी कहतेहैं कि प्रवचनके प्रत्यनीकको हननेमें दोषनहीं" ऐसा ३९में प्रश्नोत्तरमें मूढ़मति जेठेने लिखाहै, परंतु हम इस तरह एकांत नहीं कहते हैं इसवास्ते जेठेका लिखना मिथ्या है, जैनशास्त्रोंमें उत्सर्गमार्गमें तो किसी जीवको हनना नहीं ऐसे कहा है, और अपवाद मार्गमें द्रव्य,क्षेत्र, काल, भाव देखके महालब्धिवंत विष्नुकुमारकीतरह शिक्षाभी करनी पड़जाती है;क्योंकि जैन शास्त्रोंमें जिनशासन के उच्छेद करनेवालेको शिक्षा देनी लिखीहै श्रीदशाश्रुतस्कंध सूत्रके चौथेउद्देशेमें कहा है कि "अवण्णवाइणं पडिहणित्ता भवइ" जब ढूंढिये प्रवचनके प्रत्यनीकको भी शिक्षा नहीं करनी ऐसा कहकर दयावान् बनना चाहते हैं तो ढूंढिये साधु रेच(जुलाब)लेकरहजारां कृमियोंको अपने शरीरके सुखवास्ते मारदेते हैं तो उस वक्त दया कहां चली जाती है ?

जेठने श्री निशीथचूर्णिका तीन सिंहके मरनेका अधिकार लिखा है परंतु उस मुनिने सिंहको मारने के भावसे लाठी नहीं मारी थी, उसने तो सिंहको हटाने वास्ते यष्टिप्रहार कियाथा, इसतरह करते हुए यदि सिंह मरगये तो उसमें मुनि क्या करे ? और गुरुमहाराजानेभी सिंहको जानसे मारनेका नहीं कहाथा, उन्होंने कहा था कि जो सहजमें न हटे तो लाठी से हटादेना; इसतरह चूर्णिमें खुलासा कथन है तथापि जेठे सरीखे ढूंढिये कुयुक्तियां करके तथा झूठे लेख लिखके सत्यधर्मकी निंदा करते हैं सो उनकी मूर्खता है ॥

इसकी पुष्टि वास्ते जेठेने,गोशालेके दो साधु जालनेका दृष्टांत लिखा है, परंत सो मिलता नहीं है, क्योंकि उन मुनियोंने तो काल

किया था,और पूर्वोक्त दृष्टांतमें ऐसे नहीं था, तथा पूर्वोक्त दृष्टांत में साधुने गुरुमहाराजाकी आज्ञासे यष्ठिप्रहार किया है, और गोशालेकी बाबत प्रभुने आज्ञा नहीं दी है, इसवास्ते गोशालेके शिक्षा करनेका दृष्टांत पूर्वोक्त दृष्टांत के साथ नहीं मिलता है ॥

फिर जेठेने गजसुकमालका दृष्टांत दिया है परंतु जब गजसुकुमाल काल करगयातोपीछे उसने उपसर्ग करने वालेका निवारणही क्या करना था ?अगर कृष्ण महाराजाको पहले मालूम होताकि सोमिल इसतरह उपसर्ग करेगा तो जरूर उसका निवारण करता, तथा गजसुकुमालके काल करने पीछे कृष्णजीके हृदयमें उसको शिक्षा करनेका भाव था, परंतु उपसर्ग करने वाले को तो स्वयमेव शिक्षाहो चुकीथी,क्योंकि उस सोमिलने कृष्णजीको देखतेही काल करा है,तो भी देखो कि कृष्णजीने उसके मृतक (मुरदे) को जमीन ऊपर घसीटा है, और उसकी बहुत निंदा करी है और उस मृतक को जितनी भूमिपर घसीटा उतनी जमीन उस महादुष्टके स्पर्शसे अशुद्ध होई मानके उसपर पाणी छिडकाया है ऐसा श्रीअंतगडदशांग सूत्रमें कहाहै,इसवास्ते विचार करोकि मृत्यु हुए बाद भी इस तरहकी विटंबना करी है तो जीता होता तो कृष्णजी उसकी कितनी विटंबना करते ! इसवास्ते प्रवचनके प्रत्यनीकको शिक्षा करनी शास्त्रोक्तरीतिसे सिद्ध है विशेष करके तीसमें प्रश्नोत्तरमें लिखाहै ॥

॥ इति ॥

(४०) देवगुरुकी यथायोग्य भक्ति करने बाबत

चालीसवें प्रश्नोत्तरमें जेठा लिखता है कि "जैनधर्मी गुरु महाव्रती और देव अव्रती मानते हैं" उत्तर–यह लेख लिखके

जेठेने जैनधर्मियोंको झूठा कलंक दीया है, क्योंकि ऐसी श्रद्धा किसी भी जैनीकी नहीं है जेठा इस बातमें भक्तिकी भिन्नताको कारण बताता है परंतु जैनी जिसरीतिसे जिसकी भक्ति करनी उचित है उसरीतिसे उसकी भक्ति करते हैं,देवकी भक्ति जल,कुसुम से करनी उचित है, और गुरुकी भक्ति बंदना नमस्कारसे करनी उचित है, सो उसीरीतिसे श्रावकजन करते हैं।

अक्षकी स्थापना का निषेध करने वास्ते जेठेने अक्षको हाड लिखके स्थापनाचार्यकी अवज्ञा,निंदा, तथा आशातनाकरी है, सो उसकी मूर्खता है; क्योंकि आवश्यक करने समय अक्षके स्थापनाचार्यकी स्थापना करनी श्रीअनुयोगद्वारसूत्रके मूल पाठ में कही है कि "अक्खेवा" इत्यादि "ठवण ठविज्जइ" अर्थात् अक्षादिकी स्थापना स्थापनी; सो उस मूजिब अक्षकी स्थापना करते हैं, तथा श्री विशेषावश्यक सूत्रमें लिखा है कि "गुरु विरहम्मिय ठवणा" अर्थात् गुरु प्रत्यक्ष न होवे तो गुरुकी स्थापना करनी और तिसको द्वादशावर्त वंदना करनी, जेठेने स्थापनाचार्यको हाड कह कर अशातना करी है, हम पूछते भी है कि ढूंढिये अपने गुरुको वंदना नमस्कार करते हैं उसका शरीर तो हाड, मास, रुधिर,तथा विष्टा से भरा हुआ होता है तो उसको वंदना नमस्कार क्यों करते हैं ? इसवास्ते प्यारे ढूंढियो ! विचार करो, और ऐसे कुमतियोंके जालमें फंसना छोड़के सत्यमार्गको अंगीकार करो ॥

ढूंढिये शास्त्रोक्त विधि अनुसार स्थानाचार्य स्थापे विना प्रतिक्रमणादि क्रिया करते हैं उनको हम पूछते हैं कि जब उनको प्रत्यक्ष गुरु का विरह होता है, तब वोह पडिक्कमणेमें वंदना किसको करते हैं ? तथा "अहोकायं काय संफासं" इस पाठसे गुरुकी अधोकाया

चरणरूपको फरसना है, सो जब गुरुही नहीं तो अधोकाया कहांसे आई ? तथा जब गुरु नहीं तो ढूंढिये वंदना करते हैं। तब किसके साथ मस्तकपात करते हैं ? और गुरुके अवग्रहसे बाहिर निकलते हुए "आवश्यही" कहते हैं तो जब गुरुही नहीं तो अवग्रह कैसे होवे ? इससे सिद्ध होता है कि स्थापनाचार्य विना जितनी क्रिया ढूंढिये श्रावक तथा साधु करते हैं, सो सर्व शास्त्र विरुद्ध और निष्फल है।

श्रावकजन द्रव्य और भाव दोनों पूजा करते हैं, उनमें जिनेश्वर भगवंतकी जल, चंदन, कुसुम, धूप, दीप, अक्षत, फल और नैवेद्य प्रमुखसे द्रव्यपूजा जिस रीतिसे करते हैं उसीरीतिसे स्थापनाचार्यकी भी जल, चंदन, वरास, वासक्षेप प्रमुखसे पूजा करते हैं; इसवास्ते जेठे ढूंढक का लिखना कि "स्थापनाचार्यको जल, चंदन धूप, दीप कुछभी नही करते हैं" सो झूठहै, और साधु मुनिराज जैसे अरिहंत भगवंतकी भावपूजा ही करतेहैं, तैसे स्थापनाचार्यकी भी भावपूजाही करते हैं; इसवास्ते जेठे की करी कुयुक्ति वृथा है।

इस प्रश्नोत्तरके अंतमें जेठा लिखता है "सचित्तका संघट्टा देव जो तीर्थंकर उनको कैसे घटेगा ?" उत्तर–जो भावतीर्थंकर हैं उनको सचितका संघट्टा नहीं है और स्थापनातीर्थंकरको सचित संघट्टा कुछभी बाधक नहीं है, ऐसे प्रश्नोंके लिखनेसे सिद्ध होता है कि जेठे को चार निक्षेपेका ज्ञान बिलकुल नहीं था॥ इति॥

(४१) जिनप्रतिमा जिनसरीखी है इस बाबत।

इकतालीसवें प्रश्नोत्तरमें जेठे हीनपुण्यीने "जिनप्रतिमा जिन

सरीखी नहीं" ऐसे सिद्ध करने वास्ते कितनीक कुयुक्तियां लिखी है परंतु सो सर्व मिथ्या हैं; क्योंकिसूत्रोंमें बहुत ठिकाने जिनप्रतिमा को जिनसरीखी कहाहै,जहां२भाव तीर्थंकरको वंदना नमस्कारकरने वास्ते आनेका अधिकार है वहां वहां "देवयं चेइयं पज्जुवासामि" अर्थात् देव संबंधी चैत्य जो जिनप्रतिमा उसकी तरह पर्युपासना करूंगा ऐसे कहा है, तथा श्रीरायपसेणी सूत्रमें कहाहै "धूवंदाऊण जिणवराणं" यहपाठ सूर्याभ देवताने जिनप्रतिमा पूजी तब धूपकरा उस वक्तका है, और इसमें कहा है कि जिनेश्वरको धूप करा और इसपाठमें जिनप्रतिमाको जिनवर कहा इससे तथा पूर्वोक्त दृष्टांतसे जिनप्रतिमा जिनसरीखी सिद्ध होती है, इसवास्ते इसबातके निषेधनेको जेठे मूढ़मतिने जो आल जाल लिखा है सो सर्व झूठ और स्वकपोलकल्पित है।

जेठा लिखता है कि "प्रभु जल, पुष्प, धूप, दीप, वस्त्र, भूषण वगैरहके भोगी नहींथे और तुम भोगी ठहराते हो" उत्तर–यह लेख अज्ञानताकाहै,क्योंकि प्रभु गृहस्थावस्थामेंतो सर्व वस्तुके भोगी थे,इस मूजिब श्रावकवर्ग जन्मावस्थाका अरोप करकेस्नान कराते हैं, पुष्पचढ़ाते हैं,यौवनावस्था का आरोपके अलंकारपहनाते हैं,और दीक्षावस्थाका आरोप करके नमस्कार करतेहैं, इसवास्ते अरिहंतदेव भोगाअवस्थामेंभोगी हैं,और त्यागीअवस्थामें त्यागी हैं भोगी नहीं, परंतु भोगी तथा त्यागी दोनों अवस्थाओंमें तीर्थंकरपना तो है ही,और उससे तीर्थंकरदेवगर्भसे लेकर निर्वाण पर्यंत पूजनीक ही हैं, इस वास्ते जेठेके लिखे दूषण जिनप्रतिमाको नहीं लगते हैं तथा ढूंढियोंको हम पूछते हैं कि समवसरणमें जब तीर्थंकर भगवंत विराजते थे तब रत्न जड़ित सिंहासन ऊपर बैठते थे, चामर होते थे,

सिर ऊपर तीन छत्रथे, इत्यादि कितनीक संपदा थी, तो वो अवस्था त्यागीकी हैं कि भोगीकी ? जो त्यागीहै तो चमरादि क्यों ? और भोगी हैं तो त्यागी क्यों कहते हो ? इसमें समझनेका तो यही है कि भगवंत तो त्यागी ही हैं, परंतु भक्तिभावसे चामरादि करते हैं, ऐसे ही जिनप्रतिमाकी भी भक्तजन पूजा करते हैं तो उसको देखे के ढूंढियोंके हृदयमें त्यागी भोगीका शूल क्यों उठता ? जेठा लिखता है कि "भगवंतको त्यागी हुई वस्तुका तुम भोग कराते हो तो उसमें पाप लगताहै" तथा इसबाबत अनाथी मुनिका दृष्टांत लिखा है, परंतु उसदृष्टांतका जिनप्रतिमाके साथ कुछभी संबंध नहीं है, क्योंकि जिनप्रतिमा है सो स्थापनातीर्थंकर है उसको भोगने न भोगने से कुछ भी नहीं हैं, फक्त करने वालेकी भक्ति है, त्यागी हुई वस्तु नहीं भोगनी सो तो भावतीर्थंकर आश्री बात है, इसवास्ते यह बात वहां लिखनेकी कुछभी जरूरत नहीं थी, तोभी जेठेने लिखी है सो वृथा है, वस्त्र बाबत जेठेने इस प्रश्नोत्तरमें फिर लिखा है, सो इसका प्रत्युत्तर द्रौपदीके अधिकारमें लिखा गया है इसवास्ते यहां नहीं लिखते हैं।

जेठेने लिखा है कि "जिनप्रतिमा जिन सरीखी है, तो भरत ऐरावतमें पांचवें आरे तीर्थंकरका विरह क्यों कहाहै ?" उत्तर यह लेखभी जेठेकी बेसमझीका है, क्योंकि विरह जो कहाता है सो भावतीर्थंकर आश्री है जेठा ढूंढक लिखता है कि "एक क्षेत्रमें दो इकट्ठे नहीं होवें, होवें तो अच्छेरा कहाजावे, और तुमतो बहुत तीर्थंकरोंकी प्रतिमा एकत्र करते हो" उत्तर–मूर्ख जेठेको इतनी भी समझ नहींथी कि दो तीर्थंकर एकट्ठे नहीं होनेकी बात तो भाव तीर्थंकर आश्री है और हम जो जिन प्रतिमा एकट्ठी स्थापते हैं सो

स्थापना तीर्थंकर है, जैसे सर्व तीर्थंकर निर्वाणपदको पाकर सिद्ध होते हैं तब वे द्रव्य तीर्थंकर होए हुए अनंते इकट्ठे होते हैं तैसे स्थापनातीर्थंकर भी इकट्ठे स्थापे जाते हैं, तथा सिद्धायतनका विस्तारसे अधिकार श्रीजावाभिगम सूत्रमें कहा है, वहां भी एक सिद्धायतनमें एकसौ आठ जिनप्रतिमा प्रकटतया कही हैं,इसवास्ते जेठेका लिखा यह प्रश्न बिलकुल असत्य है, जेकर स्थापनासे भी इकट्ठा होना न होवेतो जंबूद्वीपमें(२६९) पर्वत न्यारे न्यारे(जुदे जुदे) ठिकाने हैं,उन सबको मांडलेमें एकत्र करकेअरेढूंढियो! पोथीमें क्यों बांधी फिरते हो ? तथा वो चित्राम लोगोंको दिखाते हो, समझाते हो, और लोग समझते भी हैं, तो वे पर्वत जुदे २ हैं और शाश्वती वस्तुओंके एकत्र होनेका अभावहै तो तुम इकट्ठे क्यों करते हो सो बताओ ? जेठा लिखता है कि "तीर्थंकर यहां विचरे वहां मरी और स्वचक्र परचक्रका भय न होवे तो जिनप्रतिमाके होते हुए भय क्यों होता है ?"–इसतरहके कुवचनों करके जेठा और अन्य ढूंढिये जिनप्रतिमाका महत्व घटाना चाहते हैं, परंतु मूर्ख ढूंढिये इतना भी नहीं समझते हैं कि वे अतिशय तो सिद्धांतकारने भावतीर्थंकरके कहेहैं, और प्रतिमातो स्थापनातीर्थंकर है; इसवास्ते इस बाबत तुमारी कोईभी कुयुक्ति चल नहीं सक्ती है ॥इति॥

४२–ढूंढक मतिका गोशालामती तथा मुसलमानोंके साथ मुकाबला।

४२में प्रश्नोत्तरमें जेठे निन्हवने जैन संवेगी मुनियों को गोशालेसमान ठहराने वास्ते(११)बोल लिखे हैं परंतु उनमेंसे एक

बोल भी जैन संवेगी मुनियोंको नहीं लगाता है, वे सर्व बोल तो ढूंढियोंके ऊपर लगते ह और इससे वे गोशालामति समान हैं ऐसे निश्चय होता है ।

(१) पहिले बोलमें जेठेने मूर्खवत् असंबद्ध प्रलाप करा है, परंतु उसका तात्पर्य कुछ लिखा नहीं है, इसवास्ते उसके प्रत्युत्तर लिखनेकी कुछ जरूरत नहीं है ।

(२) दूसरे बोलमें जेठा लिखता है कि "ढूंढियोंको जैनमुनि तथा श्रावक सताते हैं" उत्तर—जेसे सूर्यको देखके उल्लूकी आंखें बंद हो जाती हैं,और उसके मनको दुःख उत्पन्न होता है तैसेही शुद्ध साधुको देखके गोशालामति समान ढूंढियोंके नेत्र मिलजाते हैं, और उनके हृदयमें स्वमेव संताप उत्पन्नहोता है, मुनिमहाराजा किसीको संताप करनेका नहीं इच्छते हैं,परंतु सत्यके आगे असत्य का स्वयमेव नाश होजाता है ।

(३) तीसरे बोलमें "जैनधर्मियोंने नये ग्रंथ बनाये हैं" ऐसे जेठा लिखता है, परंतु जो जो ग्रंथ बने हैं, वो सर्व ग्रंथ गणधर महाराजा,पूर्वधारी तथा पूर्वाचार्योंकी निश्रायसे बने हैं,और उनमें कोई भी बात शास्त्रविरुद्ध नहीं है; परंतु ढूंढियोंको ग्रंथ वांचने ही नहीं आते हैं तो नये बनाने की शक्ति कहांसे लावें ? फकत ग्रंथकर्त्ताओंकी कीर्ति सहन नहीं होनेसे जेठेने इसतरह लिखके पूर्वाचार्यों की अवज्ञा करी है ।

(४) चौथेबोलमें "मंत्र जंत्र ज्योतिष वैदक करके अजीविका करते हो" ऐसे जेठेने लिखा है, ओ असत्य है क्योंकि संवेगी मुनि तो मंत्र जंत्रादि करते ही नहीं है ढूंढियेसाधु मंत्र,जंत्र,ज्योतिष,वैद्यक

वगैरह करते हैं नाम लेकर विस्तारसे प्रथम प्रश्नोत्तरमें लिखा गया है इसवास्ते ढूंढियोंका मत आजीविकमत ठहरता है।

(५) पांचवें बोलमें "१४४४-बौद्धोंको जलादिया" ऐसे जेठा लिखता है, परंतु किसीभी जैनमुनिने ऐसा कार्य नहीं करा है और किसी ग्रंथमें जलादिये ऐसे भी नहीं लिखा है, इसवास्ते जेठेका लिखना झूठ है, जेठा इसतरह गोशालेके साथ जैनमतिकी साहश्यता करनी चाहता है, परंतु सो नहीं होसक्ता है, किंतु ढूंढिये वासी सड़ा हुआ आचार, विदल वगैरह अभक्ष्य वस्तु खाते हैं,जिससे बेइंद्रिय जीवोंका भक्षण करतेहैं इससे इनकीतो गोशाला मतिके साथ सादृश्यता होसक्ती है॥

(६) छठे बोलमें "गोशालेको दाह ज्वर हुआ तब मिट्टी पाणी छिटकाके साता मानी" ऐसे जेठा लिखता है। उत्तर-यह दृष्टांत जैनमुनियोंको नहीं लगता है, परंतु ढूंढियों से संबंध रखता है। क्योंकि ढूंढिये लघुनीति (पिशाब) से गुदा प्रमुख धोते हैं और खुशीयां मनाते हैं *॥

(७) सातवें बोलमें जेठा लिखताहै कि गोशालेने अपना नाम तीर्थंकर ठहराया,अर्थात् तेईस होगये और चौबीसवां मैं ऐसे कह इसीतरह जैनधर्मीभी गौतम, सुधर्मा, जंबू वगैरह अनुक्रमसे पाट बताते हैं" उत्तर-जेठेका यह लेखस्वयमेव स्खलनाको प्राप्त होता है, क्योंकि गोशाला तो खुद वीर परमात्माका निषेध करके तीर्थंकर बन बैठा था, और हम तो अनुक्रमसे परपराय पाटानुपाट

---

* यह तो प्रकट ही है कि जब रात्रिको पानी नहीं रखते तो कभी बड़ी नीति (पाखाना) हो तो जरूर पिशाब से ही गुदा धोकर अशुचि टालते होंगे। बलिहार इस शुचिके।

वताके शिष्यपणा धारण करते हैं, इसवास्ते हमारी बाततो प्रत्यक्ष सत्य है; परंतु ढूंढकमती जिनाज्ञा रहित नवीन पंथके निकालनेसे गोशाले सदृश सिद्ध होते हैं ॥

(८) आठमें बोलमें जेठा लिखता है कि "गोशालेने मरने समय कहा कि मेरा मरणोत्सव करीयो और मुझे शिबिकामें रखकर निकालियो, इसीतरह जैनमुनि भी कहते हैं" उत्तर-जेठेका यह लिखना बिलकुल झूठ है, क्योंकि जैनमुनि ऐसा कभी भी नहीं कहते हैं; परंतु ढूंढियेसाधु मर जाते हैं तब इसतरह करनेका कह जाते होंगे कि मेरा विमान बनाके मुझे निकालीयो, पांच इंडे रखीयो इसवास्तेही जेठे आदि ढूंढियोंको इसतरह लिखनेका याद आगया होगा ऐसे मालूम होता है, इंद्रने जिस तरह प्रभुका निर्वाण महोत्सव करा है जैनमति श्रावक तो उसीतरह अपने गुरुकी भक्तिके निमित्त स्वेच्छासे यथाशक्ति निर्वाणमहोत्सव करते हैं ॥

(९) नवमें बोलमें स्थापना असत्य ठहराने वास्ते जेठेने कुयुक्ति लिखी है, परंतु श्रीठाणांगसूत्र वगैरहमें स्थापना सत्य कही है। तोभी सूत्रोंके कथनको ढूंढिये उत्थापते हैं इसलिये वह गोशालेमती समान हैं ऐसे मालूम होता है ॥

(१०) दशमें बोलमें जेठा लिखता है कि "क्रिया करने से मुक्ति नहीं मिलती है, भवस्थिति पकेगी तब मुक्ति मिलेगी, ऐसे जैनधर्मी कहते हैं" यह लेख मिथ्या है, क्योंकि जैनमुनि इसतरह नहीं कहते है। जैनमुनियोंका कहना तो जैनसिद्धांतानुसार यह है कि ज्ञानसहित क्रिया करनेसे मोक्ष प्राप्त होता है, परन्तु जो एकांत खोटी क्रियासेही मोक्षमानते हैं वो जैनसिद्धांतकी स्याद्वाद

शैलिसे विपरीत प्ररूपणा करने वाले हैं, और इसीवास्ते ढूंढिये गोशालामती सदृश सिद्ध होते हैं ॥

(११) ग्यारहमें बोलमें जेठा लिखता है कि "जैनधर्मी जिन-प्रतिमाको जिनवर सरीखी मानते हैं इससे ऐसे सिद्ध होता है कि वे अजिनको जिनतरीके मानते हैं" उत्तर–पुण्यहीन जेठेका यह लेख महामूर्खता युक्तहै,क्योंकि सूत्रमें जिनप्रतिमा जिनवर सरीखी कही है, और हम प्रथम इसबाबत विस्तारसे लिख आए हैं; जब ढूंढिये देवीदेवलाकी मूर्त्तियोंको तथा भूतप्रेतको मानते हैं,तो मालूम होता है कि फकत जिनप्रतिमाके साथ ही द्वेष रखते हैं,इससे वे तो गोशालामतिके शरीक सिद्ध होते हैं ॥

ऊपर मूजिब जेठेके लिखे (११) बोबोंके प्रत्युत्तर हैं । अब ढूंढिये जरूरही गोशाले समान हैं यह दर्शाने वास्ते यहां और (११) बोल लिखते हैं ॥

(१) जैसे गोशाला भगवंतका निंदक था,तैसे ढूंढियेभी जिन प्रतिमाके निंदक हैं ॥

(२) जैसे गोशाला जिनवाणीका निंदक था, तैसे ढूंढियेभी जिनशास्त्रोंके निंदक हैं ॥

(३) जैसे गोशाला चतुर्विधसंघका निंदक था, तैसे ढूंढिये भी जैनसंघके निंदक हैं ॥

(४) जैसे गोशाला कुलिंगी था, तैसे ढूंढिये भी कुलिंगी हैं। क्योंकि इनका वेष जैनशास्त्रोंसे विपरीत है ॥

(५) जैसे गोशाला झूठा तीर्थंकर बन बैठा था,तैसे ढूंढियेभी खोटे साधु बन बैठे हैं ॥

(६) जैसे गोशालका पंथ सन्मूर्च्छिम था वैसे ढूंढियोंका पंथ

भी सन्मूर्च्छिम हैं क्योंकि इनकी परंपराय शुद्ध जैनमुनियोंके साथ नहीं मिलती है ॥

(७) जैसे गोशाला स्वकपोलकल्पित वचन बोलता था, तैसे ढूंढिये भी स्वकपोलकल्पित शास्त्रार्थ करते हैं ॥

(८) जैसे गोशाला धूर्त्त था, तैसे ढूंढिये भी धूर्त्त हैं। क्योंकि यह भद्रिक जीवोंको अपने फंदेमें फंसाते हैं ॥

(९) जैसे गोशाला अपने मनमें अपने आपको झूठा जानता था परंतु बाहिर से अपनी रूढी तानता था, तैसे कितनेक ढूंढियेभी अपने मनमें अपने मतको झूठा जानते हैं परंतु अपनी रूढीको नहीं छोड़ते ॥

(१०) जैसे गोशालेके देवगुरु नहीं थे, तैसे ढूंढियोंकेभी देवगुरु नहीं हैं। क्योंकि इनका पंथतो गृहस्थीका निकाला हुआ है ॥

(११) जैसे गोशाला महा अविनीत था,तैसे ढूंढियेभी जैनमत में महा अविनीत हैं। इत्यादि अनेक बातोंसे ढूंढिये गोशाले तुल्य सिद्ध होते हैं। तथा ढूंढिये कितनेक कारणोंसे मुसलमानों सरीखे भी होसक्ते हैं, सो वह लिखते हैं ॥

(१) जैसे मुसलमान नीला तहमत पहनते हैं, तैसे कितनेक ढूंढिये भी काली धोती पहनते हैं ॥

(२) जैसे मुसलमानोंके भक्ष्याभक्ष्य खानेका विवेक नहीं है, तैसे ढूंढियेके भी वासी, संधान (आचार) वगैरह अभक्ष्य वस्तुके भक्षणका विवेक नहीं है ॥

(३) जैसे मुसलमान मूर्त्तिको नहीं मानते हैं, तैसे ढूंढियेभी जिनप्रतिमाको नहीं मानते हैं ॥

(४) जैसे मुसलमान पैरोंतक धोती करते हैं, तैसे ढूंढिये भी पैरोंतक धोती (चोलपट्टा) करते हैं ॥

(५) जैसे मुसलमान हाजीको अच्छा मानते हैं, तैसे ढूंढिये भी वंदना करने वालेको 'हाजी' कहते हैं ॥

(६) जैसे मुसलमान लसण डुंगली अर्थात् प्याज कांदा गंढे खाते हैं, तैसे ढूंढिये भी खाते हैं ॥

(७) जैसे मुसलमानोंका चालचलन हिंदुओंसे विपर्यय है, तैसे ढूंढियोंका चालचलन भी जैनमुनियों से तथा जैनशास्त्रों से विपरीत है ॥

(८) जैसे मुसलमान सर्व जातिके घरका खा लेते हैं, तैसे ढूंढिये भी कोली, भारवाड़, छींबे, नाई, कुम्हार वगैरह सर्व वर्णका खालेते हैं ॥

इत्यादि बहुत बोलों करके ढूंढिये मुसलमानोंके समान सिद्ध होते हैं। और ढूंढियेश्रावक तो स्त्रीके ऋतुके दिन न पालनेसे उन से भी निषिद्ध सिद्ध होते हैं* ॥ ॥ इति ॥

(४३) मुंहपर मुहपत्ती बंधी रखनी सो कुलिंग है इसबाबत।

४३ में प्रश्नोत्तरमें मुंहपर मुहपत्ती बांध रखनी सिद्ध करने वास्ते जेठेने कितनीक युक्तियां लिखी हैं, परंतु उन्हीं युक्तियोंसे वो झूठा होता है, और मुहपत्ती मुंहको नहीं बांधनी ऐसे होता है। क्योंकि जेठेने इसबाबत मृगाराणीके पुत्र मृगालोढीएको देखने

*ढूंढनियां अर्थात् ढूंढक साध्वीयां—भारजा भी ऋतुके दिन नहीं पालती हैं।

वास्ते श्रीगौतमस्वामी को जानेका दृष्टांत दिया है,तो उस संबंधमें श्रीविपाकसूत्रमें खुलासा पाठ है कि मृगाराणीने श्रीगौतमस्वामी को कहा कि:-

"तुब्भेणं भंते मुहपत्तियाए मुहं बंधह"

अर्थ-तुम हे भगवान्! मुख वस्त्रिका करके मुख बांध लेवो इस पाठसे सिद्ध है कि गौतमस्वामीका मुख मुखवस्त्रिका करके बांधा हुआ नहीं था,इससे विपरीत ढूंढिये मुख बांधते हैं औरवह विरुद्धाचरणके सेवन करने वाले सिद्ध होते हैं।

जेठा लिखताहै "जो गोतमस्वामीने उस वक्तही मुहपत्ती बांधी तो पहिले क्या खुले मुखसे बोलते थे ?" उत्तर-अकलके दुश्मन ढूंढियोमें इतनी भी समझ नहींहै कि उघाडे (खुले) मुखसे बोलतथे एसे हम नहीं कहते हैं, परंतु हम तो मुहपत्ती मुखके आगे हस्तमें रख कर यत्नों से बोलते थे एसे कहते हैं श्रीअंगचूलिया सूत्रमें दीक्षाके समय मुहपत्ती हाथमें देनी कही है यतः-

तओ सूरिहं तदानुणएहिं पिट्टोवरि कूपरि विंट्टिएहिं रयहरणं ठाविता वामकरानामियाए मुहपत्तिलवंधरित्तु ॥

अर्थ-तब आचार्यकी आज्ञाके होये हुए कूणी ऊपर रजोहरण रखे, रजो हरण की दशीयां दक्षिण दिशी (सज्जे पासे) रखे, और वामें हाथमें अनामिका अंगुली ऊपर लाके मुहपत्ती धारण करे।

पूर्वोक्त सूत्रमें सूत्रकारने मुहपत्ती हाथमें रखनी कहीहै, परंतु मुंहको बांधनी नहीं कही है, ढूंढिये मुंहपत्ती मुंह को बांधते हैं

परंतु "लद्ध सुत्ता गहिय सुत्ता" ऐसे नहीं कहा है तथा श्री व्यवहारसूत्रके दशमें उद्देशेमें कहाहै यतः-

तिवास परियागस्स निग्गंथस्स कप्पइ आयारकप्पे नामंअज्झयणे उद्दिसित्तएवा चउवास परियागस्स निग्गंथस्स कप्पति सूयगडे नामं अंगे उद्दिसित्तए पंचवासपरियागस्स समणस्स कप्पति दसाकप्पववहारा नामज्झयणे उद्दिसित्तए अट्ठवास परियागस्स समणस्स कप्पति ठाणसमवाए नामं अंगे उद्दिसित्तए दसवास परियागस्स कप्पति विवाहेनामं अंगे उद्दिसित्तए एक्कारस वास परियागस्स कप्पति खुड्डियाविमाणपविभत्ति मह्ल्लिया विमाणपविभत्ति अंगचूलिया वग्गचूलिया विवाहचूलिया नामं उद्दिसित्तए बारसवास परियागस्स कप्पति अरुणोववाए वरुणोववाए गरुलोववाए धरणोववाए वेसमणोववाए वेलंधरोववाए अज्झयणे उद्दिसित्तए तेरसवास परियाए कप्पति उट्ठाणसुए समुट्ठाणसुए देविंदोववाए नागपरियावलिया नामं अज्झयणे

उद्दिसित्तए चउदसवास० कप्पति सुवण्ण भा-
वणा नामं अभ्भयणं उद्दिसित्तए पन्नरसवास०
कप्पति चारणभावणा नामं अभ्भयणं उद्दिसि-
त्तए सोलसवास० कप्पति तेयणिसग्गं नामं
अभ्भयणं उद्दिसित्तए सत्तरसवास० कप्पति
आसीविस नामं अभ्भयणं उद्दिसित्तए अट्ठारस
वास० कप्पति दिट्ठिविसभावणानामं अभ्भयणं
उद्दिसित्तए एगुण वीसइवास परियागस्स
कप्पति दिट्ठिवाए नाम अंगे उद्दिसित्तए वीस
वास परियाए समणे निग्गंथे सव्वसुत्ताण
वाइ भवति ॥

अर्थ–तीन वर्षकी दीक्षापर्यायवाले साधुको आचारप्रकल्प अर्थात् आचारांगसूत्र पढ़ना कल्पे है, चारवर्षकी दीक्षा वालेको श्रीसूयगडांग सूत्र पढ़ना कल्पे है, पांच वर्षके दीक्षितको दशा कल्प तथा व्यवहार अध्ययन पढ़नेकल्पे हैं, आठ वर्षकी पर्यायवालेको ठाणांग समवायांग पढ़ना कल्पे है, दशवर्षकी पर्यायवालेको श्रीभगवतीसूत्र पढ़ना कल्पे है, इग्यारह वर्षकी पर्यायवाला साधु खुड्डिया विमान प्रविभक्ति, महल्लिया विमानप्रविभक्ति, अंगचूलिया, वग्गचूलिया और विवाहचूलिया पढे; बारह वर्षकी पर्यायवाला अरुणोपपात, वरुणोपपात, गरुडोपपात, धरणोपपात, वैश्रमणोपपात और वेलंधरोपपात पढे, तेरांवर्षकीपर्याय वाला; उवट्ठाणश्रुत समुट्ठाणश्रुत देवेंद्रोपपातऔरनागपरियावलिया

अध्ययन पढे चौदह वर्षकी पर्यायवाला सुवर्णभावना अध्ययन पढे, पंदरह वर्षकी पर्यायवाला चारणभावना अध्ययन पढे, सोलह वर्षकी पर्यायवाला तेयनिसग्ग अध्ययन पढे, सतरह वर्षकीपर्यायवाला आशीविष अध्ययन पढे, अठारह वर्षकी पर्यायवाला दृष्टिविष भावना अध्ययन पढे, उन्नीस वर्षकी पर्याय वाला दृष्टिवाद पढे, और वीस वर्षकी पर्यायवाला सर्व सूत्रोंका वादी होवे ॥

मूढमति ढूंढिये कहते हैं कि श्रावक सूत्र पढे तो उन श्रावकोंके चारित्रकी पर्याय कितने कितने वर्षकीहैसो कहो ? अरे मूढमतियो ! इतनाभी विचार नही करते हो कि सूत्रमें साधुकोभी तीनवर्ष दीक्षा पर्याय पीछे आचारांग पढना कल्पे ऐसे खुलासा कहाहै तो श्रावक सर्वथाही न पढे ऐसा प्रत्यक्ष सिद्ध होता है ॥

श्रीप्रश्नव्याकरण सूत्रके दूसरे संवरद्वारमें कहा है कि—

तं सच्चं भगवंत तित्थगर सुभासियं दसविहं चउदस पुव्वीहिं पाहुडत्थवेइयं महरिसि णाय समयप्प दिन्नं देविंद नरिंद भासियत्थं।

भावार्थ यह है कि भगवंत वीतरागने साधु सत्य वचन जाने और बोले इसवास्ते सिद्धांत उनको दिये,और देवेंद्र तथा नरेंद्र को सिद्धांतका अर्थ सुनके सत्य वचन बोले इसवास्ते अर्थ दिया इस पाठमेंभी खुलासा साधुको सूत्रपढना और श्रावकको अर्थसुनना ऐसे भगवंतने कहाहै जेठा लिखताहै कि "श्रावक सूत्र वांचे तो अनंत संसारी होवे ऐसा पाठ किस सूत्रमें है ?" उत्तर— श्रीदशवैकालिक सूत्रके षटजीवनिका नामा चौथे अध्ययन तक श्रावक पढे; आगे नहीं; ऐसे श्री आवश्यकसूत्र में कहाहै;इसके उपरांत आचारांगादि

सूत्रोंके पढ़नेकी आज्ञा भगवंतने नहीं दी है, तोभी जो श्रावक पढ़तेहैं वे भगवंतकी आज्ञाका भंग करते हैं, और आज्ञा भंग करनेवाला यावत् अनंत संसारी होवे ऐसे सूत्रोंमें बहुत ठिकाने कहा है, और ढूंढिये भी इस बातको मान्य करते हैं;

जेठा लिखताहै कि "श्रीउत्तराध्ययनसूत्रमें श्रावकको 'कोविद' , कहा है,तो सूत्र पढे. विना'कोविद'कैसे कहा जावे ? "

उत्तर-'कोविद' का अर्थ 'चतुर-समझवाला' ऐसा होता है तो श्रावक जिनप्रवचन में चतुर होता है, परंतु इससे कुछ सूत्र पढे हुए नहीं सिद्ध होते हैं जेकर सूत्र पढे होवें तो " अधित" क्यों नहीं कहा ? जेठा मंदमति लिखता है कि "श्रीभगवती सूत्रमें केवली प्रमुख दशके समीप केवली प्ररूप्या धर्म सुनके केवलज्ञान प्राप्त करे उनको 'सुच्चा केवली' केवली कहीये ऐसे कहा है उन दश बोलोंमें श्रावक श्राविका भी कहे हैं तोउनके मुखसे केवली प्ररूप्या धर्म सुने सो सिद्धांत या अन्य कुछहोगा?इसवास्ते सिद्धांत पढनेकी आज्ञासबको मालूमहोती है"उत्तर-सिद्धांत वांचके सुनाना उसका नामही फकत केवली प्ररूप्या धर्म नहीं है परंतु जो भावार्थ केवली भगवंतने प्ररूप्या है सो भावार्थ कहना उसका नाम भी केवली प्ररूप्या धर्मही कहलाता है इसवास्ते जेठेकी करी कल्पना असत्य है तथा श्रीनिशीथ सूत्र में कहा है कि-

से भिक्खु अणउत्थियंवा गारत्थियंवा वाएइ वायंतंवा साइज्जइ तस्सणं चउमासियं ॥

अर्थ-जो कोई साधु अन्य तीर्थि को वांचना देवे,तथा गृहस्थी को वांचना देवे अथवा वांचना देतां साहाय्य देवे,उसको चौमासी प्रायश्चित आवे ॥

इस बाबत जेठा लिखता है कि इस पाठमें अन्य तीर्थी तथा अन्य तीर्थीके गृहस्थ का निषेध है, परंतु वो मूर्ख इतना भी नहीं समझा है कि अन्य तीर्थीके गृहस्थ तो अन्य तीर्थीमें आगये तो फेर उसके कहने का क्या प्रयोजन? इसवास्ते गृहस्थ शब्दसे इस पाठमें श्रावकही समझने ॥

जेकरश्रावक सूत्रपढ़ते होवें तो श्रीठाणांग सूत्रके तीसरे ठाणेमें साधुके तथा श्रावकके तीन तीन मनोरथ कहे हैं, उनमें साधु श्रुत पढ़नेका मनोरथ करे ऐसे लिखा है, श्रावकके श्रुतपढ़नेको मनोरथ नहीं लिखा है, अब विचारना चाहिये कि श्रावक सूत्र पढ़ते होवें तो मनोरथ क्यों न करें? सो सूत्रपाठ यह है,-यतः-

तिहिं ठाणेहिं समणे निग्गंथे महाणिज्जरे महापज्जवसाणे भवइ कयाणं अहं अप्पंवा बहुं वा सुअं अहिज्जिस्सामि कयाणं अहं एकल्लविहारं पडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरिस्सामि कयाणं अहं अपच्छिममारणंतियं संलेहणा झूसणा झूसिए भत्तपाण पडियाइक्खिए पाओवगमं कालमणवकंखमाणे विहरिस्सामि एवं समणसा सवयसा सकायसा पडिजागरमाणे निग्गंथे महाणिज्जरे पज्जवसाणे भवइ ॥

अर्थ—तीनस्थानके श्रमणनिर्ग्रंथ महानिर्जरा और महापर्यवसान

करे (वे तीन स्थान कहते हैं) कब मैं अल्प (थोड़ा) और बहुत श्रुत सिद्धांतपढूंगा? १, कब मैं एकलविहारी प्रतिमा अंगीकार करके विचरूंगा?२,और कब मैं अंतिममारणांतिक संलेषणा जो तप उस का सेवन करके रुक्षहोकर भातपाणीका पच्चक्खाण करके पादोपगम अनशन करके मृत्युकी वांच्छा नहीं करताहुआ विचरूंगा? ३,इस तरह साधु मन वचन काया तीनों करण करके प्रतिजागरण करता हुआ महा निर्जरा पर्यवसान करे ॥

अब श्रावक के तीन मनोरथों का पाठ कहते हैं ॥

तिहिं ठाणेहिं समणोवासए महाणिज्जरे महापज्जवसाणे भवइ तंजहा कयाणं अहं अप्पंवा बहुंवा परिग्गहं चइस्सामि कयाणं अहं मुंडेभवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइस्सामि कयाणं अहं अपच्छिममारणंतियं संलेहणा झूसिय भत्तपाणपडिया इक्खिए पाओवगमं कालमणा वक्कंखेमाणे विहरिस्सामि एवं समणसा सवयसा सकायसा पडिजागर माणे समनोवासए महाणिज्जरे महापज्जव साणे भवइ ॥

अर्थ–तीन स्थान के श्रावक महा निर्जरा महा पर्यवसान करें तद्यथा कब मैं धन धान्यादिक नव प्रकार का परिग्रह थोड़ा और बहुता त्यागन करूगा? १, कब मैं मुंड होकर आगार जो गृहवास

उसको त्यागके अणगारवास साधुपणा अंगीकार करूंगा? २, तीसरी संलेषणाका मनोरथ पूर्ववत् जानना।

इससेभी ऐसे ही सिद्ध होता है कि श्रावक सूत्र वांचे नहीं इत्यादि अनेक दृष्टांतों से खुलासा सिद्ध होता है कि मुनि सिद्धांत पढें और मुनियों को ही पढावें, श्रावकों को तो आवश्यक, दशवैकालिकके चार अध्ययन और प्रकरणादि अनेक ग्रंथ पढने, परंतु श्रावकको सिद्धांत पढनेकी भगवंतने आज्ञा नहीं दी है ॥ इति ॥

(४६) ढूंढिये हिंसा धर्मी हैं इस बाबत।

इस ग्रंथको पूर्ण करते हुए मालूम होता हैकि जेठे ढूंढकका बनाया समकितसार नामा ग्रंथ गोंडल (सूबा काठीयावाड) वाले कोठारी नेमचंद हीराचंदने छपवाया है उसमें आदिसे अंततक जैन शास्त्रानुसार और जिनाज्ञा मूजिब वर्त्तनेवाले परंपरागत जैन मुनि तथा श्रावकोंको (हिंसा धर्मी) ऐसा उपनाम दियाहै औरआप दया धर्मीबनगये हैं, परंतु शास्त्रानुसारदेखनेसे तथा इनढूंढीयोंका आचार व्यवहार, रीतिभांति और चालचलन देखनेसे खुलासा मालूमहोता है कि यह ढूंढीयेही हिंसाधर्मी हैं और दयाका यथार्थ स्वरूप नहीं समझते हैं ॥

सामान्यदृष्टिसे भी विचार करें तो जैसे गोशाले जमालि प्रमुख कितनेक निन्हवोंने तथा कितनेक अभव्य जीवोंने जितनी स्वरूपदया पाली है। उतनी तो किसी ढूंढकसे भी नहीं पल सक्ती है; फकत मुंह से दया दया पुकारना ही जानते हैं, और जितनी यह स्वरूपदया पालते हैं उतनी भी इनको निन्हवोंकी तरह जिनाज्ञाके विराधक होने से हिंसाका ही फल देनेवाली है।

निन्हवों ने तो भगवंतका एक एकही वचन उत्थाप्या है और उन को शास्त्रकारने मिथ्यादृष्टि कहा है यत :–

पयमक्खरंपि एक्कंपि जो न रोएइ सुत्त-निद्दिठं। सेसं रोयंतो विहु मिच्छद्दिठी जमालिव्व॥ १ ॥

मूढ़मति ढूंढियोंने तो भगवंतके अनेक वचन उत्थापे ह, सूत्र विराधे हैं,सूत्रपाठ फेरदिये हैं, सूत्रपाठ लोपे हैं,विपरीत अर्थ लिखे हें, और विपरीत ही करते हैं; इसवास्ते यह तो सर्व निन्हवोंमें शिरोमणि भूत हैं ॥

अब ढूंढिये दयाधर्मी बनते हैं परंतु वे कैसी दया पालते हैं, गरज दयाका नाम लेकर किस किस तरहकी हिंसा करते हैं, सो दिखानेवास्ते कितनेंक दृष्टांत लिखके वे हिंसाधर्मी हैं, एसे सत्यासत्य के निर्णय करने वाले सुज्ञपुरुषोंके समक्ष मालूम करते हैं ॥

(१) सूत्रोंमें उष्णपाणीका स्यालेमें तथा चौमासेमें जुदाजुदा काल कहा है,उस काल के उपरांत उष्ण पाणीमेंभी सचित्तपणेका संभव है,तो भी ढूंढीये कालके प्रमाण विना पाणीपाते हैं इसवास्ते काल उल्लंघन करा पाणी कच्चाही समझना * ॥

(२) रात्रिको चुल्हे पर धरा पाणी प्रातः को लेकर पीते हैं, जो पाणी रात्रि को चुल्हा खुला न रखने वास्ते धरने में आता है (प्रायः यह रिवाजगुजरात मारवाड़ काठीयावाड़ में है)जोकि गरम तो क्या परंतु कवोष्ण अर्थात् थोडासा गरम होना भी असंभव है इस वास्ते वो पाणी भी कच्चा ही समझना ॥

---

* ढूंढीये धोवणका पाणी शास्त्रोक्त मर्यादारहित कच्चाही पीते हैं ।

(३) कुम्हार के घर से मिट्टी सहित पाणी लाकर पीते हैं जिसमें मिट्टी भी सचित्त और पाणी भी सचित्त होनेसे अचित्त तो क्या होना है परंतु जेकर अधिक समय जैसेका वैसा पड़ा रहे तो उसमें बेइंद्रि जीवकी उत्पत्ति होने का संभव है।

(४) पाथीयां थापनेका पाणी लाकर पीते हैं जोकि अचित्त तो नहीं होता है परंतु उसमें बेइंद्रि जीवकी उत्पत्ति हुई दृष्टि गोचर होती है।

(५) स्त्रियोंके कंचुकी (चोली) वगैरह कपड़ोंका धोवण लाकर पीते हैं जिसमें प्रायः जूंवां अथवा मरी हुई जूवांके कलेवर होने का संभव है ऐसा पाणी पीनेसे ही कई रिखों को जलोदर होने का समाचार सुणने में आया है। *

(६) पूर्वोक्त पाणीमें फकत एकेंद्रि का ही भक्षण नहीं है, परंतु बेइंद्रिका भी भक्षण है; क्योंकि ऐसे पाणीमें प्रायः पूरे निकलते हैं तथापि ढूंढियोंको इस बातका कुछभी विचार नहीं है। देखो इनका दया धर्म !!!†

(७) गत दिनकी अथवा रात्रिकी रखी अर्थात् वासी, रोटी, दाल, खीचड़ी वगैरह लातेहैं और खाते हैं। शास्त्रकारोंने उसमें बेइंद्रि जीवोंकी उत्पत्ति कही है॥

(८) मर्यादा उपरांतका सड़ा हुआ आचार लाकर खाते हैं, उसमें भी बेइंद्रि जीवोंकी उत्पत्ति कही है॥

---

*झूठे वर्त्तनों का धोवण, हलवाईकी कडाहोंका पाणी जिसमेंसे कई दफा कुत्ते भी पीजाते हैं जिसमें मरी हुई मक्खियां भी होतीहैं, सुनारोंके कुंडों का पाणी जिसमें गहने आदि धोये जाते हैं लुहारों के अरकनिकालनेका पाणी इत्यादि अनेक प्रकारका गंदा पाणी भी लेते हैं!

† झूठेवर्त्तनों के धोवण में अन्नादिकी लाग होने से तथा बाटी आदिके पाणी में हाथआदिके मैल आदि अशुचि होनेसे सन्मूर्च्छिम पंचेंद्रि की भी खूब दया पलती है।

(९) विदल अर्थात् कच्चीछास, कच्चादूध, तथा कच्चीदहीमें कठोल *खाते हैं, जिसको शास्त्रकारने अभक्ष्य कहा है और उसमें बेइंद्रि जीवकी उत्पत्ति कही है । ढूंढकोंको तो विदलका स्वाद अधिक आताहै क्योंकि कितनेक तो फकत मुफतकी खीचडी और छास वगैरह खानेके लोभसेही प्रायः ऋषजी बनते हैं, परंतु इससे अपने महाव्रतोंका भंग होता है उसका विचार नहीं करते हैं।

(१०) पूर्वोक्त बोलोंमें दर्शाये मूजिब ढूंढीये बेइंद्रि जीवोंका भक्षण करते हैं देखीये इनके दयाधर्म की खूबी !

(११) सूत्रोंमें बाईस अभक्ष्य खाने वर्जे हैं तो भी ढूंढियेसाधु तथा श्रावक प्रायः सर्व खाते हैं श्रीअंगचूलिया सूत्रके मूलपाठमें कहा है यतः—

एवं खलु जंबु महाणुभावेहिं सूरिवरेहिं मिच्छत्तकुलाओ उस्सग्गोववाएणं पडिबोहिउणा जिणमए ठाविया बत्तीस अणंतकायभक्खणाओ वारिया महु मज्ज मंसाई बावीस अभक्खणाओ णिसेहिया ॥

अर्थ—ऐसे निश्चय हे जंबु ! महानुभाव प्रधानाचार्योंने मिथ्यात्वीयोंके कुलसे उत्सर्गापवाद करके प्रतिबोधके जिनमतमें स्थापन करे, बतीस अनंतकाय खानेसे हटाये, और सहत, शराब मांस वगैरह बाईस अभक्ष्य खानेका निषेध किया, शास्त्रकारोंने

---

* जिस अनाजकी दो फाड होजावें और जिसको पीडनेसे तेल न निकले, ऐसा जो कठोल; माह, मूगी, मोठ, चने, इरवें, मैथे, मसर, हरर आदि जिसका अनाज, उसको 'विदल' संज्ञाहै।

बाईस अभक्ष्यमें एकेंद्रि, बेइंद्रि तेइंद्रि और निगोदिये जीवोंकी उत्पत्तिकही है तोभी ढूंढीये इनको भक्षण करते हैं।

(१२) ढूंढीये अपने शरीरसे अथवा वस्त्रमेंसे निकली जूओंको अपने पहने हुए वस्त्रमेंही रखते हैं जिनका नाश शरीरकी दाबसे प्रायःतत्कालही होजाता है यहभी दयाका प्रत्यक्ष नमूनाहै!!

(१३) ढूंढीये साधु साध्वी सदा मुंहके मुखपाटीबांधीरखते हैं उसमें वारंवार बोलनेसे थूकके स्पर्शसे सन्मूर्च्छिम जीवकी उत्पत्ति होती है और निगोदिये जीवोंकी उत्पत्ति भी शास्त्रकारोंने कही है निर्विवेकी ढूंढीये इसबातको समझते हैं तोभी अपनी विपरीत रूढिका त्यागनहीं करते हैं इससे वे सन्मूर्च्छिम जीवकीहिंसा करने वाले निश्चय होते हैं॥

(१४) कितनेक ढूंढीये जंगल जाते हैं तब अशुचिको राखमें मिला देते हैं जिसमें चूर्णिये जीवोंकी हिंसा करते हैं ऐसे जाननेमें आया है यही इनके दया धर्मकी प्रशंसाके कारण मालूम होते हैं।

(१५) ढूंढीये जब गोचरी जाते हैं तब कितनीक जगह के श्रावक उनको चौकेसे दूर खड़े रखते हैं मालूम होताहै कि चौकेमें आनेसे वे लोक भ्रष्ट होना मानते होंगे,* दूर खड़ा होकर रिखजी सूझते हो ? ऐसे पूछकर जो देवे सो ले लेता है इससे मालूम हो है कि ढूंढीये असूझता आहार ले आते हैं

---

* बेशक उन लोगोंकी बिलकुल नादानी मालूम होती है जो इन को अपने चौके में आने देते हैं क्योंकि प्रथम तो इन ढूंढीयोंमें प्रायः जाति भातिका कुछ भी परहेज नही है, नाई, कुम्हार, छीपे, भीवर वगैरह हरेक जातिको साधु बना लेते हैं, दूसरे रात्रिमें पानी न होनेसे गुदा न धोते हों तो अशुचि है।

(१६) ढूंढीये शहत खा लेते हैं, परंतु शास्त्रकारने उसमें तद्वर्ण वाले सन्मूर्च्छिम जीवों की उत्पति कही है।

(१७) ढूंढीये मक्खण खाते हैं उसमें भी शास्त्रकार ने तद्वर्णो जीवों की उत्पति कही है।

(१८) ढूंढीये लसण की चटनी भावनगर आदि शहरोंमें दुकान दुकानसे लेते हैं देखो इनके दया धर्मकी प्रशंसा? इत्यादि अनेक कार्य्योंमें ढूंढीये प्रत्यक्ष हिंसा करते मालूम होतेहै इसवास्ते दयाधर्मी ऐसा नाम धराना बिलकुल झूठा है थोडे. ही दृष्टांतोंसे बुद्धिमान् और निष्पक्षपाती न्यायवान् पुरुष समझ जावेंगे और ढूंढीयोंके कुफंदे को त्याग देवेंगे ऐसे समझकर इसविषयको संपूर्ण करा है ॥ इति ॥

ग्रंथकी पूर्णाहुति ।

शार्दूल विक्रीडित वृत्तम्

स्वांतं ध्वांतमयं मुखं विषमयं दृग् धूमधारामयी
तेषांयैर्ननता स्तुता न भगवन्मूर्त्तिर्नवाप्रेक्षिता
देवैश्चारणपुंगवैः सहृदयै रानंदितैर्वंदिता ।
येत्वेतां समुपासते कृतधियस्तेषां पवित्रंजनुः॥१

भावार्थ–सम्यगदृष्टि देवताओंने और जंघाचारण विद्याचारणादि मुनि पुंगवोंने शुद्ध हृदय और आनंदकरके वंदना करी है जिसको, ऐसी श्रीजिनेश्वर भगवंतकी मूर्त्ति को जिन्होंने नमस्कार नहीं करा है, उनका स्वांत जो हृदय सो अंधकारमय है, जिन्होंने उसकी स्तुति नहीं करी है, उनका मुख विषमय है, और जिन्होंने

भगवंतकी मूर्त्तिका दर्शन नहीं कराहै, उनके नेत्र धूंयेंकी शिखा समान है; अर्थात् जिनप्रतिमासे विमुख रहने वालोंके हृदय, मुख और नेत्र निरर्थकहैं; और जो बुद्धिमान् भगवंतकी प्रतिमाकी उपासनाअर्थात् भक्ति पूजा प्रमुख करतेहैं उनका मनुष्यजन्म पवित्रअर्थात्सफलहै ॥

इस पूर्वोक्त काव्यके सारको स्वहृदयमें अंकित करके और इस ग्रंथको आद्यंत पर्यंत एकाग्रचित्तसे पढ़कर ढूंढकमती अथवा जो कोई शुद्धमार्ग गवेशक भव्यप्राणी सम्यक् प्रकारसे निष्पक्षपात दृष्टिसे विचार करेंगे तो उनको भ्रांतिसे रहित जैनमार्ग जो संवेग पक्षमें निर्मलपणे प्रवर्त्तमानहै सो सत्य और ढूंढक वगैरह जिनाज्ञा से विपरीतमत असत्य है ऐसा निश्चय हो जावेगा; और ग्रन्थ बनानेका हमारा प्रयत्न भी तबही साफल्यताको प्राप्त होगा ॥

शुद्धमार्ग गवेशक और सम्यक्त्वाभिलाषी प्राणियोंका मुख्य लक्षण यही है कि शुद्ध देव गुरु और धर्मको पिछानके उनका अंगीकार करना और अशुद्ध देव गुरु धर्मका त्याग करना, परंतु चित्तमें दंभ रखके अपना कक्का खरा मान बैठके सत्यासत्यका विचार नही करना, अथवा विचार करनेसे सत्यकी पिछान होनेसे अपना ग्रहण किया मार्ग असत्य मालूम होनेसे भी उसको नहीं छोड़ना, और सत्यमार्गको ग्रहण नही करना, यह लक्षण सम्यक्त्व प्राप्तिकी उत्कंठावाले जीवोंका नहीं है, और जो ऐसे होवे, तो हमारा यह प्रयत्नभी निष्फल गिनाजावे इसवास्ते प्रत्येक भव्य प्राणीको हठ छोड़के सत्यमार्गके धारण करनेमें उद्यत होना चाहिये ॥

यह ग्रन्थ हमने फकत शुद्धबुद्धिसे सम्यक्दृष्टिजीवोंके सत्यासत्य के निर्णय वास्ते रचा है, हमको कोई पक्षपात नहीं है, और किसी पर द्वेषबुद्धि भी नहीं है इसवास्ते समस्त भव्यजीवों

ने यह ग्रंथ निष्पक्षपणे लक्षमें लेकर इसका सदुपयोग करना, जिस से वांचनेवालेकी और रचना करने वालेकी धारणा साफल्यताको प्राप्त होवे ॥ तथास्तु ॥

इति न्यायांभोनिधितपगच्छाचार्य श्रीमद्विजयानंदसूरि (आत्मारामजी) विरचितः सम्यक्त्वशल्योद्धार ग्रंथः समाप्तः ॥

ओम्

ढूंढक पचविशी।

श्रीजिनप्रतिमा स्युं नहीं रंग,तेनो कवु न कीजें संग; ए आंकणी.

सरस्वती देवी प्रणमी कहेस्युं,जिनप्रतिमा अधिकार; नवी माने तस वदन चपेटा, माने तस शणगार। श्री जिन० १ केवल नाणी नहिं चउनाणी, एणे समे भरत मोझार; जिनप्रतिमा ,जिन प्रवचन जिननो, ए मोटो आधार। श्री जिन० २। एणे मूढे जिन-प्रतिमा उथापी, कुमति हैया फुट; ते बिना किरिया हाथ न लागे, ते तो थोथा कुट। श्री जिन० ३। जिनप्रतिमा दर्शनथी दंसण, लहीये व्रतनुं मूल; तेहीज मूलकारण उथापे, शुं थयुं ए जगशूल। श्री जिन० ४। अभयकुमारे मुकी प्रतिमा, देखी आर्द्रकुमार; प्रति बुझ्या संजम लइ सीध्या,ते साचो अधिकार। श्रीजिन०५ प्रतिमा आकारे मच्छ निहाली, अवर मच्छ सवी बुझे;समकित पामे जाति स्मरणथी, तस पूरवभव सूझे। श्री जिन० ६। छठे अंगे ज्ञाता सूत्रे द्रौपदिए जिन पूज्या; एवा अक्षर देखे तोपिण,मूढमति नवी बुझ्या। श्री जिन० ७।चारणमुनिए चैत्यज वांद्या,भगवति अंगे रंगे, मरडी अर्थ करे तेणे स्थानक,कुमतितणे प्रसंगे। श्रीजिन०८। भगवतिअंगे श्रीगणधरजी, ब्राह्मीलिपि वंदे;एवा अक्षर देखे तोपिण,कुमति कहो केम निंदे। श्री जिन० ९। चैत्य विना अन्यतीर्थी मुजने, वंदन पूजा निषेधे; सातमें अगे शाह आणंदे, समकित कीधुं शुद्धे। श्रीजिन० १० सुर्याभदेवे वीरजिन आगल, नाटक कीधुं रंगे; समकितद्रष्टी तेह वखाणे, रायपशेणी उपांगे। श्री जिन० ११ समकितद्रष्टी श्रावकनी करणी, जिनवर बींब भरावे; ते तो बारमे देवलोक पहोंचे महानिसीथे लावे। श्री जिन० १२। अष्टापदगिरि उपर भरते, मणी

अथ सुमति प्रकाश

बारहमास ।

कुंडलीछंद–आदि ऋषभजिन देव थी महावीर अरिहंत । जिन-शासन चौवीस जिन पूजो वार अनंत । पूजो वार अनंत संत भव भव सुखकारी। संकट बंधन टूट गए निर्मल समधारी। जिन पडिमा जिन सारषी श्रावकव्रत नु साध, महावीर चौवीसमें ऋषभदेवजीआद

सवैया तेतीसा–चैत चित नु सुधार प्रभु पूजा का विचार समकितका आचार वीतराग जो वखानी है। लखसूतरकी सार ठाम ठामअधिकार वस्तु सतरां प्रकार अष्टद्रव्यसे सुजानी है। देख सूतर उवाइ पाठ अंबड बताई पूजा ऐसी करो भाई ये तो मोक्ष की निशानीहै। जेडे, कुमति हैं धीठ प्रभु मुखड़ा ना दीठ फिरें त्रसते अतीत मारे कुगुरु अज्ञानी है। १।

कुंडलीछंद–कारण विन कारज नहीं कारण कारज दोइ, कारण तज कारज करे मूल गवावे सोइ, मूल गवावे सोई नहीं आवश्यक जाने, खूला फूलों पूज प्रभु ये पाठ बखाने, जो कुमतिनर धीठ सुखों नहीं पाठ उच्चारण, सो रुलदे संसार करे कारज बिन कारण ॥

सवैया–वैसाख विसरो ना भाई प्रीत पूजाकी बनाई पूजा मोक्ष की सगाई सब सूत्रकी सेली है, चंवा मोतिया रवेली कुंगु चंदन घसे ली प्रभु पूजो मनमेली पूजा मोक्षकी सहेली है, वीतरागजो बखानी प्राणी भव्य मन मानी वाणी सूतरमें ठानी पूजे धन सो हथेली है, जैसे मेघमें पपीया पिया पिया बोले जीया छप्पे किरले खुड्डिया पूजा दुष्ट नु दुहेली है। २।

कुंडलीछंद–मानो आज्ञा धर्म जिन आज्ञाधर्मसुमीत, जो आज्ञा हृदये धरे सो सुमति की रीत,सो सुमतिकी रीत नीत उववाई भाषी, श्रावक घणे प्रमाण नगरी चंपा जी दाषी, जिनमंदिर जिनचैत्य घणे विध पूजा ठानो,अर्थ सूत्र नित सुनो धर्म जिन आज्ञा मानो॥

सवैया–देख जेठकी जुदाई पाठ रखदे छिपाई करें कूडकी कमाई राह उलटा बतांवदे, रुलें पापी सो अपार करें खोटा जो आचार वगी धरमकीमार साध श्रावक कहांवदे, झूठे बैनकहे जग सेवकासे लैंदे ठग सठ हठ कठ झग प्रभु मनमें न लांवदे,जैसे रविका प्रकाश नर नारी से हुलास नैन उल्लू के विनाश देख पूजा नस जांवदे ।३।

कुंडलीछंद–छाया जिनतरु बैठके काटे तरु अविनीत,पूजासे हिंसा कहे उलटी पकडे रीत, उलटी पकडे रीत धीठ दुर्गति को जावें,प्रभु मुख से वो चोर अर्थ सूत्र नहीं पावें,जिनपडिमा स्वीकार उपासकदसा बताया,श्रावक देख अनंद बैठके तरु जिम छाया॥

सवैया–हाढ बोलदे हवान नहीं सूतर परमाण करें उलटा ज्ञान पंथ आपना चलांवदे,प्रभु आज्ञा न माने वोह कुलिंग रूप ठाने उत सूतर बखाने मिथ्या दृष्टिको वधांवदे, मुखों कहें हम साध करें ऐसे अपराध बैठे डोबके जहाज पारदधिका न पांवदे,जैसे मिसरी मिठाई मन गधे के ना भाइ प्रभु पूजा की रसाई बिन जनम गवांवदे । ४

कुंडलीछंद–मीतसु आचारंगकी निर्युक्तिका ज्ञान, पूर्ण सतगुरु हम मिले तिमर गए चढभान,तिमर गए चढ भान अर्थ जब पूर्ण पाये, पूजा यात्रा भेद सभी ये अर्थ बताये,दूध बडो रस जगत मैं कुमति ज्वर ना पीत, पीवत वो प्राण न हरे आचारंग सुमीत ॥

सवैया–सुन सावण नकारे जैनसूतरोंसे न्यारे कहे जैनी हम भारे ये पखंड क्या मचाया है। कहें वीरके हुं साध करे सूतरा पराध वीर

प्रतिमा विराध ऐसी दुरदस छाया है। जिन सूतर बनाये एकअखर मिटायें तो नरकगतिपाये पाप सठने बंधाया है। जिना सूतर हटाये पाठ उलटे सुनाये हड़तालसे मिटाये तांका कौन छेड़ाआया है। ५

कुंडलीछंद–देख खुलासापाठ जो सूत्रमहानिसीथ, जिनपडिमा से पूजिये उच्ची पदवी लीध, उच्ची पदवी लीध अच्युतासुर पद पाये, दशवैकालिक देख पाठ क्यों नैन छपाये, साधु उस थां नहीं रहे नारी मूरत लेख, ये अवगुण पडिमा सगुण पाठ खुलासा देख।

सवैया–देख भादरोजी भारी लगी कर्मकी कटारी करें नरक तैयारी खोटे रंगसंग दीन हैं, समकित बन जारी शुद्ध बुद्धगई मारी टेर टरदी न टारी ऐसे जग में मलीन हैं। ऐसे उदय खोटे भाग स्वय देव से त्याग अन्न देव करे राग जिन राज से वो छीन हैं, देखो सठ की सठाई काक कारण उड़ाई हाथे रतनचलाई ऐसे प्रतिमासो हीन है ॥ ६ ॥

कुंडलीछंद–धीर सतगुरु सिमरिये मारग दीयो बताय। ज्ञान करण संशयहरण वंदो ते चित्तलाय। वंदो ते चित्तलाय उत्तराध्य यन अनंदे, निर्युक्तिका पाठ चैत अष्टापद वंदे। चरमशरीरी कथन करे त्रिभुवनस्वामीवीर गौत्तमगिरगढपरचढे सिमरिये गुरुसतधीर ॥

सवैया–अस्सुं पुछ तुं असानुं असी दस्सीये तुसानुं भ्रम भूलियों तु कानुं ऐसे पूजाप्रभु पाइहै। जेडे सुगुरु हैं प्यारे रस टीका का विचारे निरजुक्ति मूल सारे भासचूरण दिखाइहै। देख पंचअंग बानी बीतराग जो वखानी गणधरदेव मानी भव्यजीव मन भाई है। सोध सुगुरुसुजानी गुरु ग्यानकी निशानी बुद्धिविजय बतानी प्रभु पूजा चित्त लाइहै ॥ ७ ॥

कुंडली छंद–ऐसा पाठ वखानिया महाकल्पकीसार। साधु नित

कर वंदना मंदिर जिन स्वीकार। मंदिर जिन स्वीकार आलसी जो ना जावें,तो बेलेका दंड साधु श्रावक से आवे। लखे न सूतरसार जीव तव माने कैसा,कुगुरु न दसदे भेद बखानें पाठ ना ऐसा॥

सवैया—कत्ते कुगुरु कमाई मुखपटी जो बंधाई किसे ग्रंथ न बताई ये कुगुरुकी चलाई है। देखो कुमतिकी फाई भोले जीव ले फसाई रीती धरम गवाई ऐसे नैनके अधाई है। धागा कानमें तनाई रूप दैतका बनाई देख कूकर भुकाई आग्यावीर ना दुहाई है।पूजा हीरानग सार जौरी रखदे सुधार फेंके मूरख गवार सठ पूजा सो न पाई है॥ ८ ॥

कुंडली छंद—देखो नैन निहारके अर्थ सुनो श्रुतिदोय बुद्धि विजय मुनीसजी विजयानद जगजोय। विजयानंदजगजोय पाठ का अर्थ बतावें,ज्ञाताजीमें कहा द्रोपदी पूजा पावें,जिनचैत्यादि पूज स्वर्गमें लीनो लेखो,ये समदिष्टन भई निहार नयन जब देखो॥

सवैया—देख मगर अभिमानी सार धर्मकी न जानी ठहे नावा विना प्राणा दधि कौन पार लावेगा। ऐसे प्रभुकीनिंदाई जब नास-तक आई डूबे आप जो संगाई तुझे कोई न घडावेगा। जैसे जगमें सलारा जब पृथवीमें डारा तब होत भार भारा फेर उडना न पावेगा। दास खुशीमन भाई प्रभु पूजो चितलाई करो खिमत खिमाई ऐसा कारण बचावेगा ९॥

कुंडली छंद—करो सुगुरुका संग जो जानों सूतर सार। भगत करी सुरियाभने पडिमा पूजाधार। पडिमा पूजा धार राय प्रसैनी भाषी, देवसुरासुर इंदचंद प्रभु पूजा साखी। पावो तब समदिष्टि भगत जिन दाढा धरो,सवी देवसे कहा सुगुरुकी संगत करो॥

सवैया-पोष पूजा कर प्यारी चढ़ हाथीकी अंबारी त्याग गधेकी सवारी राम आतमा मिलाइये, देख विजयजी आनंद चढ़े जगतमें चंद तेरे काटे पापफंद मिल सम्यक् सुहाइये, मुनि संतके महंत है अनंत गुणकंत प्रभु आज्ञा सुहंत ऐसे सतगुरु ध्याइये, घटामेघ की वरष मन मोरके हरष स्वान जाने न परष कैसे सतगुरु पाइये।१०

कुंडलीछंद-जानो आवश्यक कहे राय उदायन भाष राणी तस परभावती निजघर मंदिरसाष,निजघर मंदिर साषआपनित पूजाकरदे पुष्पालंकृत धूप दीप नैवेद सुधरदे, ऐसा मरम सूत्र क्यों कुमत ना मानो राय उदायन पाठ कहे आवश्यक जानो ॥

सवैया-महा कुमति महंत हिये जरा बी ना संत करे पाप सो अनंत मुखें दया दया आखदे,दयाका न जाने मरम छोड बैठे जैन धर्म ऐसे करे दुष्ट करम मरम न चाखदे। मुखों पंडित कहावें पाठ छोड छोड जावें अर्थ वाचना न आवे सो अनुक्त बैन आखदे। जैसे चंदकी चढाई चामचिड़ नैन खाई सो चकोर मन भाई पूजा सुगुरु प्रकासदे ॥

कुंडली छंद-कमला केतक भ्रमर जिम सूतर प्रीति आधार। भूंड कुमति जाने नहीं कमल सूत्रकी सार। कमलसूत्रकी सार चार निखेप वखाने,ये अनुयोग दुवार नय सागर नही जाने,भत्त पइन्ना पाठ जैनमंदिर कर अमला,श्रावक जो बनवायें भ्रमरसे जैसे कमला

सवैया- फागण जो फूली वारी मिलीबाणी सुधा प्यारी फली सम्यक् उजारी ज्ञान बन सरकाईये, नैन जैनके जगावो संग सुगुरु का चावो वाना मर्म युत पावो नैन नींद की खुलाईये,साखी सूतर की दाखी कछु निंदिया न भाखी जेडे जैन अभिलाषी साखी भाखी

न भूलाइये। करो सुगुरु संगाइ रूप शिक्षा वरताई कुछ डरो न डराइ दास खुशी मन भाईये ॥ १२ ॥

कुंडलीछंद–दरवदरव सब जग दिसे भाव दिसे नहीं सोय विना दरव थी ज्ञान कब ज्ञान दरव थी होय,ज्ञान दरव थी होय दरव मुनि धार चरित्तर, दरव सामायक ठवें दरव पूजा इम मितर, अंत भाव जिन केवली जानें मन की सरव, भावचिन्ह कछु नहिं दिसे दिसे जगत सब दरव ॥

सवैया–मास आदित्य आनंद ऐसे संवलका छंद भूत वन्ही ग्रह चंद कृष्ण त्रोदशी वैशाखकी। आदि अंतसे विचार सवी दोष वमडार भव्य सूतर आधार वानी सुधारस चाषकी। सुमत बन सरकी कुमतमत हरकी युगत ज्ञान करकी भली है शुभ भाषकी। छोड झूठते जंजाल धरसूत्रमें ख्याल शहर गुजरांजोवाल दासखुशी कहे लाषकी

कुंडलीछंद–देख कुमति मन खिजो मत करो न रोस गुमान जैसासूत्रमें कहा तैसा दियो बखान, तैसा दिया बखान जास नर मरम न भासे, करे सुगुरु का संग नैन जग संसै नासै। पक्ष पात तज देखिये खुशी सूतर की रेख,जिनआज्ञा धर भालपर खिजो न कुमति देख ॥

सोरठा–रामबखशकेसाथ शेरू जाती बानिया लुदहानेवास बारमास सठ भाषियो ॥ उलट ज्ञान की रीत जब हम वो अवणे सुनी जो सूत्रकी रीत तब हम भाषा ये करी ॥

इतिश्रीसुमतिप्रकाशबारहमास सम्पूर्णम् शुभमस्तु ॥

विक्रयार्थ पुस्तकें।

श्री मन्महामुनिराज श्रीमद्विजयानंद सूरि(श्रीआत्मारामजी) विरचित जैनमत वृक्ष।	कीमत	।=)
श्रीजैनगायनसंग्रह।	,,	≠)
श्रीसनात्र पूजा	,,	=)
गप्प दीपिका समीर	,,	॥)
सम्यक्त्वशल्योद्धार गुजराती भाषा	,,	१।)
ढूंढकमत समीक्षा	,,	॥)
जैनबालोपदेश-बहुत उपयोगी	,,	)॥
पैंतीस का थोकड़ा	,,	=)
जैनस्तोत्र रत्नाकर-इसमें भक्तामर, कल्याणमंदिर, शांतियें एकीभाव, विषापहार, जिनपंजर, मंत्राधिराज आदि १६ स्तोत्र हैं मुंबईका छपा हुआ	मूल्य	।)
गुलदस्तह आत्मप्रकाश उर्दू	,,	≠)
जैन इतिहास उर्दूमें	,,	१)
रात्री भोजन निषेध उर्दू	,,	)॥
गणधर श्रीगौतमस्वामीकी रंगीनमूर्त्ति-दर्शनकेलायक है	,,	।=)
श्री मन्महामुनिराज श्रीआत्मारामजी की रंगीन मूर्त्ति	,,	≠)।
श्रीमुनि अमरविजय और श्रीमुनिबालविजयकी रंगीन मूर्त्ति	,,	≠)।
श्रीमुनि वल्लभविजयजी की फोटो अति मनोहर	,,	।॥)
मासिक पत्र श्रीआत्मानंद जैनपत्रिका-वर्षभरका	,,	१।)

मिलने का पताः-पंजाब संस्कृत बुकडिपो, लाहौर।